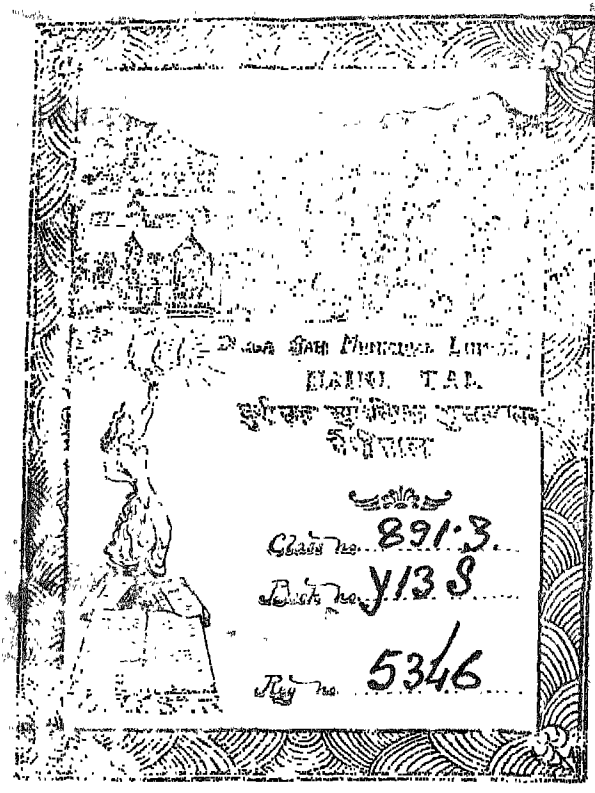

Durga Sah Municipal Library
NAINI TAL
दुर्गासाह म्युनिसिपल लाइब्रेरी
नैनीताल
Class no. 891.3
Book no. Y13S
Reg no. 5346

सुन्दर और असुन्दर

सभी सुन्दरता का वरण करना चाहते है और उसके लिए प्रयत्नशील रहते है।

पर सुन्दरता की पहचान सभीको नही होती। प्रायः लोग बाहरी रूप-रग, सज्जा-भूषा को ही सुन्दरता समझ बैठते है। वे अन्य गुणो को कुछ गिनते ही नही। किन्तु जब यथार्थ मे इन रूपों के दर्शन होते है तो उनकी आख खुलती है और तब वे सुन्दर और असुन्दर को ठीक-ठीक पहचान पाते है। इस उपन्यास के प्रकाश और किशोर इसी भ्रम के शिकार है।

यह उपन्यास हमारे जीवन के कुछेक प्रश्नो को लेकर चला है। लेखक का उद्देश्य है—हमारे जीवन में फैली हुई भ्रान्त धारणाओ को निर्मूल करके नई पीढी को वास्तविक प्रेम, स्नेह, उदारता, सहानुभूति एव त्याग की ओर प्रवृत्त करना। हमारा विश्वास है, पाठक इसे मनोरजक एव उपयोगी पाएगे।

यज्ञदत्त शर्मा ने जीवन के अनेकानेक स्थलो पर लिखा है और खूब लिखा है। उनके दर्जनो उपन्यास इसके साक्षी है। 'सुन्दर और असुन्दर' उनका नवीनतम रोचक उपन्यास है।

सुन्दर और असुन्दर

यज्ञदत्त शर्मा

कुमाऊँ यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी
नैनीताल

प्रथम संस्करण : नवम्बर १९६१

प्रकाशक :
राजपाल एण्ड सन्ज़
पोस्ट बाक्स १०६१, दिल्ली

●

मूल्य
तीन रुपये

कार्यालय व प्रेस :
जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली

●

बिक्री-केन्द्र :
कश्मीरी गेट, दिल्ली

हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली में मुद्रित

१

आज चांदनीचौक की सड़क पर कुछ विचित्र चहल-पहल थी। बड़ी धूमधाम के साथ बारातें निकल रही थीं। कुछ बारातें फतहपुरी की ओर से लालकिले की दिशा में आ रही थीं और कुछ लालकिले की दिशा से फतहपुरी की ओर जा रही थीं।

प्रकाश और किशोर संगीत-समारोह से लौट रहे थे। दोनों आगे बढ़कर दरीबाकलां के सम्मुख पहुंचे तो वहां भी यही दृश्य देखने को मिला। कुछ बारातें चांदनीचौक से दरीबे में जा रही थीं और कुछ दरीबे से चांदनीचौक की ओर आ रही थीं।

बारातों की इस धूमधाम के बीच से होकर दोनों मित्र धीरे-धीरे आगे बढ़े। प्रकाश बारातों का यह दृश्य देखकर बोला, "किशोर, आज तो मालूम होता है कि कोई कुंआरा ही नहीं रहेगा। आज सबके विवाह हो जाएंगे।"

प्रकाश की बात पर मुस्कराकर किशोर बोला, "बात तो कुछ ऐसी ही प्रतीत हो रही है।"

दोनों मित्र दरीबे से आगे बढ़कर गुरुद्वारा शीशगंज के सम्मुख आए तो एक बहुत ही शानदार बारात सामने दिखलाई दी।

सबसे पहले कुछ लड़के लड़कियों के वेश में अपने हाथों में छोलें लेकर और उन्हें बजा-बजाकर नृत्य करते हुए आ रहे थे और उनके पीछे दिल्ली के प्रसिद्ध शहनाई बजानेवाले उस्ताद बन्नेखां की टोली थी। उस्ताद बन्नेखांजी आज स्वयं शहनाई बजा रहे थे। खेमखाप की शेरवानी, चूड़ीदार सफेद लट्ठे का पायजामा, सफद रेशमी जुर्राब और उनपर पेटेण्ट लैदर के गम्प शू पहने थे। सिर पर गांधीकैपनुमा कामदार टोपी थी। इस वेश-भूषा में उस्ताद बन्नेखां स्वयं एक नौशा बने हुए थे।

शहनाई को सुनकर प्रकाश बोला, "किशोर, कुछ भी सही, उस्ताद बन्नेखां शहनाई बजाते खूब है। सुननेवालों के कानों में इसे सुनकर रस प्रवाहित होने लगता है। अपने ढंग का सुन्दर कलाकार है यह भी।"

"इसमें क्या संदेह है प्रकाश! उस्ताद बन्नेखां शहनाई वास्तव में खूब बजाते हैं।" किशोर मुग्ध होकर बोला।

शहनाई के पश्चात् आतिशबाजीवालों की टोली थी जो चांदनीचौक के बाजार में सड़क के बीचो-बीच खड़े अपने जौहर दिखला रही थी। रंग-बिरंगे फूलोंवाले अनार छूट रहे थे, फिरकियां घूम रही थीं और आकाश की ओर भी आतिशबाज़ियां छोड़ी जा रही थीं, जिनके जौहर आकाश में जाकर खुलते थे।

"शानदार आतिशबाजी लाए है।" प्रकाश मुग्ध होकर बोला।

"बहुत।" किशोर बोला।

दोनों फिर तनिक आगे बढ़ गए।

बारात बहुत लम्बी थी जिसका एक छोर यहां था और दूसरा फतहपुरी से खारीबावली की ओर घूम गया था।

आतिशबाज़ी के पश्चात् कई अंग्रेजी बाजे थे जिनमें सबसे आगे सरदारजी का बाजा था जिसकी वर्दी को ऊपरी तौर पर देखने से प्रतीत होता था कि फौजी बाजा बज रहा है।

बाजों के पश्चात् सुनहरी साज़वाली एक सुन्दर और सुडौल घोड़ी पर वर महोदय विराजमान थे। उनके वस्त्रों की झमझमाहट के साथ गैस की बत्तियों का प्रकाश फीका पड़ गया था।

प्रकाश की दृष्टि बारात के ऊपरी आवरणों को चीरती हुई वर पर जाकर टिकी तो प्रकाश की दशा ऐसी हो गई कि मानो उसे बिच्छू ने डस लिया। उसे देखकर प्रकाश का बारात की रौनक को देखने का सब उत्साह भंग हो गया। वर की सूरत देखकर उसका मन अन्दर ही अन्दर रो गया। वह तनिक खिन्न मन से बोला, "किशोर, देख रहे हो इस घोड़ी पर चढ़े वर को। कमबख्त ने बारात की सारी रौनक को एक 'जोक' की सामग्री बना दिया। मैं सोच रहा था कि जब बारात इतनी है तो इसका दूल्हा भी निश्चित रूप से कोई हृष्ट-पुष्ट नवयुवक

परन्तु निकल आया यह क्षय रोग का रोगी। यह तो अच्छा खासा काटू न मालूम देता है। प्रतीत होता है लड़की का पिता कोई बहुत ही निर्मम व्यक्ति है, जिसे अपनी पुत्री पर भी दया नहीं आई।"

किशोर प्रकाश की बात सुनकर मुस्कराता हुआ बारात की लम्बी कतार में उधर आती हुई अनेकों मोटरगाड़ियों की ओर संकेत करके बोला, "कुछ भी सही, लड़का किसी धनी परिवार का प्रतीत होता है।"

"धनी परिवार!" प्रकाश कुढ़कर बोला, "इससे क्या हुआ? विवाह लड़के और लड़की का होगा, परिवारों का नहीं। ऐसे रोगी व्यक्तियों के विवाह पर सरकार को प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए। रोगी व्यक्तियों को विवाह करने का अधिकार नहीं होना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों के विवाह से क्या लाभ? यह कम्बख्त एक वर्ष नहीं तो दो वर्ष और जी लेगा।

किशोर को प्रकाश की कुढ़न देखकर हंसी आ गई। वह मुस्कराकर बोला, "प्रकाश भैया, तुमने तो व्यर्थ ही इस बेचारे को श्राप दे डाला। तुम्हें उस बेचारी वधू पर भी दया नहीं आई जो इसकी राह में, अपने पलक-पांवड़े बिछाए बैठी होगी और इसकी न जाने कितनी दीर्घ आयु की कल्पना कर रही होगी। उस बेचारी ने आखिर तुम्हारी क्या हानि की है जो तुमने उसके लिए ऐसी अशुभ बात कह डाली।"

किशोर की बात सुनकर प्रकाश के मन में और भी कुढ़न पैदा हो गई। उसका मन बारात की रौनक और वर की कुरूपता में कोई सामंजस्य स्थापित नहीं कर पा रहा था। वह बोला, "मैं उसी बेचारी के भाग्य को तो रो रहा हूं किशोर भाई! जिसके मूर्ख पिता ने इस रोगी वर की धन-सम्पत्ति तो देखी परन्तु इसका स्वास्थ्य नहीं देखा। लड़की ने यदि इस वर की सूरत पहले देख ली होती तो वह कभी अपने जीवन को किसी भी प्रकार इस वर्ष दो वर्ष के मेहमान व्यक्ति की वेदी पर भेंट चढ़ाने के लिए उद्यत न होती।"

किशोर प्रकाश की बातें सुनकर मुस्करा रहा था और मुस्कराकर ही बोला, "पैसे में बहुत बड़ी शक्ति है प्रकाश! उसके सम्मुख स्वास्थ्य और वास्थ्य सब रखा रह जाता है। तुम क्या जानो कि उस लड़की के मन में एकदम इतनी बड़ी सेठानी बन जाने की आकांक्षा कितनी बलवती हो

उठी होगी। तुम्हें क्या पता कि वह अपने भाग्य की कितनी सराहना कर रही होगी। जीवन में एक स्वस्थ पति प्राप्त होने का सुख न सही अन्य तो कोई किसी प्रकार की कमी नहीं रहेगी उसे। क्या पता है कि यह इतना बड़ा वैभव, इतनी बड़ी संपत्ति, इतना धन और ऐश्वर्य उसे इसीलिए प्राप्त हो रहा हो कि ये महाशय इतने कुरूप और अस्वस्थ हैं।"

प्रकाश और किशोर कोतवाली के सामने से होते हुए मोती बाजार के सम्मुख पहुंचे तो उन्हें एक और छोटी-सी बारात आती दिखलाई दी, जिसमें गिने-चुने दस-बीस व्यक्ति थे और बारात का गाजा-बाजा भी बहुत ही साधारण था। परन्तु उसके दूल्हे पर प्रकाश की दृष्टि पड़ी तो वह मुक्त कंठ से बोला, "देखो किशोर! यह वर है विवाह कराने योग्य। धनवान यह भले ही न सही परन्तु देखने में कैसा बांका युवक प्रतीत होता है। जवानी फूटी पड़ रही है इसके बदन से। इसकी वधू जब घूंघट की ओट से इसकी सूरत देखेगी तो मोरनी के समान नाच उठेगी।"

प्रकाश की बात सुनकर किशोर हंस पड़ा और हंसता-हंसता ही बोला, "यह सब तो ठीक है प्रकाश! परन्तु जब वह इन महाशय के घर पहुंचेगी और वहां उसे घर में चूहे कलाबाजियां खाते मिलेंगे, तो तब जानते हो उसके कोमल हृदय की क्या दशा होगी? उसका मोरनी जैसा नृत्य समाप्त हो जाएगा। उसके विवाह का सारा आनंद भंग हो जाएगा। विवाह के फलस्वरूप नये-नये गहने और नये-नये वस्त्र पहनने की उसकी सब आकांक्षाओं और उमंगों पर पानी फिर जाएगा। इन महाशय के गौर और स्वस्थ बदन के प्रति उसके मन में जो आकर्षण पैदा हुआ होगा वह तिरोहित हो जाएगा। वह अपने माथे पर हाथ मारकर रोएगी और अपने पिता को कोसेगी कि उसने उसके लिए चैन की दो रोटियों का ठिकाना भी नहीं ढूंढ़ा।"

प्रकाश किशोर की बात सुनकर बहुत कुढ़ गया। उसे किशोर का तर्क कुछ भला नहीं लगा। वह बोला, "तो तुम्हारे विचार से पैसे का महत्त्व व्यक्ति से अधिक है? व्यक्ति का सौंदर्य और उसका स्वास्थ्य कोई चीज हीं नहीं है पैसे के सम्मुख? मैं ऐसा नहीं मानता। मैं व्यक्ति के स्वास्थ्य और सौंदर्य को उसकी संपत्ति से अधिक महत्त्वपूर्ण समझता हूं।"

किशोर प्रकाश की कुढ़न की कोई चिंता न करके मुस्कराता ही रहा और उसी मुद्रा में बोला, "ये सब कहने की बातें हैं प्रकाश ! वास्तव में सत्य यही है कि धन से स्वास्थ्य और रूप दोनों खरीदे जा सकते हैं। कल तुम्हारा ही रिश्ता लेकर जब कोई आएगा और नोटों की गड्डियां तुम्हारे सम्मुख लाकर बिछा देगा तो तुम चुपके से उन्हें समेटकर एक ओर तिजोरी में रख लोगे और उन महाशय से यह भी नहीं पूछोगे कि उनकी लड़की अंधी है या कानी, लंगड़ी है या लूली, काली है या चितकबरी।"

प्रकाश किशोर की बात से और भी कुढ़ गया। वह गंभीर हो गया और होंठ बिचकाकर बोला, "किशोर ! क्या तुम प्रकाश को भी अपने ही सरीखा समझते हो ? पैसे के आकर्षण में जैसे तुम काली-कलूटी भाभी उठा लाए, वैसा प्रकाश करनेवाला नहीं है। क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि मैं आज तक कितने रिश्ते वापस कर चुका हूं ? मैं रूप और स्वास्थ्य के सम्मुख पैसे को कोई चीज नहीं समझता।"

प्रकाश की यह बात तीर के समान किशोर के दिल में जाकर चुभ गई और वह अपने दिल को मसोसकर मौन खड़ा रह गया। प्रकाश ने उसकी पत्नी को 'काली-कलूटी' कहकर उसका अपमान किया। उसके मर्माहत हृदय को गहरी ठेस पहुंचाई।

किशोर बोला नहीं एक शब्द भी और प्रकाश के चेहरे पर एक बार देखकर उसने फिर अपनी गर्दन दूसरी ओर को घुमा ली।

किशोर के सम्मुख उसकी सांवली पत्नी आकर खड़ी हो गई। जिसके कारण उसे आज प्रकाश का यह मर्मभेदी वाक्य सुनना पड़ा। वह तिल-मिला उठा यह सुनकर। उसका हृदय टुकड़े-टुकड़े हो गया, उसका मस्तिष्क चकरा उठा और उसकी आंखों के सम्मुख अंधकार छा गया।

यह सच था कि किशोर के मन में अपनी पत्नी के सांवले वर्ण को देख-कर असीम पीड़ा उत्पन्न हुई थी। उसकी कल्पना का बालू का बना किला टूटकर खंडहर हो गया था। उसके जीवन की आनंदमयी कल्पना नष्ट हो गई थी। उसका जीवन विरक्त-सा हो गया था। अपनी पत्नी के प्रति और उसमें कोई आकर्षण नहीं रह गया था उसके लिए।

वह समस्त वैभव, वह दान-दहेज और धन जो उसे अपने विवाह में

प्राप्त हुआ था उसे उपहास-सा प्रतीत हुआ था। उसके नेत्रों के सम्मुख अंधकार छा गया था। उसकी आशाएं निराशा में परिणत हो गई थीं। उसे अपना जीवन निराशापूर्ण दिखलाई देने लगा था।

उसकी यह दशा देखकर उसकी पत्नी रात-भर उसके पलंग के सिर-हाने से सटी खड़ी रही थी और वह पलंग पर पड़ा-पड़ा अपने दुर्भाग्य को कोसता रहा था। उसे लग रहा था कि वह उस पत्नी के साथ अपना जीवन-निर्वाह नहीं कर सकता। वह पत्नी उसके जीवन को कभी उत्साह और उमंग से नहीं भर सकती।

यह सब सत्य था, परन्तु यह उसकी अपनी और उसकी पत्नी की समस्या थी। उसपर वह स्वयं जिस रूप में भी चाहे विचार कर सकता था। उसपर प्रकाश ने यह व्यंग्य-बाण क्यों कसा? प्रकाश को ऐसे शब्दों का प्रयोग करने का कोई अधिकार नहीं था। प्रकाश को ऐसा नहीं करना चाहिए था। एक मित्र होकर उसे किशोर के हृदय को नहीं दुखाना चाहिए था।

प्रकाश ने ये शब्द किशोर के लिए कह तो दिए, परन्तु तुरन्त ही उसे अपनी बात पर ग्लानि-सी हो उठी। वह बोला नहीं एक शब्द भी, परन्तु उसने मन ही मन अनुभव किया कि उसने अपने मित्र किशोर के प्रति दुर्व्यवहार किया है। उसे ऐसे कठोर शब्दों का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए था।

किशोर यह अनुभव करके भी मुस्कराता ही रहा। उसे प्रकाश पर कभी क्रोध नहीं आता था। प्रकाश का हर अपराध उसकी दृष्टि में क्षम्य था। उसने अपने दिल की पीड़ा को दिल के एकांत कोने में दबा दिया। वह प्रकाश को अपना छोटा भाई समझता था और उसी नाते उसका हर अपराध उसकी दृष्टि में क्षम्य था।

दोनों मित्र मोती बाज़ार से होकर अंदर मालीवाड़ में पहुंचे तो किशोर बोला, "चलो प्रकाश, सीधे हमारे ही घर चलो। वहां खाना खाकर लौट आना।"

प्रकाश बोला, "चलो किशोर! आज वहीं खाना खाऊंगा। मुझे माताजी से ठीक से बातें किए भी कई दिन हो गए हैं। मैं सप्ताह में एक

बार उनसे जब तक खूब बातें नहीं कर लेता हूं तो जाने क्यों मेरा मन उदास-उदास-सा बना रहता है।"

किशोर बोला, "ठीक यही दशा माताजी की भी रहती है प्रकाश! तुम एक दिन भी हमारे यहां आने में टालमटोल कर देते हो तो माताजी के मन में बेचैनी पैदा हो जाती है। मुझे और तुम्हें पास-पास बिठलाकर खाना खिलाने में पता नहीं माताजी को कितना आनंद आता है!"

बातें करते हुए दोनों मित्र किशोर के घर की ओर चल दिए।

२

प्रकाश और किशोर की दोस्ती कोई आज की नहीं थी—बहुत पुरानी थी। दोनों के मकान मालीवाड़े में ही थे। दोनों साथ-साथ पाठशाला में भर्ती हुए थे और प्रथम दिन दोनों ने एक ही टाट-पट्टी पर बैठकर पंडितजी से अपनी 'अ. आ' की पोथी पढ़नी प्रारम्भ की थी।

दोनों ने परस्पर मित्रतापूर्ण बातें की थीं और किशोर ने कहा था, "प्रकाश! आज से हम-तुम दोनों मित्र बन गए।"

प्रकाश बोला, "हां, किशोर! आज से हम-तुम दोनों मित्र हो गए। हम कभी आपस में लड़ें-झगड़ेंगे नहीं।"

पाठशाला की छुट्टी हुई तो दोनों मित्रों ने अपने-अपने बस्ते अपनी-अपनी बगल में दबाए और साथ-साथ शाला से बाहर निकले। शाला से बाहर निकलकर दोनों खड़े हो गए।

प्रकाश ने पूछा, "मित्र किशोर, अब तुम्हें किस ओर जाना है? तुम्हारा मकान कहां है।"

किशोर बोला, "मेरा मकान मालीवाड़े में है।"

किशोर की बात सुनकर प्रकाश उछल पड़ा। वह हर्षित मन से बोला, "मित्र, मेरा मकान भी मालीवाड़े में ही है। यह बहुत अच्छा रहा। अब हम-तुम दोनों साथ-साथ पाठशाला आया करेंगे और साथ-साथ यहां से लौट-कर घर जाया करेंगे। यह बात तो बहुत ही सुन्दर रही!"

दोनों मित्र एक-दूसरे के गले में बांहें डालकर मालीवाड़ की ओर चल दिए। मोतीबाजार से अन्दर घुसकर दोनों ने मालीवाड़े में प्रवेश किया तो सामने ही प्रकाश का मकान था। वह बोला, "किशोर, मेरे घर चलो। मेरी माताजी तुम्हें बहुत प्यार करेंगी।"

किशोर प्रकाश के साथ उसके घर चला गया। प्रकाश अपनी माताजी से बोला, "माताजी, यह मेरा मित्र है किशोर। किशोर कहता है कि हम दोनों मित्र हो गए।"

प्रकाश की माताजी ने आगे बढ़कर स्नेह से किशोर को अपनी गोद में उठा लिया और प्यार से उसका मुख चूमकर बोलीं, "बेटा प्रकाश! तुम्हारा मित्र किशोर बहुत अच्छा है। मुझे बहुत पसंद आया तुम्हारा मित्र।" और फिर किशोर से पूछा, "बेटा किशोर, तुम्हारा घर कहां है? क्या तुम भी मालीवाड़े में ही रहते हो?"

"जी माताजी! यहां से अधिक दूर नहीं है मेरा घर। बहुत निकट है यहां से।" किशोर बोला।

"तब तो बहुत अच्छा रहेगा। अब तुम दोनों मित्र साथ-साथ पाठशाला जाया करना और पढ़कर साथ ही दोनों अपने घरों को लौट आना। और देखो, अब तुम दोनों मित्र बन गए हो न! तो कभी आपस में लड़ना नहीं। मैं देखूंगी कि तुम दोनों कितने प्रेम-भाव से पढ़ते और रहते हो।" प्रकाश की माताजी ने कहा।

फिर प्रकाश की माताजी ने प्यार से दोनों बच्चों को पास-पास बिठलाकर नाश्ता कराया और बहुत देर तक मीठी-मीठी बातें करती रहीं।

नाश्ते के पश्चात् प्रकाश किशोर के घर तक उसे छोड़ने गया और उसके द्वार तक उसे छोड़कर लौटने लगा तो किशोर बोला, "प्रकाश! हमारे घर चलो। मेरी माताजी को भी तुम बहुत अच्छे लगोगे। तुम देखोगे कि वह तुम्हें कितना प्यार करती हैं।"

प्रकाश और किशोर दोनों ने किशोर के घर में प्रवेश किया और घर के आंगन में पहुंच गए।

किशोर की माताजी किशोर के लौटने की प्रतीक्षा में थीं। किशोर के साथ एक अन्य सुन्दर-से बच्चे को आते हुए देखकर किशोर की माताजी

प्रसन्न होकर बोलीं, "अरे यह कौन मुनुआ आया है तुम्हारे साथ किशोर! और इतना कहकर उन्होंने आगे बढ़कर प्रकाश को अपनी अंक में भरकर उसके गोल गुलाबी चेहरे को बड़े स्नेह से देखा।

किशोर सरल वाणी में बोला, "यह प्रकाश है माताजी! मैंने इसे अपना मित्र बना लिया है। हम दोनों आज पाठशाला में पास-पास बैठकर पढ़े थे। इनका मकान भी यहीं मालीवाड़े में ही है। चांदनीचौक से मोती-बाज़ार में होकर ज्योंही मालीवाड़े में प्रवेश करते हैं तो सामने ही इनका घर पड़ता है।"

कुछ ठहरकर किशोर बोला, "माताजी, प्रकाश की अम्मां बहुत अच्छी हैं। पाठशाला से लौटकर मैं अभी प्रकाश के साथ इनके घर गया तो इसकी माताजी ने मुझे गोद में लेकर उतने ही प्यार से चूमा जैसे आप चूमती हैं। उन्होंने हम दोनों को पास-पास बिठलाकर बड़े स्नेह से दूध पिलाया और नाश्ता कराया। माताजी, बहुत अच्छे रसगुल्ले खिलाए उन्होंने।" किशोर का मन इस समय आनंद की लहरों पर तैर रहा था।

किशोर के मुख से प्रकाश की माताजी द्वारा अपने लाड़ले पुत्र किशोर को किए गए प्यार की बात सुनकर किशोर की माताजी का मन मुग्ध हो उठा। उन्होंने बहुत ही मीठी दृष्टि से प्रकाश की ओर देखा। वे गद्‌गद होकर बोलीं, "तुम्हें बहुत अच्छा मित्र मिल गया है किशोर! मुझे तुम्हारा मित्र बहुत प्रिय लग रहा है। अब तुम दोनों साथ-साथ पाठशाला जाया करना, और देखो बेटा, जब तुम दोनों मित्र बन ही गए हो तो कभी अब परस्पर लड़ना-झगड़ना नहीं। मैं देखूंगी कि तुम दोनों कितने प्यार से रह-कर अपनी मित्रता को निभाते हो।"

इतना कहकर उन्होंने दोनों लाड़ले बच्चों को अपने घर के आंगन में पड़ी झूले के पटरे पर प्यार से बिठलाकर बड़े स्नेह से झुलाया और साथ ही मधुर कंठ से प्रसन्न होकर गा उठीं :

"कृष्ण बलदेव झूला झूलें
झुलावै मात यशोदा री।"

उसके पश्चात् प्रकाश और किशोर नित्य साथ-साथ पाठशाला जाने लगे। दोनों की मित्रता प्रगाढ़ होती गई। साथ-साथ पढ़ना और साथ-साथ

खेलना इनका नित्य का नियम बन गया। इनकी इस अभिन्न मित्रता को देखकर पाठशाला के कुछ लड़के इनसे चिढ़ने लगे और सोचने लगे कि कैसे इनके बीच वैमनस्य का बीज बो डालें।

एक दिन पाठशाला में प्रकाश के बस्ते से एक शैतान लड़के ने उसकी एक पुस्तक निकालकर चुपके से किशोर के बस्ते में रख दी।

प्रकाश को अपने बस्ते में अपनी पुस्तक न मिली तो उसने अपने अध्यापक को इसकी सूचना दी।

अध्यापक ने बच्चों से पूछा तो वह उद्दण्ड लड़का बोला, "गुरुजी! यह चोरी किशोर ने की है। मैंने छुट्टी में इसे प्रकाश का बस्ता खोलते देखा था!"

इस उद्दण्ड लड़के के मुख से किशोर का नाम सुनकर प्रकाश तिलमिला उठा। उसके नेत्र रक्तवर्ण हो गए। वह अपने आवेग को रोक न सका और गुरुजी के सम्मुख जाकर बोला, "किशोर मेरी पुस्तक नहीं चुरा सकता गुरुजी! किशोर मेरा मित्र है। उसे उस पुस्तक की आवश्यकता हो तो क्या वह मुझसे मांग नहीं सकता?"

इसपर वह उद्दण्ड लड़का बोला, "किशोर नहीं चुरा सकता! तो क्या हमने चुराई है तुम्हारी पुस्तक? किशोर तुम्हारा मित्र है तो क्या हम सब शत्रु हैं तुम्हारे? किशोर का बस्ता देखा जाए गुरुजी। पुस्तक किशोर के ही बस्ते में निकलेगी।"

अध्यापक ने किशोर का बस्ता खुलवाया और उसकी पुस्तकें देखीं तो वास्तव में उसके अन्दर प्रकाश की पुस्तक रखी थी। यह देखकर प्रकाश का मस्तिष्क झनझना उठा और किशोर के तो यह देखकर मानो प्राण-पखेरू ही उड़ गए। वह निर्जीव-सा खड़ा रह गया कक्षा में। वह सिर से पैर तक पसीने में नहा गया। उसका मस्तिष्क चकराने लगा। वह सोच ही न सका कि आखिर यह सब कैसे हुआ। वह चोरी तो प्रकाश की क्या किसीकी भी नहीं कर सकता।

प्रकाश आगे बढ़कर गुरुजी के सम्मुख जा पहुंचा और गम्भीर वाणी में बोला, "गुरुजी! किशोर के ऊपर यह चोरी का आरोप झूठा लगाया गया है। ये लोग मेरी और किशोर की मित्रता को देखकर चिढ़ते हैं। हम

दोनों में वैमनस्य पैदा करने के लिए ही इन लोगों ने यह षड्यन्त्र रचा है। किशोर एक से लाख तक मेरी पुस्तक नहीं चुरा सकता। किशोर चोरी कर ही नहीं सकता गुरुजी !"

गुरुजी प्रकाश की समझदारी की बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। अपने मित्र की सचाई में उसका इतना विश्वास देखकर उनका मन मुग्ध हो उठा। वे मुक्त कंठ से बोले, "प्रकाश ! तुम्हारी प्रगाढ़ मित्रता की भावना ने मेरी आत्मा को प्रसन्न कर दिया। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि तुम्हारी यह मित्रता आजीवन बनी रहे। तुम दोनों के मनों में एक-दूसरे के प्रति कभी मैल न आए।"

गुरुजी के मुख से निकली इस आशीर्वाद की वाणी ने दोनों मित्रों के जीवन में प्रेरणास्वरूप प्रवेश किया। दिन-प्रतिदिन दोनों की मित्रता दृढ़तर होती गई। दोनों की मित्रता का पौधा लहलहा उठा।

इस छोटी पाठशाला से दोनों ने साथ-साथ ही हाईस्कूल में प्रवेश किया और साथ-साथ ही दोनों कालेज में गए। दोनों मित्र हर समय साथ-साथ ही रहते थे और कभी भी कोई एक-दूसरे से पृथक् हो जाता था तो उसके मन में बेचैनी-सी होने लगती थी।

प्रकाश और किशोर दोनों ही अपनी कक्षा में साथ-साथ बैठते थे, साथ-साथ स्टडी करते थे और साथ-साथ खेलने जाते थे। प्रकाश और किशोर पढ़ाई में जितने तीव्र थे, खेल-कूद में भी उतनी ही ख्याति उन्होंने प्राप्त की थी।

एक दिन दोनों संध्या समय स्कूल से लौटकर प्रकाश के घर आए तो उन्होंने देखा कि प्रकाश की माताजी पलंग पर पड़ी कराह रही थीं और प्रकाश के पिताजी डाक्टर साहब का बैग संभाले उनके पास खड़े थे। प्रकाश समझ ही न सका कि यह क्या हो गया। उसके पिताजी का स्वास्थ्य महीनों से ठीक नहीं चल रहा था और पलंग से उठने की शक्ति भी उनमें नहीं थी। उन्हें खड़े और माताजी को पलंग पर पड़े कराहते देखकर वह स्तब्ध-सा रह गया। उसने आगे बढ़कर पिताजी के हाथ से डाक्टर साहब का बक्स ले लिया।

किशोर यह देखकर प्रस्तरवत् रह गया, वह घबरा उठा। उसकी

वाणी में इतनी शक्ति ही न रही कि वह आगे बढ़कर प्रकाश के पिताजी से प्रकाश की माताजी की दशा के विषय में प्रश्न कर सके। वह खड़ा-खड़ा देखता ही रहा कि अचानक यह सब क्या हो गया। अभी दो घंटे पूर्व ही वह उन्हें बिलकुल स्वस्थ छोड़कर गया था।

किशोर फिर लपककर डाक्टर साहब के लिए कुर्सी उठा लाया और उसे उनके पीछे रखकर बोला, "बैठ जाइए डाक्टर साहब।"

डाक्टर साहब ने प्रकाश की माताजी की परीक्षा की। स्टेथिस्कोप लगाकर हृदय-गति को देखा तो उनका चेहरा गम्भीर हो उठा। प्रकाश की माताजी की हृदय-गति धीमी पड़ती जा रही थी।

वे धीरे से प्रकाश के पिताजी को बाहर ले गए और गम्भीर वाणी में बोले, "हृदय की गति बहुत मन्द पड़ गई बाबूजी! इन्हें इसी समय हास्पिटल ले चलना चाहिए।"

प्रकाश के पिताजी यह सुनकर संज्ञाविहीन-से हो गए। उनका बदन स्वेदपूर्ण हो गया और डबडबाए नेत्रों से पूछा, "क्या कोई चिंताजनक स्थिति पैदा हो गई डाक्टर साहब?"

डाक्टर साहब उतनी ही गम्भीर वाणी में बोले, "अत्यन्त चिंताजनक। मैं पर्चा लिख रहा हूं। इन्हें तुरन्त हास्पिटल ले जाओ। विलम्ब न करो तनिक भी। स्थिति बहुत गम्भीर है।"

प्रकाश के पिताजी ने घबराकर प्रकाश से कहा, "बेटा, एक टैक्सी ले आओ और विलम्ब न हो तनिक भी। तुम्हारी माताजी को अभी हास्पिटल ले चलना है।"

यह सुनकर किशोर बोला, "तुम यहीं रहो प्रकाश! मैं अभी अपनी कार लेकर आया।" और वह तुरन्त कार लाने के लिए दौड़ गया।

पलक मारते किशोर अपनी कार लेकर आ गया। उसने कार चांदनी-चौक में मोतीबाजार के सामने लगा दी।

प्रकाश और किशोर ने संभालकर प्रकाश की माताजी को धीरे से कार में बिठलाया और प्रकाश के पिताजी को साथ ले तुरन्त हास्पिटल पहुंच गए।

डाक्टर का पर्चा पास होने से हास्पिटल में भर्ती होने में विलम्ब न

हुआ। प्रकाश के पिताजी ने स्पेशल वार्ड में एक कमरा ले लिया और उसीमें ले जाकर प्रकाश की माताजी को पलंग पर लिटा दिया। उन्हें अभी तक चेतना नहीं लौटी थी।

कमरे में पहुंचने पर डाक्टर ने आक्सीजन का प्रबन्ध किया जिसके सहारे प्रकाश की माताजी के डूबते हुए दिल को तनिक सहारा मिला और उन्होंने नेत्र खोल दिए।

उनका नेत्र खोलना था कि प्रकाश, किशोर और प्रकाश के पिताजी के चेहरों पर प्रसन्नता की रेखाएं खिंच गईं। उनके निराशापूर्ण हृदयों में आशा का संचार हुआ। उन्हें विश्वास हुआ कि वे जी उठेंगी।

प्रकाश की माताजी ने फिर नेत्र बन्द कर लिए तो किशोर ने प्रकाश के पिताजी से आतुरतापूर्वक पूछा, "यह सब अचानक माताजी को क्या हो गया पिताजी! अभी एक घंटे पूर्व ही तो हम इन्हें बिलकुल स्वस्थ छोड़कर गए थे।"

प्रकाश के पिताजी गम्भीर वाणी में बोले, "दिल का दौरा पड़ गया है बेटा। प्रकाश की मां का दिल बड़ा कमज़ोर है। ये तनिक-सी घबराहट की कोई बात सुनती हैं तो इनकी यह दशा होजाती है। आज अचानक ही इनके पीहर से कुछ ऐसा समाचार आया कि जिसे सुनकर इनकी यह दशा हो गई।

"परन्तु इस बार का दौरा मैं देख रहा हूं कि पहले से बहुत भयंकर है। पता नहीं विधाता को क्या मंजूर है?" और इतना कहकर वे बहुत उदास-से होकर पीछे कुर्सी पर बैठ गए। उनका सिर चकरा उठा और हृदय में अथाह पीड़ा जाग्रत् हो उठी। वे संभाल न सके अपने को।

प्रकाश और किशोर संज्ञाविहीन-से प्रकाश की माताजी के पलंग के पास खड़े रहे। उनकी कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें। विधाता ने अचानक ही उनपर आपत्ति का पहाड़ गिरा दिया।

थोड़ी देर में प्रकाश की माताजी ने फिर नेत्र खोले तो किशोर उनके सामने खड़ा था। किशोर को देखकर प्रकाश की माताजी के नेत्रों में आंसू आ गए और वे मंद स्वर में विक्षिप्त-सी दशा में बोलीं, "बेटा! किशोर! तुम आ गए बेटा! मैंने प्रकाश को अभी तुम्हें ही बुलाने भेजा था। प्रकाश

नहीं लौटा क्या अभी ?"

"मैं खड़ा हूं माताजी !" प्रकाश ने सजल नेत्रों से उनकी ओर देखते हुए कहा। प्रकाश का दिल अपनी माताजी की यह दशा देखकर बैठा जा रहा था।

प्रकाश की माताजी ने किशोर और प्रकाश की ओर देखकर किशोर से कहा, "बेटा किशोर ! आज तुम्हारी मां जा रही है। मैंने इतने दिन में तुम दोनों की मित्रता के पौधे को अपने स्नेह-जल से सींचकर इतना बड़ा किया है बेटा ! मेरे सम्मुख प्रतिज्ञा लो कि तुम इस पौधे को कभी जीवन में सूखने नहीं दोगे। तुम दोनों की मित्रता का पौधा निरन्तर लहराता रहेगा। और बेटा किशोर ! तुम बड़े हो, सो अपने छोटे भाई प्रकाश का ध्यान रखना।"

प्रकाश की माताजी की यह बात सुनकर प्रकाश और किशोर दोनों के नेत्र बरस पड़े। दोनों ने उनके एक-एक चरण पर मस्तक टिकाकर कहा, "माताजी ! आपके सींचे हुए पौधे को, हम प्रण करते हैं कि कभी जीवन में सूखने नहीं देंगे। वह निरन्तर पल्लवित और पुष्पित ही होता रहेगा।"

फिर किशोर स्नेहार्द्र स्वर में बोला, "आप ठीक हो जाएंगी माताजी ! पिताजी ने बतलाया कि ऐसे दौरे तो आपको पड़ ही जाते हैं। अभी कुछ देर में आपकी पर्याप्त चेतना लौट आई है।"

किशोर की बात सुनकर प्रकाश की माताजी के होंठों पर हलकी-सी मुस्कान की रेखा खिंच गई। वे धीरे-धीरे वे बोलीं, "ऐसा दौरा, बेटा, मुझे जीवन में कभी नहीं पड़ा ! बहुत पीड़ा है इस समय हृदय में। मालूम देता है कि कोई मेरे कंठ को दबा रहा है और प्राणों को खींचकर इस देह से बाहर निकाल ले जाना चाहता है। मेरा मन छटपटा रहा है। मेरे हृदय की धड़कन बन्द हो जाना चाहती है। मेरा मस्तिष्क फटा जा रहा है।"

किशोर और प्रकाश निराश नेत्रों से उनकी ओर देखते रहे। उनकी वाणी मंद पड़ गई थी।

तभी डाक्टर ने फिर कमरे में प्रवेश किया और रोगी को देखा तो उनके मस्तक पर चिंता की रेखाएं खिंच गईं। उन्होंने आक्सीजन की नली को ठीक करके तनिक उसकी गति को तीव्र किया तो प्रकाश की माताजी

जैसे एकदम सचेत-सी हो उठीं। उन्होंने नेत्र खोल दिए और चारों ओर दृष्टि घुमाकर देखा। उन्होंने डबडबाए नेत्रों से अपने पति के विक्षिप्त चेहरे पर दृष्टि डाली।

डाक्टर ने उनकी नाड़ी का परीक्षण किया तो देखा कि गति बहुत मंद पड़ गई थी। उसमें कोई सुधार नहीं हो रहा था। वह एक इंजेक्शन लगाकर चले तो प्रकाश के पिताजी ने कमरे से बाहर निकलकर उत्सुकतापूर्वक पूछा, "अब कैसी दशा है डाक्टर साहब? क्या इनके प्राण बचने की कोई आशा है?"

डाक्टर साहब गम्भीर वाणी में बोले, "अभी बहुत चिंताजनक स्थिति है। नाड़ी की गति में कोई सुधार नहीं हुआ। मैं पूरा प्रयत्न कर रहा हूं।" और एक इंजेक्शन एक कागज पर लिखकर बोले, "लो, यह इंजेक्शन बाजार से मंगवा लो। इसे लगाकर देखता हूं कैसा काम करता है।"

प्रकाश के पिताजी ने अन्दर आकर वह पर्चा प्रकाश को देकर कहा, "बेटा, जल्दी से बाजार जाकर यह इंजेक्शन तो ले आओ। डाक्टर साहब ने नया इंजेक्शन लिखा है यह।"

प्रकाश के पिताजी की यह बात प्रकाश की माताजी के कानों में पड़ी तो उन्होंने नेत्र खोल दिए और बहुत धीमे स्वर में बोलीं, "अब तुम यहां से इंजेक्शन लेने न जाना बेटा!" और फिर प्रकाश के पिताजी की ओर करुण नेत्रों से देखकर बोलीं, "प्राणनाथ! मैं कितनी अभागी हूं कि आपको अस्वस्थ अवस्था में इस प्रकार अकेला छोड़कर जा रही हूं। मैं जाना नहीं चाहती प्रकाश के पिताजी! परन्तु क्या करूं मेरा दिल डूबा जा रहा है। मैं संभाल नहीं पा रही अपने को। मेरा बदन टूट रहा है। मालूम देता है प्राण निकल रहे हैं। आज मेरी आयु ठीक पैंतीस वर्ष की हुई है और मुझे स्मरण है कि मेरी माताजी की मृत्यु भी इसी अवस्था में हुई थी। वे मुझे अपने अंक में भरकर पता नहीं कहां ले जाना चाहती हैं। वे अपने दोनों हाथ फैलाए मेरे सम्मुख खड़ी हैं। मैंने गिड़गिड़ाकर उनसे विनती की है कि मुझे कुछ दिन के लिए और छोड़ दें। प्रकाश के पिताजी की तबीयत ठीक नहीं है। वे मेरे बिना रह नहीं सकेंगे, जी नहीं सकेंगे। मुझे तुम ले गईं तो उनकी सेवा कौन करेगा? मेरा घर उजड़ जाएगा। मेरा बच्चा प्रकाश

विरान हो जाएगा। परन्तु इतनी निर्दय मेरी मां मुझपर कभी नहीं हुई, जितनी आज बनी हुई है। वह देखो, वे सामने से आ रही हैं।" और यह कहते-कहते उनकी वाणी रुक गई। उनके नेत्र पथरा गए। उनका बदन ठंडा पड़ गया। उनके प्राण-पखेरू उड़ गए।

प्रकाश के पिताजी घबराकर उठे और उन्हें झंझोड़कर बोले, "प्रकाश की मां! प्रकाश की मां!" और फिर निराश होकर रोते हुए कहा, "आखिर चली ही गईं मुझे छोड़कर।"

प्रकाश की मां वहां नहीं थीं। वे अपनी मां की गोद में पहुंच चुकी थीं। उनका शव-मात्र पलंग पर पड़ा था। चेतनाहीन शव। प्राणविहीन देह।

प्रकाश के पिताजी का अस्वस्थ बदन अपनी पत्नी की मृत्यु के शोक को सहन न कर सकने पर अचेतन होकर भूमि पर गिरा और संज्ञाविहीन हो गया। प्रकाश ने घबराहट में उन्हें दौड़कर संभाला।

किशोर दौड़कर डाक्टर के पास गया और यह बात बतलाई तो डाक्टर साहब तुरन्त उसके साथ रोगी के कमरे में आए। प्रकाश के पिताजी फर्श पर पड़े छटपटा रहे थे और प्रकाश उन्हें संभाल रहा था।

डाक्टर ने देखा कि प्रकाश की माताजी का प्राणान्त हो चुका था और उसके पिताजी विक्षिप्तावस्था में भूमि पर पड़े बड़बड़ा रहे थे।

डाक्टर ने प्रकाश की माताजी का पलंग एक ओर बरांडे में निकलवाकर उसके चारों ओर पर्दा लगवा दिया और दूसरे पलंग पर प्रकाश के पिताजी को लिटवाया। प्रकाश और किशोर ने उन्हें धीरे से उठाकर पलंग पर लिटा दिया।

डाक्टर साहब इंजेक्शन-बक्स लेने के लिए गए तो प्रकाश के पिताजी विक्षिप्तावस्था में ही बोले, "प्रकाश की मां! ठहरो तनिक! तुम्हें जिस दिन से विवाह कर लाया हूं कभी मैंने कहीं अकेली नहीं जाने दिया। तुम तो चांदनीचौक में ही जाकर मालीवाड़े का मार्ग भूल जाती हो प्रिये! फिर इतनी भयानक यात्रा पर अकेली कैसे जा सकोगी? ठहरो, मैं आ रहा हूं।"

तब तक डाक्टर साहब अपना इंजेक्शन-बक्स लेकर आ गए। परन्तु

पलंग के पास जाकर देखा तो वहां प्रकाश के पिताजी का शव-मात्र शेष रह गया था। उनमें अब प्राण शेष नहीं था।

किशोर ने प्रकाश को संभालकर अपनी कौली में भर लिया और दोनों के हृदय टुकड़े-टुकड़े हो गए।

प्रकाश निराधार रह गया। उसके ऊपर आकाश और नीचे पृथ्वी रह गई। उसके नेत्रों के सम्मुख अंधकार छा गया।

किशोर ने नेत्रों के आंसू पोंछकर कहा, "भैया प्रकाश! विधाता ने जो महान आपत्ति का पर्वत तुम्हारे ऊपर गिरा दिया है उसे सहनशीलता के साथ सहन करो। माताजी और पिताजी तुम्हारा साथ छोड़ गए तो कोई बात नहीं, तुम्हारा बड़ा भाई किशोर तो अभी जीवित है। तुम चिंता न करो किसी बात की।"

प्रकाश शब्दविहीन किशोर के चेहरे पर देखता रहा, वाणीविहीन, संज्ञाविहीन। उसके नेत्रों से बहनेवाला अश्रुप्रवाह रुक गया और वह पाषाण-शिला के समान खड़ा रह गया।

किशोर ने बड़ी सावधानी से सहारा देकर कुर्सी पर बिठलाया तो प्रकाश अस्फुट वाणी में बोला, "किशोर! अब क्या होगा?"

किशोर प्रकाश की बात सुनकर आज रोया नहीं। उसने धैर्यपूर्वक कहा, "प्रकाश! विधाता की चाल को कोई नहीं रोक सकता। उसने जो कुछ किया उसपर कोई वश नहीं, परन्तु जब तुम्हारा बड़ा भाई जीता है तो घबराने की आवश्यकता नहीं।"

प्रकाश का सिर चकरा रहा था। चेतना उसका साथ छोड़ रही थी। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि उसके माता-पिता उसे इस प्रकार अनाथ कर जाएंगे।

डाक्टर साहब ने उसकी ऐसी दशा देखी तो तुरन्त उसे पलंग पर लिटाकर इंजेक्शन दिया। किशोर से बोले, "तुम भाई हो प्रकाश के?"

"जी।" किशोर ने कहा।

"इन्हें नींद आ जाए तो जगाना नहीं। मैंने नींद का इंजेक्शन दिया है। नींद आने से इनकी तबीयत संभल जाएगी।" कहकर डाक्टर साहब चले गए।

३

प्रकाश के माता-पिता, दोनों उसे एकसाथ छोड़कर चले गए थे। प्रकाश आधारविहीन रह गया था परन्तु इस निराशा-काल में भी उसके जीवन में एक आशा-किरण शेष थी और वह था उसका अभिन्न मित्र किशोर। उसीकी ओर देखकर प्रकाश ने सांत्वना ग्रहण की। वह न होता तो प्रकाश जीवन के अंधकार में भटककर रह जाता। उसे इस महान आपत्ति के समय कोई ढाढ़स बंधानेवाला भी न होता।

किशोर ने लगभग दो मास तक प्रकाश को उसके घर नहीं जाने दिया। वह उसकी सब पुस्तकें अपने ही घर पर उठा लाया और यहीं रहकर दोनों पढ़ते रहे। साथ-साथ कालेज जाते रहे और साथ-साथ खेलकूद में भाग लेते रहे। किशोर ने चौबीसों घंटे उसके साथ रहकर उसकी उदासीनता को दूर करने का प्रयास किया।

किशोर की माताजी ने प्रकाश को अपनी गोद में बिठाकर कहा, "बेटा प्रकाश! विधाता के विधान पर किसीका वश नहीं चलता। परन्तु तुम्हें तो विधाता ने दो-दो मां और दो-दो पिता प्रदान किए हैं। तुम चिन्ता न करना किसी बात की। मेरे लाल को मेरे रहते क्या कभी कोई कष्ट हो सकता है जीवन में!"

किशोर की माताजी की प्रेम-भरी बातें सुनकर प्रकाश के नेत्र छल-छला आए। उसने करुण दृष्टि से उनकी ओर देखा और उनके प्रति उसके हृदय में अपार श्रद्धा उमड़ आई। आज वह उनके आंचल में सिर छिपाकर न जाने कितनी देर तक रोता रहा। वह खूब जी भरकर रोया। रो-रोकर अपने हृदय में उठनेवाले बवंडर को शांत किया। प्रकाश ने अश्रु-पूरित नेत्रों से किशोर की माताजी के चेहरे पर देखा तो उसे लगा कि वह सचमुच अपनी ही माताजी की गोद में पड़ा है। वह स्नेहावेश में उनसे लिपट गया और किशोर की माताजी ने भी उसे दुलार से अपनी अंक में भर लिया। उन्होंने प्रकाश को अपनी छाती से चिपकाकर उसपर अपना मातृ-स्नेह उंडेल दिया।

समय धीरे-धीरे निकलता गया। नित्य के क्रिया-कलापों में प्रकाश

के हृदय की वेदना कम होती गई। वह अपने सिर पर पड़ी महान आपत्ति को भुलाता गया और मानसिक स्थिति को ठीक करता गया। वह अपनी पढ़ाई के काम में पूरी तरह लग गया।

इसी बीच एक दिन बाबू ब्रिजकिशनजी प्रकाश के पास आए और उन्होंने प्रकाश से उसका नीचे का मकान किराये पर देने की प्रार्थना की। प्रकाश की भी कुछ समझ में आ गया। उसके पास अब आय का कोई साधन नहीं रहा था। प्रकाश ने अपने मित्र किशोर से परामर्श करके अपने मकान का नीचे का भाग किराये पर उठा दिया।

बाबू ब्रिजकिशन के स्वभाव से प्रकाश बहुत प्रभावित हुआ और उनसे भी अधिक प्रभाव प्रकाश पर उनकी पत्नी सरोज का पड़ा, जिन्होंने प्रकाश से घर जैसा ही संबंध स्थापित कर लिया। प्रकाश को अपने सगे देवर के समान स्नेह करने लगीं।

किशोर अब एम० ए० में पढ़ रहा था। प्रकाश किशोर के साथ नित्य कालेज जाता था और मन लगाकर अध्ययन करता था।

इन्हीं दिनों किशोर के पिताजी ने अपने किसी मित्र की लड़की का रिश्ता अपने पुत्र किशोर के लिए स्वीकार कर लिया।

किशोर से इस विषय में किशोर के पिताजी ने कोई परामर्श नहीं किया। लड़की देखने इत्यादि की प्रथा उन्हें पसंद नहीं थी और उन्हें इस बात की आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि लड़की उनकी देखी-भाली थी।

प्रकाश को किशोर के रिश्ते का पता चला तो उसने किशोर से पूछा, "किशोर! तुम भी बड़े विचित्र व्यक्ति हो। बिना देखे-भाले ही जीवन-साथी का सौदा कर लिया तुमने। लोग-बाग गाय, बैल, भैंस खरीदते हैं तो भी वे उनकी शक्ल-सूरत और उनके स्वास्थ्य को देखते हैं। तुम अपना विवाह करने जा रहे हो और तुमने भाभी को पहले देखने का भी प्रयास नहीं किया।

"मुझे तुम्हारा इस प्रकार विवाह के मामले में अंधी मुंडकी लगाना उचित नहीं जान पड़ा। तुम्हें विवाह से पूर्व हमारी होनेवाली भाभी को देख लेना चाहिए। ऐसा न हो कि पीछे पछताना पड़े।"

प्रकाश की बात सुनकर किशोर मुस्कराकर बोला, "अंधी मुंडकी कैसे

है प्रकाश ! पिताजी ने क्या सब कुछ देख नहीं लिया होगा ? मैं उनके सामने क्या बोल सकता हूं ? उनसे ऊपर होकर तो मैं कुछ नहीं कर सकता।"

"कर क्यों नहीं सकते किशोर ! यह प्रश्न पिताजी के जीवन-साथी का नहीं, तुम्हारे जीवन-साथी का है। अपना जीवन-साथी तुम्हें स्वयं चुनना चाहिए और उसमें पिताजी को कोई हस्तक्षेप भी नहीं करना चाहिए।" प्रकाश सतर्कतापूर्वक बोला।

किशोर ने प्रकाश की बात का कोई उत्तर न दिया। वह अपने पिताजी के निर्णय के विरुद्ध कुछ करने की बात सोच ही नहीं सकता था।

प्रकाश बोला, "पिताजी ने तुम्हारे रिश्ते के लिए धनाढ्य परिवार तो देखा, परन्तु यह नहीं देखा कि तुम्हारी गृहलक्ष्मी कैसी आएगी। वह इस घर में उजाला करती हुई आएगी या अंधेरा। वह यहां की शोभा को चार चांद लगाएगी या उसे फीका कर देगी ? उसके धन से इस घर की शोभा नहीं बढ़ सकती किशोर !"

किशोर अपने मन से अपने मित्र प्रकाश की बात से सहमत था, परन्तु लाचार था वह। संबंध निश्चित हो चुका था और विवाह की तैयारियां होने लगी थीं। दोनों ओर लगभग सब प्रबन्ध हो चुका था, केवल विवाह होना-भर शेष था। अब हो ही क्या सकता था।

विवाह का शुभ मुहूर्त आ गया। किशोर का विवाह खूब ठाट-बाट के साथ हुआ। बाजे-गाजों के साथ शानदार बारात गई और पाणिग्रहण-संस्कार हो गया।

दूसरे दिन वधू-पक्ष ने अपने दान-दहेज का प्रदर्शन किया तो किशोर के पिता की छाती फूलकर कई इंच चौड़ी हो गई। बाराती भी चमत्कृत हो उठे। सामान का अम्बार लगा दिया था। वधू के पिता सेठ दामोदरप्रसाद की यह इकलौती कन्या थी और यही एक कार्य उन्हें जीवन में करना था। उन्होंने हर चीज में जी खोलकर व्यय किया। अपनी ओर से उन्होंने कोई कमी नहीं रहने दी किसी बात की।

किशोर की शादी की प्रशंसा की चारों ओर धूम मच गई। सभीने किशोर के भाग्य की सराहना की। उनके नाते-रिश्तेदारों ने मुक्त कंठ से

प्रशंसा का। किशोर के पिताजी ने सभी नाते-रिश्तेदारों को खूब दे-लेकर अपनी ड्योढ़ी से विदा किया।

किशोर की बहू घर में आई। मुंह-दिखावन की रस्म अदा हुई और एक दिन किशोर को भी अपनी पत्नी को देखने का अवसर मिला तो वह खड़ा का खड़ा ही रह गया। वह अपने मन में अपनी पत्नी के रूप की जो प्रतिमा लिए बैठा था वह नेत्रों के सामने से तिरोहित हो गई। किशोर की बहू का रंग गोरा न होकर सांवला निकला।

उसने मन ही मन कहा, 'धोखा हो गया।' उसने बिना लड़की का देखे शादी करके नितांत मूर्खता की।

वह कुछ व्यथित-सा पलंग पर बैठ गया। उसकी पत्नी विमला ने अपने रूप का अपने पति पर पड़नेवाला प्रभाव बहुत गम्भीर दृष्टि से देखा। उसे समझने में देर न लगी कि उसके सांवले वर्ण को देखकर उसके पति को महान निराशा हुई। वे पता नहीं कैसी-कैसी कल्पनाएं उसके रूप के विषय में अपने मन में लिए बैठे थे। सोच रहे होंगे कि उनकी पत्नी गोरी-चिट्टी होगी और मैं निकली सांवली।

विमला ने देखा कि उसके पति का गुलाब जैसा चेहरा अचानक ही मुरझा गया और उसके ऊपर निराशा की गहरी काली छाया छा गई। उन्होंने जिस उत्साह के साथ कमरे में प्रवेश किया था वह भंग हो गया।

विमला ठगी-सी पलंग के तकिये के सहारे मौन खड़ी रही। उसके नेत्रों से अश्रुधारा बह चली और उसने मन ही मन विधाता से कहा, 'विधाता! तूने सब कुछ तो दिया मुझे, परन्तु गौर वर्ण की तेरे पास इतनी कमी हो गई कि वह तू मुझे न दे सका। मुझे तू गोरा बना देता, और चाहे कुछ भी न देता। मैं कम से कम अपने पति की इतनी महान निराशा का कारण तो न बनती!'

किशोर फिर विमला की ओर न देख सका। वह नेत्र बन्द करके पलंग पर लेट गया। न जाने कितनी देर तक वह उस सब दान-दहेज और दौलत को कोसता रहा जो उसे उसके ससुर ने प्रदान की थी, और अपनी निर्बलता पर भी उसे क्रोध आया कि उसमें क्यों नहीं इतना साहस हुआ कि वह अपने पिताजी से कह देता, "मैं बिना लड़की को देखे अपना विवाह-

संबंध स्वीकार नहीं करूंगा।"

किशोर के जीवन पर घोर निराशा छा गई। उसका विवाह का सब उत्साह भंग हो गया। उसे लगा कि वह ऐसे गहरे गढ़े में गिर पड़ा जिसमें से जीवन-भर निकल नहीं सकता।

विमला पलंग के तकिये के सहारे खड़ी-खड़ी रात-भर अपने भाग्य पर पछताती और रोती रही। उसके जीवन की सब उमंगों पर पानी फिर गया।

सम्पूर्ण रात इसी प्रकार व्यतीत हो गई। एक-दूसरे से एक शब्द भी न बोल सका। दोनों के हृदयों में महान पीड़ा थी। दोनों अपने-अपने दुर्भाग्य पर पछता रहे थे, अपने भाग्य को कोस रहे थे।

विमला ने प्रथम बार घूंघट की ओट से फेरों के समय जब अपने पति किशोर के दर्शन किए थे तो वह अपने आपे में नहीं रही थी। उसने अपने भाग्य की लाख-लाख सराहना की थी और विधाता को लाख-लाख धन्य-वाद दिए थे कि उन्होंने उसे इतना सुन्दर पति प्रदान किया।

कितने उत्साह के साथ वह आज प्रियतम से प्रथम भेंट के लिए यहां एकांत में आई थी और कितनी श्रद्धा के साथ उनके दर्शनों की प्रतीक्षा कर रही थी। उसके मन में आज कितनी उमंग थी, कितना उत्साह था उसके हृदय में।

उसके अपने मस्तिष्क से अपना सांवला वर्ण विस्मृत हो गया था। वह तो अपने पति के रूप पर ही न्योछावर थी। अपने विषय में तो उसने कभी कुछ सोचा-विचारा ही नहीं था।

अब उसे धीरे-धीरे अपनी कमी अनुभव होने लगी थी। उसने निराश मन से अनुभव किया कि सचमुच उसके पास वह रूप नहीं है जो किशोर जैसे सुन्दर युवक को प्रभावित करता। उसके लिए उसके पिता को उसीके वर्ण का पति चुनना चाहिए था। पिताजी ने लड़के के रूप की ओर तो देखा अपनी पुत्री के सांवले वर्ण की ओर उनकी दृष्टि नहीं गई।

वह मन मारकर नितांत अभागिनी-सी मौन किशोर के रूप को निहारती रही और सोचती रही कि इतना सुंदर और गुणवान युवक क्या केवल गोरे रंग-मात्र का ही लोभी है? क्या नारी का एक-मात्र यही गुण है?

दूसरे दिन प्रकाश ने किशोर से अपनी बैठक में बैठकर एकांत में पूछा, "कहो मित्र ! भाभी की लाटरी कैसी खुली ? काली या गोरी, पतली या मोटी। आंखें कैसी हैं : गोल, चिरवां या छोटी। नाक कैसी है : छोटी, नुकीली या दबी हुई।"

किशोर प्रकाश की बात का उत्तर न दे सका। उसने बड़ी ही दीन दृष्टि से प्रकाश की ओर देखा, मानो वह जीवन के इस सबसे बड़े और महत्त्वपूर्ण सौदे में बुरी तरह ठगा गया। किशोर लुट गया। अब जीवन-भर उसे पछताना ही होगा अपनी भूल पर।

किशोर की ऐसा दशा देखकर प्रकाश समझ गया कि किशोर को उसकी इच्छा के अनुरूप पत्नी नहीं मिली। प्रकाश के हृदय पर भी गहरी ठेस लगी। वह दुःखी मन से बोला, "किशोर ! तुमने संकोच ही संकोच में अपने जीवन का उत्साह भंग कर लिया। पिताजी की दृष्टि यह रिश्ता स्वीकार करते समय केवल उनके धन पर रही, उस रत्न को परखने का उन्होंने प्रयास ही नहीं किया जो तुम्हारे जीवन का वास्तविक धन होनेवाला था। तुम जैसे सुन्दर युवक की पत्नी कैसी रूपवती और स्वस्थ होनी चाहिए थी, इसपर उनकी दृष्टि नहीं गई।" इतना कहकर प्रकाश का मन भी उदास हो गया। किशोर के मन की निराशा उसके ऊपर भी छा गई। वह अपनी भाभी को निहायत रूपवती देखना चाहता था।

विवाह की कल्पना करके युवावस्था में जो उमंग युवक और युवती के मन में प्रवेश करती है वह विमला और किशोर दोनों के जीवन से तिरोहित हो गई। दोनों के जीवन को प्रारम्भ में ही घोर निराशा ने घेर लिया। दोनों के दिल उदास हो गए। दोनों का उत्साह भंग हो गया। दोनों के मन मुरझा गए।

किशोर की माताजी ने वधू को देखा। वर्ण कुछ सांवला था उसका, परन्तु नक्श बहुत सुन्दर थे। उन्होंने अपनी वधू के सांवले वर्ण की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। वे अपने मन में संतोष करके किशोर के पिताजी से बोलीं, "किशोर की बहू बहुत सुन्दर है किशोर के पिताजी ! रंग तनिक सांवला अवश्य है, परन्तु नक्श बहुत अच्छे हैं। लड़की बड़ी सरल और अच्छे स्वभाव की प्रतीत होती है। शील और लज्जा के गुणों

से इसके चेहरे पर अद्‌भुत कांति बिखरी हुई है।"

किशोर की माताजी की बात सुनकर किशोर के पिताजी बोले, "रंग से क्या होता है किशोर की मां! लड़की का तो शील ही उसका रूप होता है। विमला के पिताजी मेरे घनिष्ठ मित्र हैं और हमारा यह सौभाग्य है कि उन्होंने अपनी पुत्री विमला के लिए हमारे पुत्र किशोर को चुना। विमला के गुणों से अभी तुम परिचित नहीं हो किशोर की मां! बहुत ही मधुर कंठ है इसका और घर के काम-काज में इतनी निपुण है कि तुम्हें राजगद्दी पर बिठला देगी यह। किशोर जब इसके गुणों से परिचित होगा तो रीझ उठेगा इसपर।"

किशोर की माताजी का मन किशोर के पिताजी से विमला की प्रशंसा सुनकर मुग्ध हो उठा परन्तु विमला के मन पर उसका कोई प्रभाव न पड़ा। काश उसके पति ने उसे पसंद कर लिया होता! आज अपने सास-ससुर के मुख से अपनी प्रशंसा सुनकर उसके हृदय में अमृत की धारा प्रवाहित हो उठी होती! उसका मन-मयूर नृत्य कर उठा होता। परन्तु इस समय उसकी प्रशंसा के ये उनके मीठे-मीठे शब्द उसमें तनिक भी उमंग पैदा न कर सके। उसे केवल-मात्र इतना ही संतोष हुआ कि यहां सभी उसे कुरूप समझनेवाले नहीं हैं। सभीका मन उसकी ओर से कुंठित नहीं है, परन्तु जब इनके पुत्र का मन कुंठित ही बना रहेगा तो इनकी क्या दशा होगी।

किशोर की माताजी को अपने पुत्र किशोर और विमला के पारस्परिक खिचाव को समझने में विलम्ब न हुआ। किशोर कई दिन तक पढ़ाई का बहाना करके प्रकाश के ही घर पर सोता रहा। अपने घर पर आना ही उसने बन्द कर दिया।

इधर विमला का मन भी हर समय उदास-सा रहने लगा तो किशोर की मां ने एक दिन किशोर को बुलाकर एकांत में कहा, "बेटा किशोर! हम लोग तुम्हारे मां-बाप हैं। तुम्हारे हित और अहित को हम तुमसे कहीं अधिक समझते हैं। तुम्हारे जीवन में सुख और शांति रहे, हम सब काम इसी दृष्टि से करते हैं। हमने जीवन का इतना लम्बा समय इस दुनिया में व्यतीत करके दुनिया को तुमसे अधिक गहराई के साथ देखा और परखा है। हम दुनिया को तुमसे बहुत अधिक समझते हैं।

"मेरी पुत्रवधू बाज़ारों में आवारा सिर फिकारे घूमनेवाली तितली नहीं खोजी है तुम्हारे पिताजी ने। उन्होंने इस परिवार के सुयोग्य गृहिणी खोजी है। पत्नी का ऊपरी रूप मैं यह नहीं कहती कि कोई चीज ही नहीं है, परन्तु उसका वास्तविक रूप उसके गुण होते हैं। मेरी पुत्रवधू उन सभी गुणों की खान है किशोर! और उसका ऊपरी रूप भी कुछ कम नहीं है। तुम्हारी दृष्टि उसके सांवले वर्ण से टकराकर ही कुंठित हो उठी है। उसके सांवले वर्ण में कितना सौंदर्य भरा पड़ा है यह देखने का तुमने प्रयास ही नहीं किया।

"विमला तुम्हारी गृहलक्ष्मी है। गृहलक्ष्मी का निरादर करना बहुत बुरी बात है बेटा! तुम एक योग्य पिता की योग्य संतान हो। तुम्हारे ऐसा व्यवहार करने से तुम्हारे परिवार के नाम को बट्टा लगता है।"

किशोर ने अपनी माताजी के शब्द बहुत शांतिपूर्वक, अपने हृदय की व्यापक पीड़ा को दबाकर सुने, परन्तु उसके मुख पर प्रसन्नता की आभा न छिटक सकी। उसके मन पर उसकी पत्नी की कुरूपता की जो गहरी छाया छा गई थी उसे चीरकर उसका मन अपनी पत्नी की अन्तरात्मा में प्रवेश न कर सका। उसके नेत्रों के सम्मुख विमला की वही काली छाया घूमती रही। वह कुछ व्याकुल-सा हो उठा। उसका मन मलिन-सा हो गया।

उसने अपनी माताजी की बात का कोई उत्तर नहीं दिया। किशोर की माताजी ने भी प्रसंग को इस समय और आगे बढ़ाना उचित नहीं समझा। वे मौन हो गईं।

तभी प्रकाश आ गया और किशोर से बोला, "आज पुलिस क्लब से फुटबाल का मैच है किशोर! तुम शायद भूल ही गए। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहा और जब देखा कि तुमने करवट ही नहीं ली तो सोचा कि चलूं तुम्हें घर से ही लेता चलूं। चलो, शीघ्रता करो; चार बज चुके हैं। ठीक साढ़े चार बजे मैच प्रारम्भ हो जाएगा। आज पुलिस क्लब को पांच गोल से नहीं हराया तो कोई बात नहीं।"

प्रकाश को देखकर किशोर उठ खड़ा हुआ और तुरन्त जाकर मैच में खेलने के लिए चलने को उद्यत हो गया। उसने उठकर अपने खेल के वस्त्र पहन लिए और फिर अपना फुटबाल-शू पहना। दोनों मित्र साथ-साथ

मैच खेलने के लिए चले गए।

विमला अन्दर कमरे में बैठी थी परन्तु उसके कान यहीं पर थे। उसके हृदय में अपनी सास के प्रति अगाध श्रद्धा उत्पन्न होती जा रही थी। उनके मुख से निकलनेवाला एक-एक शब्द उसके कानों में अमृत की वर्षा कर रहा था। उसके पति को समझाने के लिए उन्होंने जो कुछ कहा उसे सुनकर विमला को महान आत्मसंतोष हुआ। उसे विश्वास होने लगा कि विधाता ने यदि चाहा तो किसी दिन अवश्य ही उसके पति उसके गुणों पर रीझ उठेंगे।

विमला ने दृढ़ संकल्प कर लिया कि वह निश्चय ही एक दिन अपने शील और गुणों के प्रभाव से अपने पति के हृदय में स्थान बना लेगी।

प्रकाश और किशोर चले गए तो किशोर की माताजी ने धीरे से पुकारा, "बहूरानी ! तुम अकेली कहां बैठी हो, यहां आ जाओ मेरे पास।"

विमला कमरे से उठकर अपनी सास के पास आ गई। तभी पास-पड़ोस की कुछ बहू-बेटियां आकर एकत्र हो गई। वे सब नई बहू को देखने के लिए आई थीं।

विमला उन सबमें बैठकर बातें करने लगी और अपने विक्षुब्ध मन को सांत्वना देने लगी। तभी पड़ोस की एक बहू सरोज वहां आ गई और उसपर विमला की दृष्टि गई तो उसका मन मलिन-सा हो उठा।

विमला को स्मरण हो आया कि जिस दिन वह वधू बनकर इस घर में आई थी और मुंह-दिखावन की रस्म अदा हुई थी तो सर्वप्रथम सरोज ने ही उसका घूंघट खोला था। विमला का मुख देखकर सरोज ने होंठ बिचका दिए थे और इठलाकर अलग जा खड़ी हुई थी। सरोज के उस होंठ बिचकाने को विमला विस्मरण नहीं कर सकी थी।

सरोज का वह होंठ बिचकाना किशोर की माताजी ने भी देखा था। उनके हृदय में सरोज के होंठ बिचकाने ने महान पीड़ा उत्पन्न की थी। वे सरोज को बड़ा स्नेह करती थीं परन्तु अपनी पुत्रवधू के प्रति उसका यह व्यवहार देखकर उनका हृदय दुख गया था। उन्होंने किशोर के पिताजी से अपनी पुत्रवधू के मधुर कंठ की प्रशंसा सुनी थी। आज उसी पहलू पर

लाकर वे सरोज का गर्व खंडित कर देना चाहती थीं।

किशोर की माताजी बड़े सरल और प्रेमपूर्ण शब्दों में बोलीं, "सरोज रानी ! इधर बहुत दिन से हमने तुम्हारा गाना नहीं सुना। मैंने किशोर की बहू से तुम्हारे संगीत की प्रशंसा की तो यह बोली कि यह भी अपनी जीजी का संगीत सुनने की बहुत इच्छुक है। आज अपना मधुर संगीत सुनाओ बहूरानी को !"

सरोज के रूप और संगीत का मुहल्ले की बहू-बेटियों पर बड़ा रोब था। दूसरों की बहू-बेटियों पर अपने गुणों की छाप बिठलाने में सरोज प्रवीण भी बहुत थी। वह मुस्कराकर बोली, "आज तो मैं किशोर की बहू का गाना सुनने आई हूं मांजी ! विमला अपना गाना सुनाने का वायदा करे तो मैं अभी सुनाती हूं।"

किशोर की माताजी बोलीं, "तुम सुनाओ सरोज रानी ! विमला भी सुनाएगी। तुम्हारे जैसा मधुर संगीत तो वह क्या सुना सकेगी परन्तु फिर भी जैसा टूटा-फूटा इसे आता है यह अवश्य सुनाएगी।"

सरोज को अपने संगीत पर अभिमान था। वह तुरन्त हारमोनियम लेकर गाने बैठ गई। सरोज ने गाना एक अनोखी अदा के साथ गाया जिसे सुनकर मुहल्ले की स्त्रियां मुग्ध हो उठीं।

सरोज ने संगीत समाप्त किया तो विमला मुस्कराकर बोली, "जीजी को मालूम देता है सिनेमा देखने का बहुत शौक है। इसीलिए सिनेमा का गीत सुनाया। परन्तु यह कोई संगीत नहीं है। कोई शास्त्रीय संगीत सुनाइए। आप जैसी सुन्दर रूपवती के कंठ से यह संगीत शोभा नहीं देता।"

इतना कहकर विमला अन्दर घर में जाकर अपनी वीणा उठा लाई और उसे सरोज की ओर करके बोली, "लो जीजी ! वीणा पर शास्त्रीय संगीत सुनाओ। हारमोनियम पर गाने से आपकी आवाज़ फट जाती है। संगीतज्ञ लोग हारमोनियम को सबसे निकृष्ट साज़ मानते हैं। कोई अच्छा गायक कभी हारमोनियम पर गाना पसंद नहीं करेगा। आपको भी इसपर नहीं गाना चाहिए जीजी !"

विमला की सरल वाणी सुनकर उसकी सास का मन अन्दर ही अन्दर मुग्ध हो उठा। उसको अपनी मानसिक पीड़ा में मूहान सांत्वना मिली।

सरोज विमला की बात सुनकर स्तब्ध रह गई । वह बेचारी भला शास्त्रीय संगीत क्या जाने और क्या जाने वीणा जैसे साज़ को बजाना। उसने तो यूंही एक कथावाचक हारमोनियम वाले से कुछ गाने सीख लिए थे और फिर प्रयास करके कुछ सिनेमा के गाने हारमोनियम पर निकालने लगी थी। उन्हींको गाकर वह मोहल्ले की स्त्रियों में संगीतज्ञ बन गई थी।

सरोज तनिक लजाकर बोली, "मुझे वीणा पर गाना नहीं आता विमला !"

विमला मुस्कराकर बोली, "लाओ जीजी, मैं सुनाती हूं तुम्हें।" और इतना कहकर विमला ने वीणा बजानी प्रारम्भ की। विमला की वीणा का मधुर स्वर वहां के वातावरण में भरा तो सब स्त्रियां मंत्रमुग्ध हो गईं और फिर उसने गाया :

"मीरा के प्रभु गिरिधर नागर,
दूसरो न कोई।..."

विमला का संगीत सुनकर मुहल्ले की स्त्रियों के मुख विमला की प्रशंसा से भर उठे और सरोज का आज ऐसा मानमर्दन हुआ कि उसकी समस्त संगीत-कला पर पानी फिर गया। सरोज को विमला की कला-कारिता के समक्ष अपना रूप फीका-फीका प्रतीत होने लगा।

तभी विमला ने सरोज के मान का मर्दन करने के लिए एक और ठेस लगाई और मुस्कराकर बोली, "सरोज जीजी ! सुना है आप बहुत सुन्दर नृत्य करना जानती हैं।"

सरोज लजाकर बोली, "विमला बहिन ! मुझे क्या नृत्य आता है ? मैं तो यूंही विवाह-शादियों में मन-बहलावे के लिए नाच लेती हूं।"

सरोज की दीन वाणी सुनकर विमला का मस्तक ऊंचा हो गया। उसके सांवले-सलोने रूप पर सरोज की दृष्टि गई तो वह चकित रह गई। उसने ऊपरी तौर पर विमला के वर्ण को देखकर होंठ बिचका दिए थे। परन्तु आज जब उसने विमला के नक्श देखे तो वह उसके रूप की प्रशंसा किए बिना न रह सकी।

सरोज के नेत्र विमला के नृत्य को देखने के लिए उतावले हो उठे थे। उसके कानों में अभी तक विमला का संगीत-स्वर भरा हुआ था और उसकी

मिठास से उसका मानस भी मीठा हो उठा था। वह विमला के गुणों पर रीझती जा रही थी। बोली, "विमला बहिन, मैं तुम्हारा नृत्य देखने को उतावली हो उठी हूं।"

विमला की सास ने मुहल्ले-भर की स्त्रियों पर अपनी पुत्रवधू का कलाकारिता की छाप लगती देखकर विमला से कहा, "बहूरानी! नृत्य दिखलाओ। सरोज की बात तुम कभी न टालना। सरोज रानी मुझे बहुत प्रिय है।"

विमला ने फिर अपना वही प्रिय संगीत दुहराया :

"मीरा के प्रभु गिरिधर नागर
दूसरो न कोई।....."

और फिर वीणा को एक ओर रखकर राधिका का वह मनोरम नृत्य दिखलाया कि स्त्रियां वाह-वाह कर उठीं। सरोज तो इतनी मुग्ध हुई कि खड़ी होकर विमला से लिपट गई और मुक्त कंठ से बोली, "माताजी! ये तो राजरानी मीरा आ गईं आपकी पुत्रवधू बनकर।"

और फिर मुहल्ले की सब स्त्रियों के समक्ष अपने मन का चोर प्रकट करके विमला से बोली, "विमला बहिन! मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया है। तुमने चाहे देखा हो या न देखा हो, मैंने जब प्रथम बार तुम्हारा मुंह देखा और तुम्हारे वर्ण पर मेरी दृष्टि गई तो मैंने होंठ बिचका दिए। सच बात यह थी कि मुझे तुम्हारा रूप वैसा नहीं जंचा जैसा मैं अपने देवर किशोर की पत्नी के लिए आवश्यक समझती थी। परन्तु अब तुम्हारे गुणों का देखकर वह रूप की कल्पना ही मेरी आंखों के सामने से हट गई।"

सरोज की स्पष्ट बात सुनकर मुहल्ले की स्त्रियां तो हंस पड़ीं, परन्तु विमला के मन में उसकी स्पष्टवादिता के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई।

विमला की सास ने सरोज को अपनी अंक में भरकर कहा, "सरोज रानी! नारी का रूप केवल उसका गौरवर्ण होना ही नहीं होता। मैं अपना भाग्य मानती हूं कि जो मुझे विमला जैसी सुशील और गुणवती लड़की अपनी पुत्रवधू के रूप में विधाता ने दी।"

आज विमला का सही रूप मुहल्ले की स्त्रियों ने देखा तो सभीने जाकर अपने आसपास में उसके रूप और गुणों की प्रशंसा की।

विमला के प्रति मुहल्ले की स्त्रियों में उसके मुंह-दिखावन के दिन जो वातावरण बना था उसे आज की चर्चा ने एकदम धोकर साफ कर दिया।

यह हवा मुहल्ले में फैली तो वे स्त्रियां भी जो कभी किसीके घर नहीं जाती थीं, विमला को देखने के लिए आईं और सभीने उसके सांवले रूप की मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

सरोज ने आज विमला के सही रूप के दर्शन किए। उन्होंने देखा कि सचमुच विमला के सांवले वर्ण के अन्दर एक अलौकिक सौंदर्य छिपा था। विमला के कंठ का मधुर स्वर उनके कानों में भरा हुआ था और उसने उनके हृदय को प्रभावित किया था। इतना मधुर संगीत सरोज ने पहले कभी नहीं सुना था। सिनेमा इत्यादि में जो उथले और छिछले गाने उन्होंने सुने थे वे सब उन्हें विमला के संगीत के समक्ष हेय प्रतीत हुए। उन्होंने स्नेह-भरी दृष्टि से विमला की ओर देखा और विमला की प्रशंसा से भरा हुआ हृदय और मस्तिष्क लेकर आज वे अपने घर लौटीं।

४

संगीत-समारोह से लौटकर किशोर और प्रकाश दोनों किशोर के घर चले गए। दोनों को किशोर की माताजी ने पास-पास बिठलाकर भोजन कराया और भोजन करके प्रकाश अपने घर लौटा।

प्रकाश के मन में अपने कहे गए उन शब्दों के प्रति बार-बार पश्चात्ताप घुमड़-घुमड़कर आ रहा था जो अनायास ही उसकी ज़बान से निकल गए थे। उसके उन शब्दों ने किशोर के हृदय पर गहरा आघात किया था। प्रकाश का मन तो बेचैन हो उठा था उन्हें उच्चारण करने के पश्चात् ही, परन्तु क्षमा भी वह न मांग सका क्योंकि क्षमा मांगने का अर्थ था अपनी बात से गिर जाना। परन्तु उसका मन बहुत दुखी था। उसने अपने मित्र ही नहीं बड़े भाई और भाभी के प्रति ऐसे शब्दों का प्रयोग किया, जिन्हें प्रयोग करने का उसे कोई अधिकार न था।

वह दुःखी मन से सीधे ज़ीने पर चढ़कर अपने कमरे में पहुंच गया।

सरोज भाभी ने, जो प्रकाश के मकान में किराये पर रहती थीं, प्रकाश को इस प्रकार मन मारे ऊपर जाते देखा तो वह भी मुस्कराती हुई उसके पीछे ही पीछे उसके पास पहुंच गईं।

सरोज ने अपने स्नेह से प्रकाश के मन में सगी भाभी जैसा स्थान बना लिया था और प्रकाश उनके पति बाबू ब्रिजकिशनजी का बड़े भाई के समान आदर करता था।

सरोज भाभी के पास दो घड़ी बैठकर प्रकाश अपने हृदय के दर्द को भूल जाता था। उनका स्नेह प्राप्त करके उसने कुछ ही दिनों में अपने जीवन के अभावों को भुला दिया था और सच भी यही था कि सरोज भाभी प्रकाश का पूरा-पूरा ध्यान रखतीं थीं। उसे अपने सगे देवर के समान पास बैठाकर भोजन कराती थीं। और ध्यान रखती थीं कि प्रकाश को अपने माता-पिता का अभाव महसूस न हो। प्रकाश घर में प्रवेश करता था तो वे 'लालाजी, लालाजी,' की झड़ी लगा देती थीं। प्रकाश अनुभव करने लगता था कि उसका घर भरा-पूरा है, सूना नहीं। सरोज बोली, "इतने उदास-से क्यों हो लालाजी ?"

"कोई विशेष बात नहीं, यूंही मन तनिक खिन्न-सा हो गया भाभी।"

"कोई बात तो अवश्य है।" सरोज भाभी बोलीं, "इतना उदास तो पहले कभी नहीं देखा मैंने तुम्हें।"

"आज मुझसे एक भूल हो गई भाभी।" प्रकाश बोला।

"ऐसी क्या भूल बन पड़ी लालाजी से ! तनिक मैं भी तो जान लूं उसे ?"

प्रकाश अन्यमनस्क ढंग से बोला, "कुछ नहीं भाभी ! पता नहीं कैसे मेरी जबान से कुछ ऐसे शब्द निकल गए कि जिन्होंने मेरे मित्र किशोर के हृदय को ठेस पहुंचाई। मुझे ऐसे शब्द उच्चारण नहीं करने चाहिए थे। मैंने आज जीवन में बहुत बड़ी भूल की।"

सरोज ने मुस्कराकर पूछा, "ऐसे क्या शब्द निकल गए तुम्हारी जबान से लालाजी कि जिन्होंने बेचारे किशोर बाबू का दिल तोड़ डाला ?"

प्रकाश ने सरोज के चेहरे पर देखा तो उसके बिखरे हुए रूप पर उसके नेत्र उलझकर रह गए। वह बोल नहीं सका एक शब्द भी। उसकी वाणी

कंठ में ही रुककर रह गई।

सरोज ने सरस वाणी में पूछा, "क्या अपनी भाभी से भी छिपाने की कोई बात है लालाजी ?"

"नहीं भाभी !" प्रकाश बोला, "मेरी हार्दिक इच्छा यह थी कि मेरे मित्र की पत्नी ऐसी ही रूपवती हो जैसी आप हैं। परन्तु किशोर के पिताजी ने धनाढ्य घराना देखकर किशोर का विवाह एक ऐसी लड़की से कर दिया जो काली है। जिसे देखकर किशोर का मन खिन्न हो गया और उसके जीवन में निराशा का अन्धकार छा गया। उसे अपनी पत्नी को देखकर घोर निराशा हुई। आज संध्या को मेरे मुख से किशोर की पत्नी के लिए 'काली-कलूटी' शब्द का प्रयोग हो गया। बड़ा भारी अनर्थ हो गया भाभी ! मुझे इन शब्दों का प्रयोग करने का कोई अधिकार नहीं था। मुझे किसी भी दशा में ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए था।"

सरोज का मन प्रकाश की बात सुनकर पहले तो गुदगुदा उठा। उनके रूप की कितनी बड़ी प्रशंसा प्रकाश ने की और कितना अनुपम उसने उसे समझा कि उसीके अनुरूप रूपवती पत्नी की आकांक्षा वह अपने मित्र किशोर की पत्नी के लिए करने लगा। उनका यौवन झंकृत हो उठा। उनके रूप पर और भी दमदमाहट आगई। उनके हृदय में प्रकाश के प्रति स्नेह उमड़ आया। उनके नेत्र स्नेहावेश में सजल हो उठे।

परन्तु तुरन्त ही किशोर की पत्नी विमला के लिए प्रयुक्त शब्द जो उनके कानों में पड़े तो वह तिलमिला-सी उठीं। वह आज विमला के ऊपर अपने रूप और गुणों की छाप बिठलाने उसके घर गई थीं। परन्तु वहां उन्हें अपने रूप और गुणों से कहीं अधिक निखरा हुआ रूप और गुण विमला में देखने को मिला। सरोज की सरल और निर्मल प्रकृति उनका स्वागत किए बिना न रह सकी।

उन्होंने मुक्त कण्ठ से उसकी प्रशंसा की और सरोज की प्रशंसा का प्रभाव मुहल्ले-भर की स्त्रियों पर पड़ा। उनके निर्णय पर अपना विपक्षी निर्णय देने का किसी स्त्री में साहस नहीं था।

सरोज भाभी सरल प्रकृति से बोलीं, "यह तो सचमुच लालाजी तुमसे अनायास ही बहुत बड़ा अन्याय हो गया, परन्तु यह आधारित किशोर बाबू

की उस सूचना पर ही है जो उन्होंने अपनी पत्नी के विषय में तुम्हें दी।

"सत्य यह है कि किशोर बाबू ने अपनी पत्नी के रूप और गुणों को अभी देखा ही नहीं। उन्होंने उच्छृंखल प्रवृत्ति से विमला का केवल वर्ण-मात्र ही देख पाया। उसके सांवले-सलौने रूप तक उनकी दृष्टि नहीं पहुंच सकी और उसके गुणों को तो जानने का उन्होंने प्रयास ही नहीं किया। किशोर बाबू को पत्नी-स्वरूप एक देवी मिली है प्रकाश लालाजी!"

सरोज भाभी की बात सुनकर प्रकाश स्तब्ध रह गया। वह समझ ही न पाया कि आखिर वह कैसा रूप है जिसकी सरोज भाभी ने इतनी प्रशंसा कर डाली।

अभी दस दिन पूर्व इन्हीं सरोज भाभी से जब प्रकाश ने किशोर की पत्नी के रूप-सौन्दर्य के विषय में पूछा था तो इन्होंने होंठ बिचका दिए थे और इनके नेत्रों में उपेक्षा भर उठी थी। परन्तु आज उसका दूसरा ही रूप समक्ष था।

तभी सरोज भाभी कह उठीं, "यही भूल मुंह-दिखावन के दिन मैंने भी की थी लालाजी। परन्तु आज मुझे अपनी उस भूल के लिए विमला के समक्ष क्षमा-याचना करनी पड़ी।"

प्रकाश के नेत्र सरोज भाभी के मुख पर पड़कर अपलक हो गए। वह बोला, "भाभी, तुम सचमुच बड़ी महान हो। अपनी भूल को स्वीकार करके आपने क्षमा-याचना करली। परन्तु मेरी धृष्टता देखिए कि मैं क्षमा-याचना भी न कर सका।"

सरोज मुस्कराकर बोली, "विमला बड़ी सरल और गुणवती लड़की है लालाजी! उसका कण्ठ बड़ा मधुर है। वह संगीतकला और नृत्यकला में निपुण है। आज मैंने उसका संगीत सुना और नृत्य देखा तो आत्मा प्रसन्न हो गई। नृत्य करती है तो राजरानी मीरा जैसी प्रतीत होती है। उसके मन मोहनेवाले सौन्दर्य का क्या वर्णन करूं तुमसे।"

सरोज इतना कहकर बाबू ब्रिजकिशनजी के पास चली गईं और प्रकाश अकेला अपने कमरे में बैठा रह गया। वह आज बहुत देर तक अपने मित्र किशोर की पत्नी के विषय में सोचता रहा और सोचता रहा कि यदि सरोज भाभी जो कुछ कह रही हैं, वह सत्य है तो किशोर ने वास्तव में

अपनी पत्नी के साथ बहुत अन्याय किया। किशोर में अपनी पत्नी के गुणों को परखने की क्षमता होनी चाहिए।

वह यह सब सोच ही रहा था कि तभी सरोज भाभी फिर मुस्कराती हुई प्रकाश के पास आ गई और बोलीं, "लालाजी, आज एक बात कहने आई हूं तुमसे।"

"कहो भाभी!" प्रसन्नमुद्रा में प्रकाश ने कहा।

सरोज भाभी बोलीं, "अब तुम भी अपना विवाह कर डालो लालाजी! यह घर सूना-सूना अच्छा नहीं लगता।"

प्रकाश प्रसन्न मुद्रा में बोला, "भाभी, आपके रहते भला यह घर सूना कैसे है? आप सच जानें कि जब आप यहां नहीं थीं तो मेरा यहां एक क्षणके लिए भी मन नहीं लगता था। मैं यहां बहुत कम ठहरता था। परन्तु जब से आप आई हैं तो मेरा मन यहां लगने लगा है।"

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "लालाजी! विवाह कर लो, फिर देखना कि इस घर से बाहर जाने का मन ही नहीं होगा तुम्हारा। बाहर जाते-जाते रुक जाया करोगे, घर की देहली से बाहर निकलकर फिर वापस लौट आया करोगे और तुम देखोगे कि अपनी सुन्दर पत्नी का मुख देखने की आकांक्षा तुम्हारे हृदय में हर समय बनी ही रहेगी।"

प्रकाश मुस्कराकर बोला, "तो भाभी अपनी जैसी ही कोई सुन्दर-सी बहू खोजकर ला दो मेरे लिए भी। परन्तु पढ़ी-लिखी होनी चाहिए।",

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "ऐसी सुन्दर बहू लाकर दूं अपने लालाजी को कि लालाजी भी मुग्ध हो उठें। इधर तुम एम० ए० में पढ़ रहे हो और वह वकालत में। दोनों की जोड़ी बहुत सुंदर रहेगी।"

प्रकाश बोला, "क्या सच भाभी! क्या वह आपके ही समान रूपवती है? आपसे तनिक भी उन्नीस हुई तो मैं रिश्ता स्वीकार नहीं करूंगा।"

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "मुझसे भी अधिक सुंदर लालाजी! मैं तो कुछ भी नहीं हूं उसके सम्मुख और तुम स्वयं देख लेना उसे। वह ऐसी लड़की नहीं है कि जिसे तुम देख न सको। खरे सोने को दिखाने में किसे संकोच होगा?"

सरोज भाभी की बात सुनकर प्रकाश के मन में गुदगुदी-सी पैदा होने

लगी। अपनी पत्नी के रूप की जो कल्पना उसने की थी उसे सरोज भाभी द्वारा प्रस्तावित लड़की के अन्दर वही रूप दिखाई देने लगा।

प्रकाश बोला, "तो कब दिखलाओगी भाभी! उस लड़की को?"

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "बहुत शीघ्र दिखलाऊंगी अपने लालाजी को।"

इतना कहकर सरोज भाभी चली गई और प्रकाश उस लड़की के विषय में सोचता रहा। वह सोचता रहा कि कहीं वह भी वैसी ही सुन्दर न हो जैसी किशोर की पत्नी की अभी-अभी सरोज भाभी प्रशंसा कर रही थीं कि जिसके रूप और गुणों को परखने में इन्हें इतना समय लगा और किशोर अभी तक न समझ पाया।

नारी का गुणवान होना आवश्यक है, परन्तु रूप भी एकदम भुला देने की वस्तु नहीं है। गुणों का सुख मन को प्राप्त होता है और रूप का नेत्रों को। केवल गुणों के आधार पर ही यदि पत्नी का चयन कर लिया जाए तो नेत्र बेचारे जीवन-भर तरसते ही रह जाएंगे।

नेत्रों का सुख भी एक अनोखी ही वस्तु है। वह नारी के प्रति आकर्षण की प्रथम सीढ़ी है। उसीपर चढ़कर उसके मन-मंदिर को निरखा और परखा जा सकता है। पुरुष यदि पहली ही सीढी पर न चढ़ पाया तो मन तक पहुंचना ही उसके लिए असंभव हो जाता है। नारी का यह प्रभाव पुरुष के जीवन में सर्वदा अशांति बनाए रखता है और इसके अभाव में नारी के सब गुण फीके-फीके दिखलाई देने लगते हैं।

फिर उसे ध्यान आया कि सरोज भाभी ने अभी-अभी कहा था कि वह उनसे भी अधिक सुन्दर है। भाभी झूठ नहीं बोल सकतीं मुझसे। वे मुझे धोखा भी नहीं दे सकतीं और फिर जब उन्होंने दिखलाने की बात कह दी है तो झूठ और धोखे का प्रश्न ही नहीं उठता।

प्रकाश का गोरा और स्वस्थ बदन विशेष आकर्षण की वस्तु थी। उसके विवाह के लिए भी उसके पास अनेकों प्रस्ताव आ चुके थे। एक से एक धनी रिश्ते को वह रिजेक्ट कर चुका था। सुन्दर से सुन्दर लड़कियों के चित्रों को भी देखकर उसने उनमें कुछ न कुछ दोष निकाल दिया था।

परन्तु आज प्रकाश की जाने क्यों ऐसी दशा हो गई। भाभी के तनिक

से कहने पर प्रकाश का मन उस लड़की को देखने के लिए उतावला हो उठा और उसके नेत्र उस सुन्दरी के दर्शन करने को व्याकुल हो गए।

प्रकाश को अपनी इस दुर्बलता पर तनिक क्रोध-सा भी आ गया। उसने मन ही मन कहा, 'मैंने भाभी के सम्मुख आज अपना बहुत ही दुर्बल स्वरूप प्रस्तुत किया। मुझे ऐसा कदापि नहीं करना चाहिए था। भाभी भी भला क्या सोचती होंगी अपने मन में। कहती होंगी कि मैं शादी के लिए कितना उतावला हुआ बैठा हूं। तनिक-सा एक प्रस्ताव सम्मुख आया और मैं उतावला हो उठा उसके लिए। उसकी समझ में न आया कि वह इतना दुर्बल कैसे हो गया। ऐसे-ऐसे न जाने कितने प्रस्ताव आ चुके हैं। बाबू मनोहरलाल की लड़की में क्या कमी थी? ज़रा-सा मस्सा ही तो था उसके गाल पर; जिसे मेरे नेत्र सहन न कर सके। लाला बालमुकुन्द की लड़की कैसी विदुषी और सुन्दर थी। केवल दो दांत उसके कतार में नहीं थे। साधारण-सा दोष था परन्तु उसे भी मैं सहन न कर सका। श्री जीवनरामजी की लड़की को ज़रा छोटी नाक के कारण मुझे रिजेक्ट करना पड़ा। बाबू ब्रिजकिशोर की लड़की की बायीं आंख में तनिक-सा दोष था, वैसे रूप उसका कितना प्रशंसनीय था। मैंने उसे भी पसंद नहीं किया। यदि इन्हींके समान कोई दोष सरोज भाभी की बतलाई हुई लड़की में भी निकल आया तो मुझे इसे भी रिजेक्ट करना होगा। मैं एकदम अनूठी ही लड़की का रिश्ता स्वीकार कर सकता हूं।'

प्रकाश ने गर्व के साथ आरामकुर्सी के तकिये से कमर लगाकर अपने-आप से ही कहा, 'प्रकाश बाबू देखती आंखों मक्खी नहीं निगल सकते। परमात्मा की प्रदान की हुई अपनी दो मोटी-मोटी आंखों का वे पूरी सतर्कता के साथ अपनी पत्नी के चुनाव में प्रयोग करेंगे।'

यह सोचकर प्रकाश कुर्सी से खड़ा होकर अपने कमरे में इधर से उधर घूमने लगा। जब घूमते-घूमते पर्याप्त समय हो गया तो वह अपने पलंग पर जाकर लेट गया।

आज बहुत देर तक प्रकाश को नींद नहीं आई। सरोज भाभी का रूप उसके सम्मुख आकर खड़ा हो गया और फिर उसने देखा कि उसमें और निखार आ गया। वह रूप सरोज भाभी के रूप से कहीं अधिक आकर्षक

प्रतीत हुआ प्रकाश को। प्रकाश मुग्ध हो उठा उसे देखकर। वह कल्पित रूप प्रकाश के नेत्रों में समा गया।

रूप की इसी मनोरम प्रतिमा को अपने हृदय और मस्तिष्क में स्थापित करके जाने कब प्रकाश को नींद आई, उसे पता ही न चला। वह जब तक जागता रहा रूप की वही प्रतिभा उसकी आंखों के सम्मुख खड़ी मुस्कराती रही।

५

आज प्रातःकाल प्रकाश बहुत सवेरे उठा और नित्यकर्म से निवृत्त होकर किशोर के घर पहुंच गया।

किशोर की माताजी को प्रकाश सादर प्रणाम करके बोला, "माताजी ! किशोर कहां है ?"

"अभी आता है बेटा ! वह तुमसे पहले तैयार बैठा है परीक्षा-फल देखने के लिए तुम्हारे साथ जाने को। मुझसे कहकर गया है कि प्रकाश आए तो बिठाना।"

"परन्तु गया कहां है वह माताजी ?" प्रकाश ने पूछा।

"यहीं पास के हलवाई की दूकान से जलेबियां लेने गया है। तुम क्या जानते नहीं हो कि किशोर को गर्म जलेबियां खाने का कितना शौक है।"

प्रकाश मुस्कराकर शिकायत की जैसी मुखाकृति बनाकर बोला, "हां देखो तो माताजी ! किशोर ने मेरी भी आदत बिगाड़ डाली। मुझे भी गर्म जलेबियां खाने का शौक डाल दिया इसने। और माताजी, अब यह किशोर भाभी को भी यही शौक डालने का प्रयास कर रहा होगा।"

प्रकाश की बात सुनकर किशोर की माताजी को हंसी आ गई।

प्रकाश ने ध्यान से किशोर की पत्नी के महीन घूंघट में से दृष्टि गड़ाकर देखा तो उसके दांतों की पंक्ति भी कुछ खुल गई थी। उसका चेहरा भी मुस्करा उठा था।

प्रकाश के हृदयमें हिलोर-सी उठ गई भाभी की हंसी और मुस्कराहट को

देखकर।

तब तक किशोर जलेबियां लेकर आ गया और प्रकाश से बोला, "तुम आ गए प्रकाश! न आते तो मुझे अभी तुम्हें बुलाने के लिए जाना होता।"

प्रकाश हंसकर बोला, "क्या मेरे आने में तुम्हें अब भी कोई संदेह है?"

किशोर की माताजी ने चटाई बिछाकर दोनोंको उसपर बिठलाया और फिर दो तश्तरियों में गर्म जलेबियां और दो गिलासों में दूध भरकर दोनों को परोसकर कहा, "तुम दोनों का मुंह मीठा करके भेज रही हूं। दोनों आकर अपनी माता के कानों में अपने पास होने की मीठी-मीठी शुभ सूचना डालना।"

प्रकाश छाती फुलाकर बोला, "हम दोनों पास होंगे माताजी! इस वर्ष हमने बहुत परिश्रम किया है।"

"तुम्हारी कामना सफल हो बच्चो! तुम दोनों जीवन में उन्नति करो और फलो-फूलो।" माताजी ने आशीर्वाद दिया।

माताजी का आशीर्वाद प्राप्त कर दोनों मित्रों के मन फूल जैसे खिल उठे। दोनों के हृदय आनंद और उत्साह से भर गए।

किशोर की मोटर में बैठकर दोनों मित्र हिन्दुस्तान टाइम्स कार्यालय पर पहुंच गए।

वहां और भी कुछ विद्यार्थी पहुंचे हुए थे। ज्योंही अखबार छपकर बाहर आया, छात्रों ने उसे झट ही खरीद लिया। सबने रोलनम्बरोंवाला पन्ना निकाला और अपने-अपने रोलनम्बर खोजने प्रारम्भ किए।

प्रकाश और किशोर ने भी दो पत्र खरीद लिए और रोलनम्बरोंवाला पन्ना उलटकर उसमें अपने रोलनम्बर खोजने प्रारम्भ किए। क्षण-भर में ही दोनों के नम्बर पत्र में मिल गए। प्रकाश प्रथम श्रेणी में पास हुआ और किशोर द्वितीय श्रेणी में।

दोनों मित्र प्रसन्नचित्त घर लौटे और किशोर की माताजी को अपने पास होने का शुभ संवाद दिया। माताजी के हर्ष का पारावार न रहा।

विमला ने भी अपने पति के परीक्षा में उत्तीर्ण होने का समाचार सुना

तो वह मुग्ध हो उठी।

किशोर की माताजी ने दोनों बच्चों के पास होने की प्रसन्नता में तय दस रुपये की मिठाई पास-पड़ौस के घरों में भिजवाने के लिए मंगवाई। घर में मंगल छा गया।

तभी किशोर के पिताजी भी अखबार हाथ में लिए अन्दर आकर सहर्ष बोले, "किशोर की माताजी! तुम्हारे दोनों पुत्र पास हो गए और प्रकाश फर्स्ट डिवीज़न में पास हुआ है। इनका मुंह मीठा कराओ। और बहूरानी को भी मिठाई खिलाओ,उसके पति और देवर प्रकाश दोनों विश्वविद्यालय की सर्वोच्च परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं।"

किशोर के पिताजी की बात सुनकर किशोर की माताजी सहर्ष बोलीं "आपके लाड़लों का मुंह तो मैंने परीक्षा-फल प्राप्त होने से पूर्व ही मीठा करा दिया था। मुझे विश्वास था कि दोनों पास होंगे। क्या आज तक कभी इनमें से कोई किसी परीक्षा में फेल हुआ है जो आज मेरे लिए आशंका का कोई कारण था? और बहूरानी का मुंह भी तभी मीठा करा दिया था। अब तो मुहल्लेवालों का मुंह मीठा कराने के लिए मिठाई मंगवाई है।"

"अच्छा, अच्छा।" कहकर किशोर के पिताजी अपने कपड़े की कोठी में चले गए। किशोर के पिताजी का कपड़े का बहुत बड़ा कारोबार था।

प्रकाश यहां से अपने घर आया तो सरोज भाभी उसके आने की प्रतीक्षा में थीं। उन्होंने प्रकाश के घर में प्रवेश करते ही प्रकाश के खिले मुखमण्डल पर देखा तो समझ गईं कि लालाजी परीक्षा में उत्तीर्ण हो गए, फिर भी उत्सुकता मिटाने के लिए पूछा, "परीक्षा-फल आ गया लालाजी?"

"आ गया भाभी! और तुम्हारा देवर फर्स्ट डिवीज़न से पास हुआ है। परन्तु भाभी! दुःख इस बात का रहा कि किशोर का सेकण्ड डिवीज़न रह गया। पता नहीं कौन-सा पर्चा उसका खराब हो गया था।"

सरोज ने प्रकाश के हाथ से हिन्दुस्तान टाइम्स की प्रति लेकर उसमें एल० एल० बी० की परीक्षा का फल देखा तो अनायास ही सरोज भाभी के चेहरे पर रौनक आ गई। वे नेत्र घुमाकर बोलीं, "लो लालाजी! मेरी प्रस्तावित तुम्हारी पत्नी भी एल० एल० बी० में उत्तीर्ण हो गई और प्रसन्नता की बात यह रही कि उसने भी परीक्षा फर्स्ट डिवीज़न में ही पास

की है।"

प्रकाश की ज़बान से अनायास ही निकल पड़ा, "क्या सच भाभी ! ज़रा देखूं तो क्या है उनका रोलनम्बर ?"

सरोज भाभी ने अपनी वह डायरी, जिसमें रोलनम्बर लिखा था और पत्र दोनों प्रकाश के हाथ में देकर कहा, "लो तुम स्वयं देख लो लालाजी ?"

तभी किशोर की माताजी का नौकर सरोज भाभी के यहां मिठाई लेकर आ गया। सरोज ने अपने घर जाकर मिठाई की तश्तरी संभालते हुए पूछा, "अरे ,कैसी मिठाई भेजी है यह माताजी ने रामदीन ?"

"भैया प्रकाश और किशोर भैया पास हो गए अपने इम्तिहान में बहूजी ! उसीकी मिठाई भेजी है मांजी ने।"

"अच्छा !" आंखें मटकाकर सरोज ने कहा।

सरोज भाभी के अपने घर चले जाने पर प्रकाश ने डायरी में लिखे रोलनम्बर को देखा तो उसके सामने लिखा था : 'मालती'। प्रकाश को समझने में बिलम्ब न हुआ कि उस लड़की का नाम मालती है, जिसके विषय में भाभी ने उससे कहा था।

प्रकाश ने 'मालती' शब्द का कई बार उच्चारण किया तो उसे इस नाम के लेने में मिठास आने लगी। उसने मन ही मन कहा, 'सुन्दर नाम है।'

प्रकाश के सम्मुख मालती की साक्षात् प्रतिमा आकर खड़ी हो गई। सरोज भाभी से भी सुन्दर, गोरी-चिट्टी और रूपवती बी०ए० एल० एल० बी०। उसके होंठों से निकला,'जब इतनी रूपवती और पंडिता है तो कौन-सा वह गुण है जो उसमें नहीं होगा ?'

तभी सरोज भाभी आ गईं और मुंह बनाकर बोलीं,"लालाजी, आपने मेरा अधिकार मुझसे क्यों छीना ?"

प्रकाश ने सरोज भाभी के मुस्कराते चेहरे पर देखकर पूछा, "आपका कौन-सा अधिकार मैंने छीनने की धृष्टता की भाभी ?"

सरोज बोली, "तुम पास हुए तो मुहल्ले में मिठाई मैं बांटती। अब यह मुझसे पूर्व ही किशोर की माताजी ने मुहल्ले में मिठाई बंटवा दी। बतलाओ, अब मैं क्या करूं ?"

प्रकाश हंस पड़ा सरोज भाभी की स्नेह-भरी बात सुनकर और हंसकर बोला, "तुम अपनी मिठाई बंटवादो भाभी ! तुम्हें क्या मैंने रोक लिया है ? मैंने माताजी से ही मिठाई बंटवाने को कब कहा था ? आपकी मिठाई लेने को मुहल्ले का कोई व्यक्ति मना नहीं करेगा।"

सरोज बोली, "कहा नहीं तो क्या ? सूचना तो पहले जाकर आपने उन्हींको दी और मैं यहां प्रतीक्षा ही करती रही।"

ये बातें चल ही रही थीं कि तभी घर के द्वार पर बाबू ब्रिजकिशनजी एक कुली पर एक बिस्तर तथा एक सूटकेस उठवाए हुए चले आए। प्रकाश ने देखा कि उनके साथ एक युवती भी थी।

सरोज भाभी उन्हें देखकर नीचे चली गईं और स्नेह से उस आने-वाली महिला को अपने घर के अन्दर लिवा लाईं।

फिर बहुत देर तक सरोज भाभी ऊपर नहीं आईं। प्रकाश समझ गया कि उनकी कोई मेहमान आई हैं। उन्हींको लेने के लिए ब्रिजकिशनजी आज सवेरे ही सवेरे स्टेशन गए थे।

प्रकाश को मेहमान में कोई दिलचस्पी नहीं थी। वह अपने कमरे में बैठा रहा। उसने नीचे झांकने और आनेवाली महिला को देखने तक का प्रयास नहीं किया।

थोड़ी देर में सरोज भाभी एक डलिया में कुछ फल लेकर ऊपर आईं और मुस्कराकर बोलीं, "लो लालाजी ! मिठाई तो माताजी ने तुम्हें खिला ही दी। अब फल खाओ भाभी के हाथ के !"

प्रकाश ने मुस्कराकर फलों की डलिया सरोज भाभी के हाथ से लेकर कहा, "मालूम देता है आपके यहां आनेवाली मेहमान लाई हैं ये फल। लीचियों को देखकर ज्ञात होता है कि मेहमान देहरादून से आई हैं।"

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "तुमने ठीक अनुमान लगाया लाला-जी ! ये इस समय देहरादून से ही आ रही हैं।"

केवल इतना मात्र कहकर सरोज भाभी फिर नीचे चली गईं और प्रकाश अकेला ही बैठा रह गया।

प्रकाश आज बहुत प्रसन्न था। वह एकांत में बैठा था, अपनी बैठक में। तभी उसकी दृष्टि कमरे में लगे हुए अपने माता-पिता के चित्रों पर जा

पड़ी।

उन्हें देखते ही प्रकाश का हृदय उमड़ आया। उसने मन ही मन कहा, 'आज माताजी और पिताजी होते तो उन्हें मेरे पास होने की सूचना प्राप्त करके कितने सुख तथा शांति की प्राप्ति होती। उनके हृदय आज हर्ष से फूल उठते और माताजी ने आज मुझे न जाने कितनी बार अपनी छाती से लगाकर दुलारा होता। पिताजी इस समाचार को प्राप्त कर फूले नहीं समाते और जब तक अपने सब मित्रों को यह सूचना नहीं दे लेते तब तक उन्हें चैन नहीं पड़ता।'

प्रकाश के नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित हो चली। उसके नेत्रों के सम्मुख उसके माता-पिता की साक्षात् प्रतिमाएं आकर खड़ी हो गईं। वे दोनों प्रकाश को उसकी सफलता पर आशीर्वाद दे रहे थे।

यह देखकर प्रकाश रोता-रोता एकदम प्रफुल्लित हो उठा उसने मस्तक झुकाकर दोनों को प्रणाम किया और फिर ऊपर देखा तो वहां कोई नहीं था।

इसी बीच सरोज दबे पांव चुपके से आकर प्रकाश के पीछे खड़ी हो गई थी। प्रकाश ने पीछे की ओर मुह किया तो सरोज भाभी गम्भीर मुद्रा में उसके पीछे खड़ी मिलीं।

सरोज ने प्रकाश के गालों पर आंसुओं के निशान देखे तो करुण स्वर में कहा, "लालाजी को अपने माता-पिता की स्मृति हो आई। आज यदि वे होते तो यह दिन उनके जीवन का कितना सुखद दिन होता जब उनके लाड़ले पुत्र ने विश्वविद्यालय की अंतिम परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की है।"

प्रकाश के नेत्र जो अभी कुछ समय पूर्व अश्रु बहाना बन्द कर चुके थे सरोज भाभी की बात सुनकर बरस पड़े।

सरोज भाभी ने कभी आज तक प्रकाश के बदन को छुआ नहीं था, केवलमात्र दूर-दूर से ही स्नेहपूर्ण बातें भर कर ली थीं प्रकाश से। आज वे प्रकाश की इस अथाह वेदना को सहन न कर सकीं। उन्होंने आगे बढ़-कर अपनी धोती के आंचल से प्रकाश के नेत्र पोंछे और स्नेह से अपने निकट को करते हुए कहा, "लालाजी! इतने दिन की दबी प्यार की ज्वाला

आज अचानक ही तुम्हारे हृदय में दहक उठी।

"मुझे भी जब अपने माता-पिताकी स्मृति हो आती है तो कई-कई घंटे मेरा मन उद्विग्न रहता है। मैं उस समय कुछ सोच नहीं सकती, कुछ कर नहीं सकती। मैं संज्ञाविहीन-सी हो उठती हूं।"

"तो क्या आपके माता-पिता का भी स्वर्गवास हो चुका सरोज भाभी?" प्रकाश ने रुद्ध कंठ से पूछा।

सरोज मुस्कराकर बोली,"बहुत दिन हो चुके लालाजी! इतने लाड़-चाव से मुझे और मेरी बहिन को पाल रहे थे वे कि विधाता से हमारा सुख देखा नहीं गया। एक महीने के अन्दर-अन्दर ही विधाता ने दोनों को हमसे छीन लिया। हमारे एक चाचा थे जिनके संरक्षण में पिताजी ने हमें अपने अंतिम समय छोड़ा। मैं बहुत छोटी थी उस समय और मेरी बहिन मुझसे भी कई वर्ष छोटी।···चाचा का व्यवहार हमारे साथ अच्छा नहीं रहा। जो रुपया पिताजी उन्हें हमारे पालन-पोषण के लिए देकर गए थे वह उन्होंने हज़्म कर लिया और हम दोनों को अपनी नौकरानी समझना प्रारंभ कर दिया। मुझसे चाचा का यह व्यवहार सहन न हो सका। उस समय चाचा हमारे मकान में ही रह रहे थे। मैंने उस समय बड़ी ही सावधानी और निर्भीकता से काम लिया। मैंने एक दिन, जब चाचीजी अपने बच्चों के साथ अपने मैके गई हुई थीं, चाचाजी के रात्रि को घर लौटने पर घर के द्वार नहीं खोले। उस दिन वे लाख चिल्लाए परन्तु मैंने द्वार खोले ही नहीं और दूसरे सम्पूर्ण दिन भी द्वार बन्द ही रखे।···दूसरे दिन चाचा दिन में दो बार आए तो द्वार उन्हें बन्द ही मिला। जब तीसरी बार आए तो मैंने गलीवाली खिड़की से मुँह निकालकर कहा, "चाचाजी! अब आप अपने रहने का प्रबन्ध कहीं अन्यत्र कर लीजिए। यह मकान मेरे पिता का है और इसमें हम दोनों बहिनें ही रहेंगी। आप अब हमारे घर न आया करें।'"

"अरे वाह! भाभी, वाह! आपने तो कमाल कर दिया।" एकदम प्रसन्न होकर प्रकाश बोला, "उस पाजी चाचा के साथ आपने बिलकुल उचित व्यवहार किया। आपको यही करना चाहिए था।···तो इस प्रकार अपने चाचा से मुक्त होकर आप अपने पैरों पर खड़ी हुईं।"

"हां लालाजी ! मैंने केवल एक कमरा अपने और अपनी बहिन के लिए रखकर शेष सारा मकान किरायेपर चढ़ादिया।" इतना कहकर सरोज भाभी के चेहरे पर प्रसन्नता झलक उठी। उनके नेत्रों से प्रकाश फूट पड़ा। उनका हृदय खिल उठा। उनके चेहरे की कांति बढ़ गई।

इस आकस्मिक परिवर्तन को देखकर प्रकाश ने सरोज भाभी से पूछा, "फिर क्या हुआ भाभी ?"

"फिर क्या हुआ अब यह बतलाऊं तुम्हें लालाजी, फिर यह हुआ कि तुम्हारे भाई साहब हमारे मकान में किरायेदार बनकर आ गए।"

सरोज भाभी की बात सुनकर प्रकाश के चेहरे पर मुस्कराहट नाच उठी। वह बोला, "और भैया के आते ही भाभी के नेत्र भैया के नेत्रों से जुड़ गए। दोनों के हृदय की रागिनी एक स्वर में बजने लगी। दोनों का जीवन एक धारा में प्रवाहित हो चला।"

"सचमुच लालाजी ! तुम्हारे भैया का जो रूप मैंने वहां देखा उसमें आज तक मुझे कोई परिवर्तन दिखलाई नहीं दिया। वही सौम्यता, वही सरलता जिसपर मैं मुग्ध हो उठी थी, उनके जीवन की अमूल्य निधियां हैं आज भी। कितना निष्कपट हृदय पाया है तुम्हारे भैया ने कि बस क्या कहूं मैं ! मेरे दुर्भाग्यपूर्ण जीवन को इन्होंने स्वर्गिक आनंद की बाटिका में लाकर रख दिया। अपने भविष्य के विषय में जो संकल्प-विकल्प मेरे मन में उठा करते थे उन सबसे मुझे मुक्ति दिलाना तुम्हारे भैया का ही काम था।"

भाभी के मानस को इस प्रकार अपने पति के प्रति श्रद्धा से ओत-प्रोत देखकर प्रकाश का मन पुलकायमान हो उठा। ब्रिजकिशनजी के सरल स्वभाव को प्रकाश ने भी अनेकों बार परखा था। उनके निष्कपट चरित्र से वह अनेकों बार प्रभावित हुआ था। वह मुक्त कंठ से बोला, "भाभी ! भैया सचमुच वह हीरा हैं जो किसी भाग्यवान स्त्री को ही प्राप्त हो सकते थे। आप भाग्यवान थीं इसीलिए आपको यह अमूल्य हीरा प्राप्त हो सका।"

"सचमुच हीरा हैं लालाजी ! वरना जैसे मैं चाचाजी को घर से निकालकर एकदम बेसहारा हो गई थी तो मेरा रहना कठिन हो जाता

वहां। उसके बाद भी चाचाजी अपनी हरकतों से बाज नहीं आए। उन्होंने हमें कचहरी तक घसीटा, परन्तु अन्त में उन्हें मुंह की खानी पड़ी। तुमही बतलाओ, यदि उस समय मुझे तुम्हारे भैया का सहारा न मिला होता तो मैं कैसे वह मुकदमा लड़ती और कैसे उस मकान को बचा पाती जिसने हम दोनों बहिनों की नौका किनारों पर लगा दी। वह मकान न होता तो हमारा और क्या सहारा था ?"

प्रकाश आज सरोज भाभी की साहसपूर्ण कहानी सुनकर मुग्ध हो उठा और बाबू ब्रिजकिशन के प्रति भी सहानुभूति उसके हृदयमें कम नहीं हुई। उसने उन दोनों ही प्राणियों को श्रद्धा की दृष्टि से देखा।

सरोज यह कहकर हंस पड़ी और हंसती-हंसती ही बोली, "लालाजी, आज जिस कहानी को सुनाकर मैं तुम्हारे समक्ष हंस पड़ी, जब यह समस्या बनकर मेरे सिर पर मंडराई थी तो सच जानो मुझे रात-दिन नींद नहीं आती थी। चाचाजी का दावा था कि वह मकान उनका है, परन्तु पिताजी के सन्दूक से मुझे उस मकान की रजिस्ट्री की एक रसीद मिल गई। उसीको लेकर तुम्हारे भाई साहब ने रजिस्ट्रीखाने से असल रजिस्ट्री की नकल प्राप्त करली और मैं मुकदमा जीत गई।"

तभी बाबू ब्रिजकिशन ने सरोज भाभी को आवाज दी और वे नीचे चली गईं। प्रकाश अकेला बैठा सरोज की कहानी को अपने मन में दुहरा-दुहराकर प्रसन्न होता रहा। अपने हृदय की पीड़ा को वह भूल ही गया और उसका मन सरोज भाभी की सराहना से भर उठा।

६

दूसरे दिन प्रातःकाल प्रकाश सोकर उठा और नित्यकर्म से निवृत्त होकर ज्योंही अपने ड्राइंगरूम में आया तो उसने देखा कि बाबू ब्रिजकिशन धीरे-धीरे जीने की सीढ़ियों पर चढ़े चले आ रहे थे।

वे प्रकाश बाबू के पास आकर बोले, "प्रकाश, स्नान आदि से निवृत्त हो चुके ?" इतना कहकर वे वहीं प्रकाश के पास बैठ गए।

प्रकाश बोला, "कर चुका भाई साहब !"

"कल तुम्हारी भाभी ने बतलाया कि तुमने प्रथम श्रेणी में एम० ए० की परीक्षा पास की है। सुनकर बहुत आनन्द प्राप्त हुआ। अब तुम किसी कालेज में प्रोफेसर बन सकोगे। क्यों ? कैसी रहेगी यह दिशा ?"

"बहुत अच्छी रहेगी भाई ब्रिजकिशनजी ! मेरी रुचि भी है इस दिशा में। मेरी इच्छा है कि मैं जीवन-भर विद्यार्थी ही बना रहूं।" प्रकाश बोला।

ये बातें चल ही रही थीं कि तभी सरोज बादामी साड़ी पर सुनहला ब्लाउज पहनकर माथे पर चौड़ी बिन्दी लगाए ऊपर आ गई और बाबू ब्रिजकिशनजी के पासवाली कुर्सी पर बैठकर मुस्कराते हुए बोलीं, "प्रकाश के भाई साहब ! मैं कल लालाजी से कह रही थी कि अब इस सूने घर को आबाद कर डालो।"

सरोज भाभी की बात सुनकर बाबू ब्रिजकिशन बोले, "तुमने अपने देवर को उचित ही राय दी है सरोज ! सचमुच यह इतना बड़ा घर बहू-रानी के बिना उजाड़-सा प्रतीत होता है। तुमने मेरा घर नहीं देखा था सरोज, तुम्हारे आने से पूर्व वह कैसा था ? क्या ठीक ऐसा ही नहीं था जैसा प्रकाश ने इस घर को बना छोड़ा है ? घर को संवारकर रखना स्त्रियां ही जानती हैं।"

बाबू ब्रिजकिशन की बात सुनकर प्रकाश मुस्कराकर बोला, "भैया ! भाभी ने मुझसे वायदा किया है कि ये मुझे अपने ही अनुरूप सुन्दर वधू लाकर देंगी।"

"अरे सच !" बाबू ब्रिजकिशन बोले, "तो बात इतनी आगे बढ़ चुकी है।"

"भाई साहब ! भाभी कहने को तो कह गईं परन्तु अब देख रहा हूं कि अपनी प्रस्तावित लड़की को दिखाने में इन्हें संकोच हो रहा है। मुझे इन्होंने यह भी नहीं बतलाया कि ये उसे कब दिखलाएंगी मुझे।" प्रकाश बोला।

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "लालाजी ! तुम आंखें बन्द कर लो तो मैं जादू के ज़ोर से उस लड़की को तुम्हारे सामने लाकर खड़ी कर

दूं।" और कहकर हंस पड़ीं।

प्रकाश सरोज भाभी की उपहासपूर्ण बातों से खूब परिचित था। उसने नेत्र बन्द करके कहा, "लो भाभी! मैंने आंखें बन्द कर लीं। तुम बुलाकर ले आओ उस लड़की को।"

तभी सरोज की बहिन नाश्ते का सामान और चाय नौकर से लिवाकर ऊपर आ गई और आकर अपनी बहिन और जीजाजी के पास खड़ी हो गई।

सरोज बोली, "लालाजी आंखें खोल लो।"

प्रकाश ने आंखें खोलीं तो रूप की साक्षात् प्रतिमा उसकी आंखों के सम्मुख खड़ी थी। प्रकाश चकित-सा रह गया उसे देखकर, और देखता ही रहा बहुत देर तक। बिलकुल वही रूप था जो प्रकाश ने कल अपनी कल्पना में निश्चित किया था।

बाबू ब्रिजकिशन बोले, "मालो! चाय बनाओ और नाश्ता तश्तरियों में लगा दो।"

उस लड़की ने नाश्ता तश्तरियों में लगाकर मेज़ पर रख दिया और चाय की प्यालियां भी भर दीं।

सरोज बोली, "बैठो मालो! लालाजी के पास कुर्सी पर बैठ जाओ।"

कमरे में चार ही कुर्सियां थीं। मेज़ के एक ओर की दो कुर्सियों पर बाबू ब्रिजकिशन और सरोज भाभी बैठ गए थे और दूसरी ओर अकेला प्रकाश बैठा था।

मालो इठलाती हुई जाकर प्रकाश के बायीं ओर पड़ी कुर्सी पर बैठ गई।

सरोज भाभी ने प्रकाश और मालो की जोड़ी को देखा तो वे ठगी-सी रह गईं। उनके मन ने कहा, 'इन दोनों को विधाता ने एक-दूसरे के लिए ही बनाया है।' और फिर प्रकाश की आकृति की ओर देखा तो मन लहरा उठा उनका। उनका मन इस समय असीम आनन्द के सागर में डुबकियां लगा रहा था।

चारों ने साथ-साथ बैठकर चाय पी और नाश्ता किया। उसके पश्चात् मालो और बाबू ब्रिजकिशन तो नीचे चले गए और सरोज प्रकाश

से बातें बनाती हुई वहीं रुक गईं।

एकांत में सरोज भाभी बोलीं, "लड़की पसंद आई लालाजी ?"

प्रकाश मुस्कराकर रह गया भाभी की बात सुनकर और फिर धीरे से बोला, "अच्छा भाभी ! आपने पहले से यह क्यों नहीं बतलाया कि वह आपकी बहिन ही थी जिसके विषय में आपने कहा था।"

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "मैं तुम्हारा पहले मन लेना चाहती थी लालाजी ! लड़कियों की आब मोती जैसी होती है। उसे योंही हर जगह उतारकर नहीं रखा जा सकता।" कहते-कहते सरोज भाभी तनिक गम्भीर-सी हो गईं। वे सोच रही थीं कि प्रकाश 'हां, कहता है या 'ना'।

प्रकाश बोला, "आपकी छोटी बहिन सचमुच रूप में आप जैसी ही है भाभी !"

इसपर सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "सच बात कहो लालाजी ! तुम उसके रूप को मुझसे निखरा हुआ बतलाओगे तो सच जानो मैं तनिक भी क्रोध नहीं करूंगी तुमपर। मुझे प्रसन्नता ही होगी यह सुनकर।"

प्रकाश सरोज भाभी की बात सुनकर मौन रह गया। उसकी आंखों में अभी तक मालो की कांति बसी हुई थी। वह बोला, "आप इसे मालो क्यों कहती हैं भाभी ? क्या मालो ही इसका नाम है ?"

सरोज मुस्कराकर बोली, "'मालो' नहीं 'मालती' और 'मालती' भी नहीं 'मधुमालती'। माताजी इसे प्यार से 'मालो' कहा करती थीं सो वही मुझे भी कहने की बान पड़ गई और उसी नाम से तुम्हारे भाई साहब भी इसे पुकारने लगे।"

प्रकाश हंसकर बोला, "आपने तो भाभी अपनी बहिन का 'मधु' ही उससे पृथक् कर दिया।"

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "'मधु' पृथक् नहीं कर दिया लालाजी ! 'हां' करो, फिर देखना मैं तुम दोनों के जीवन में कितना मधु उड़ेलती हूं। मधु पीते-पीते तुम अघा न जाओ तब कहना।"

प्रकाश कुछ देर स्निग्ध दृष्टि से सरोज भाभी के चेहरे पर देखता रहा और फिर मुस्कराकर बोला, "भाभी ! लो 'हां' कर दी आपके प्रकाश ने।"

प्रकाश की 'हां' को सुनकर सरोज का मन बांसों उछल पड़ा। उनकी

मनोकामना पूर्ण हो गई। सरोज भाभी को अपनी इच्छा का वर मिल गया था इससे उनकी आत्मा बहुत प्रसन्न थी।

आज वे अपनी छोटी बहिन के लिए भी इतना योग्य और सम्पन्न वर खोज सकीं तो उन्होंने समझा कि उनके लक्ष्य की पूर्ति हो गई। उन्होंने अपनी छोटी बहिन के प्रति अपना कर्तव्य निभा दिया।

सरोज के मस्तिष्क की सारी समस्याएं जैसे सुलझ गई। उन्होंने अपनी बहिन को नीचे से पुकारा, "मालो, तनिक यहां तो आओ!"

मालो चटाचट सीढ़ियों से चढ़कर एक क्षण में ऊपर आ गई।

सरोज भाभी बोलीं, "लालाजी यह मालो नहीं, मधुमालती है। और मालती, ये मेरे देवर प्रकाश हैं। दोनों परस्पर परिचय प्राप्त कर लो। प्रकाश ने इसी वर्ष एम० ए० पास किया है, मालती ने एल० एल० बी०। तुम दोनों बैठो, बातें करो, मैं तब तक तुम्हारे जीजाजी के दफ्तर जाने का प्रबन्ध करती हूं।" इतना कहकर वे मालती को वहीं छोड़कर नीचे चली गईं।

मालती बड़ी तेज़-तर्रार लड़की थी। उसने बिना संकोच प्रकाश की बैठक की हर चीज़ को घूम-घूमकर देखा और चीज़ों को अस्त-व्यस्त पड़ी देखकर बोली, "आपका कमरा बड़ा ऊबड़-खाबड़ पड़ा हुआ है। मालूम देता है महीनों से इसके सामान को किसीने साफ नहीं किया।"

प्रकाश का मन गुदगुदा उठा मालती की बात सुनकर। बात साधारण ही थी परन्तु उसे इसमें न जाने कितना माधुर्य प्रतीत हुआ। वह सरल मुस्कान अपने होंठों पर छितराकर बोला, "तुम्हारा अनुमान सही है मालती-देवी! इस घर की चीज़ों को सम्भालनेवाला कोई है नहीं। एक मैं ही हूं, सो मुझे कुछ ज्ञान नहीं है इन सब चीज़ों का।"

"ज्ञान नहीं है!" कहकर मालती हंस दी, "इसमें ज्ञान की कौन-सी बात है प्रकाश बाबू! आप एम० ए० की परीक्षा में प्रथम डिवीज़न प्राप्त कर सकते हैं और इस साधारण-सी चीज का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते! कहीं आपको आपके जैसी ही पढ़ी-लिखी लड़की पत्नी-स्वरूप प्राप्त हो गई तो क्या दशा होगी इस घर की? आज एक अंगुल रेता जमा है सब चीज़ों पर तो कल दो अंगुल जमा हुआ मिलेगा।...आप बुरा न मानें तो एक

कड़वी-सी बात कह दूं आपसे। मैं इतने गन्दे कमरे में थोड़ी देर भी नहीं बैठ सकती। मेरी साड़ी मैली हो सकती है यहां बैठने पर।"

प्रकाश मुस्कराकर बोला, "नहीं बैठ सकतीं तो साफ कर लो मालती! अपने घर की सफाई करके इसे स्वच्छ बना लो और फिर साफ-सुथरे घर में बैठना। तुमसे कहता ही कौन है गन्दे घर में बैठने के लिए।"

मालती मुस्कराकर बोली, "ना भाई ना, यह काम अपने वश का नहीं है। मैं तो किसी चीज़ की टीका-मात्र ही कर सकती हूं। उसके अच्छा या बुरा होने की दलील दे सकती हूं। इसीलिए तो एल० एल० बी० पास किया है मैंने।"

प्रकाश को मालती की बातों में न जाने कितना रस आ रहा था। मालती का एक-एक शब्द उसके कानों में अमृत की बूंदों के समान गिर रहा था। उसके नेत्र बार-बार उसके इठलाते हुए सौंदर्य पर जाकर जम जाते थे और वह मंत्रमुग्ध-सा उधर निहारता रहता था।"

तभी मालती ने मुस्कराकर पूछा, "मालूम देता है मेरा रूप आपको बहुत पसंद आया। मेरे कालेज के विद्यार्थी भी इसी प्रकार एकटक मेरे रूप को निहारा करते थे।"

मालती की यह बात सुनकर प्रकाश को एक हलका-सा झटका लगा, परन्तु उसका मन सत्य की अवहेलना न कर सका। मालती का रूप सच-मुच ऐसा ही था कि उसे एक बार देखकर तुष्टि नहीं हो सकती। जी चाहेगा कि उसे निरन्तर देखते ही रहो।

प्रकाश मालती की ओर देखकर तनिक बनावटी गम्भीर वाणी में बोला, "आपका रूप सचमुच देखनेवालों को अपनी ओर आकर्षित करने की क्षमता रखता है। इसमें कोई संदेह नहीं। आपके कालेज के विद्यार्थियों ने यदि एकटक आपके रूप को निहारा तो उन्होंने उचित ही किया। ऐसा रूप भला अन्यत्र उन्हें कहां देखने को मिलता?"

प्रकाश की बात सुनकर मालती मुस्कराकर बोली, "आप मुझे बना रहे हैं प्रकाश बाबू! परन्तु मैं सच कह रही हूं। मैंने एक शब्द भी असत्य नहीं कहा।"

"मैं सच मान रहा हूं मालती! तुमको मैं बना नहीं सकता। तुमको

बनाने में विधाता ने कोई कमी नहीं छोड़ी है। नारी का सुन्दरतम रूप तुम्हें प्रदान किया है विधाता ने। फिर तुम ही सोचो कि विधाता की कलाकृति को मै भला कैसे बना सकता हूं। मुझमें वह सामर्थ्य कहां जो इतनी सुन्दर और कलात्मक प्रतिमा गढ़कर तैयार कर सकूं जैसी तुम्हारी है।" प्रकाश सरल स्वभाव से बोला।

प्रकाश की मधुर बातों को सुनकर मालती ने देखा कि उसके हृदय में कुछ ऐसी लहर-सी प्रवाहित हो उठी जैसी पहले कभी नहीं उठी थी। उसकी दृष्टि कालेज के अनेकों लड़कों पर पड़ी थी, परन्तु जमी कभी नहीं, पड़ी और तैरती चली गई। आज मालती ने अनुभव किया कि उसकी दृष्टि प्रकाश के ऊपर अनायास ही जमती जा रही थी।

उसने मुस्कराते हुए प्रकाश की ओर देखकर पूछा, "आपने किस उद्देश्य से एम० ए० पास किया है प्रकाश बाबू ?"

प्रकाश सरल वाणी में बोला, "मेरी इच्छा प्रोफेसर बनने की है। प्रोफेसर का जीवन काफी शांत और सरल होता है। मुझे जीवन में अधिक उधेड़बुन पसंद नहीं है।" प्रकाश की बात सुनकर मालती तनिक गम्भीर-सी होकर बोली, "शांति और सरलता को लक्ष्य बनाकर आप जीवन में उन्नति नहीं कर सकते। शांति और सरलता को मैं मनुष्य के गुण नहीं मानती। हमलोग यदि शांत और सरल ही बने बैठे रहते तो हमारे चाचाजी हमें कच्चा ही चबा जाते। उस समय यदि जीजी चालाकी और बुद्धिमत्ता से काम न लेतीं तो हम कहीं के भी न रहते।"

प्रकाश मुस्कराकर बोला, "भाभी के उस कार्य को चालाकी न कहो मालती, चतुराई कहो। शांति और सरलता से बुद्धि का ह्रास नहीं होता बल्कि और निखार आता है उसपर; गम्भीरता आती है उसमें। सरल का अर्थ तुमने मूर्खता किस कोष में देख लिया मालती !"

मालती प्रकाश की गम्भीर बात सुनकर तनिक लजा-सी गई परन्तु फिर उसने इठलाकर कमरे में इधर-उधर घूमना प्रारम्भ कर दिया।

प्रकाश मालती के रूप को अपलक नेत्रों से देख रहा था। मालती का रूप-सौंदर्य और उसके बदन का पुष्ट गठन प्रकाश के हृदय में गड़ता जा रहा था। उसका मन चाहता था कि उसे जितना भी अधिक से अधिक समय

मिले वह उसके रूप को देखता रहे।

कितना अनुपम सौंदर्य था वह। विधाता ने मालती के रूप का निर्माण करने में अपनी सारी कला-कुशलता का प्रयोग किया था। विधाता के पास जितने भी सुन्दर से सुन्दर रंग थे वे सब उसने मालती की प्याली में उड़ेल दिए थे। उसके अंग-अंग का निर्माण करने में विधाता ने अपनी अनोखी कुशलता का परिचय दिया था।

मालती घूम रही थी और प्रकाश एकटक उसकी ओर देख रहा था। प्रकाश मौन बैठा अपने नेत्रों से मालती के मुख-चन्द्र से बरसनेवाली सुधा का पान कर रहा था।

प्रकाश की दृष्टि मालती के नेत्रों पर पड़ी, वह अनायास ही उनकी ओर खिंच गया। मालती के नेत्रों में महान आकर्षण था। प्रकाश का हृदय और मन मालती की दृष्टि में मानो बंदी हो गए।

प्रकाश ने सरल स्वभाव से पूछा, "मालती! तुमने वकालत क्यों पास की?"

मालती बोली, "वकालत करने के लिए। क्या आपको यह पेशा पसंद नहीं?"

प्रकाश बोला, "पेशा कोई बुरा नहीं होता मालती! मनुष्य अपने प्रयोग से उसे भला या बुरा बना लेता है।"

मालती प्रकाश के इस उत्तर से बहुत प्रभावित हुई। वह मुस्कराकर बोली, "आपने बिलकुल ठीक कहा। कुछ लोग सोचते हैं कि स्त्रियां खिलौना होती हैं, जिसके हाथ पड़ें उनसे खेलने लगें। परंतु मैं ऐसा नहीं समझती। अच्छाई या बुराई पेशे में नहीं होती, उसके प्रयोग में होती है।"

इतना कहकर मालती एकदम विषय बदलकर बोली, "प्रकाश बाबू, उसी तरह जैसे रूप कोई चीज अपने में नहीं होती।"

"क्या मतलब?" प्रकाश ने आश्चर्यचकित होकर पूछा और प्रश्न-वाचक दृष्टि से मालती के चेहरे पर देखा।

मालती मुस्करा दी और वक्र दृष्टि से प्रकाश के चेहरे पर दृष्टिपात करके बोली, "जिस प्रकार कोई पेशा स्वयं में अच्छा या बुरा नहीं होता उसी प्रकार नारी या पुरुष का रूप भी अपने-आपमें कोई वस्तु नहीं है प्रकाश बाबू! यह देखनेवालों की दृष्टि है जो उनमें रूप-कुरूपता अनुभव

करती है।'''आपने शायद न देखा हो और देखा भी हो तो शायद इतने ध्यान से न देखा हो जितने ध्यान से मैंने देखा है। अंधी, कानी, कुरूप और विकृत अंगोंवाली लड़कियों को मैंने उनके पतियों द्वारा प्रशंसित होते सुना है। और क्या-क्या कुलावे बांधते हैं वे लोग अपनी उन प्रेमिकाओं के कि मन मुग्ध हो उठता है। उनकी दृष्टि से विधाता का सब रूप और सौंदर्य उनकी प्रेमिकाओं में सिमट आता है।" कहकर मालती मुस्करा दी।

प्रकाश बोला, "मैं तुम्हारी इस बात को आंशिक रूप में सत्य मान सकता हूं मालती, पूर्ण रूप से नहीं। इसमें कोई संदेह नहीं कि उन प्रेमियों की दृष्टि में उनकी प्रेमिकाओं का रूप अवर्णनीय हो उठता है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि वे प्रेमिकाएं उनके प्रेमियों के देखने से रूपवती बन जाती हैं। वह तो दृष्टि-विशेष है अपनी-अपनी। अपनी दृष्टि से कोई कण को हिमालय समझ सकता है और बूंद को समुद्र, परन्तु वास्तविकता यह है कि कण कण ही रहता है, और हिमालय हिमालय ही, बूंद बूंद ही रहती है, और सागर सागर ही। देखनेवाले की दृष्टि रूप-परिवर्तन नहीं कर सकती। वास्तविकता वह है जो सबको समान रूप से प्रभावित करे। वास्तविकता वह है जिसे हर दृष्टि समान रूप से देखे। जैसाकि तुमने अभी कुछ देर पूर्व बतलाया था कि जब तुम अपने कालेज कम्पाऊंड में घूमती थीं तो तुम्हारे कालेज के विद्यार्थी तुम्हें ठीक उसी प्रकार देखा करते थे जिस प्रकार मैंने तुम्हें देखा। इससे सिद्ध हुआ कि तुम्हारे पास अवश्य वह रूप है जो किसी व्यक्ति-विशेष को नहीं वरन् हर दृष्टि को समान रूप से प्रभावित करता है। यह तुम्हारे सौंदर्य का गुण है, दृष्टि का समझना-मात्र नहीं।"

मालती हंस दी प्रकाश की बात सुनकर और बोली, "आपने तो रूप की व्याख्या ही कर डाली प्रकाश बाबू। परन्तु मालूम देता है मेरे कालेज के विद्यार्थियों का मेरे चेहरे पर मटकी आंखों से देखना आपको कुछ भला प्रतीत नहीं हुआ।"

मालती की बात सुनकर प्रकाश खिलखिलाकर हंस पड़ा और फिर खड़ा होकर मालती के निकट पहुंचकर बोला, "मालती! तुमने अपने कालेज के ऐरे-गैरे विद्यार्थियों की दृष्टि को प्रकाश की दृष्टि से मिला दिया।

क्या प्रकाश में और उन विद्यार्थियों में तुम्हें कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता ?"

प्रकाश की बात सुनकर मालती ने एक बार ध्यान से प्रकाश को सिर से पैर तक देखा और फिर मुस्कराकर बोली, "अन्तर क्यों नहीं है प्रकाश बाबू ! आपके बदन के जैसा गठन उनमें किसीका भी नहीं था। आपके बदन में पुरुषोचित रूप का जो कलात्मक निखार है, वह भी उनमें नहीं था।" इतना कहकर मालती ने मुग्ध दृष्टि से प्रकाश की ओर देखा और एकटक देखती ही रही कुछ देर तक।

प्रकाश बोला, "तुम बहुत चतुर हो मालती ! वकील जो ठहरीं। शब्दों को घुमाने-फिराने की कला में तुम बहुत प्रवीण हो, परन्तु मुझ जैसे सरल और सादा व्यक्ति पर तुम अपनी प्रवीणता का प्रयोग न करो तभी भला है। भगवान ने तुम्हें रूप दिया है और इस रूप और कांति से युक्त मुख से जो शब्द निकलें उनमें प्रवीणता की अपेक्षा यदि सरलता रहे तो तुम्हारे सौंदर्य में और निखार आ जाए।"

मालती हंस पड़ी प्रकाश की बात सुनकर और बोली, "मैं फिर कहती हूं प्रकाश बाबू ! कि आपका मुझे बनाना कुछ अच्छी बात नहीं है।"

तभी सरोज भाभी वहां आ गईं और दोनों को परस्पर बातें करते देखकर बोलीं, "ज्ञात होता है तुम दोनों ने इतने कम समय में ही अपनी प्रगाढ़ मित्रता बना ली है। क्यों लालाजी ! मालती को तो मैं छुटपने से जानती हूं। यह मित्र बनाने की कला में बहुत ही प्रवीण है। उड़ते पंछी को अपने वाक्जाल जाल में फंसा लेती है यह। तुम फंसना नहीं इसके जाल में !" सरोज भाभी कहकर हंस पड़ीं।

मालती मुस्कराकर बोली, "ये आपके लालाजी तो फंस चुके मेरे वाक्जाल में जीजी ! अब देखती हूं आप इनके बंधन कैसे ढीले करती हैं।"

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "लालाजी ! मेरी यह छोटी बहिन बहुत बातें करती है। इसकी सभी बातों पर तुम विश्वास न कर लेना।"

प्रकाश मुस्कराकर बोला, "परन्तु भाभी ! मुझसे तो इसने कोई ऐसी बात नहीं की जिसपर मैं विश्वास न कर सकूं। मुझसे तो जो कुछ इसने कहा है, मुझे सत्य ही प्रतीत हुआ।"

मालती मुस्करा दी प्रकाश की बात सुनकर और वक्र दृष्टि से बोली, "वे सभी बातें जो आपसे कीं, जीजी से कहने की नहीं हैं प्रकाश बाबू।"

सरोज भाभी हंस पड़ीं मालती की भोली बात सुनकर, और बोलीं, "अच्छा जी! तो मित्रता इस पैमाने पर पहुंच गई कि ऐसी बातें हो चुकीं जो जीजी से भी नहीं कही जा सकतीं।"

प्रकाश सरल वाणी में बोला, "मालती! मुझसे तुमने ऐसी क्या बात कही जो सरोज भाभी से नहीं कही जा सकती?"

प्रकाश की सरल बात सुनकर सरोज भाभी हंसकर बोलीं, "लालाजी, तभी तो मैं कह रही थी कि तुम इसकी बातों में न आना। अब यह बात कहकर यह उन बातों को जानने की उत्कंठा मेरे मन में जाग्रत् करना चाहती है। परन्तु मैं तो जानती हूं इसे, कि इसने कहा कुछ भी नहीं और यह अपनी जीजी को टटोलने का प्रयास कर रही है।"

सरोज भाभी की बात सुनकर प्रकाश और मालती दोनों खिलखिलाकर हंस पड़े। उन्हींके साथ सरोज भाभी भी हंस दीं।

७

विमला और किशोर का जीवन अभी तक अलग-अलग ही चलता चला जा रहा था। किशोर के मन में विमला के प्रति जो कुंठा बैठ गई थी उसपर उसकी माताजी के समझाने का कोई प्रभाव न हुआ।

इधर कई दिन से प्रकाश किशोर के यहां नहीं आया था। प्रकाश का न मिलना किशोर के लिए असह्य हो उठा तो वह स्वयं आज प्रकाश के घर की ओर चल दिया।

किशोर ने घर में प्रवेश किया तो प्रकाश सामने बाबू ब्रिजकिशनजी के ही मकान में बैठा नाश्ता उड़ा रहा था।

किशोर को आते देखकर प्रकाश कुर्सी से खड़ा होकर द्वार की ओर बढ़ा और किशोर को अपने पास कुर्सी पर लाकर बिठाते हुए बोला, "लो भाभी! आप अभी-अभी किशोर के विषय में पूछ रही थीं न! यह आ गया।

आपने कई दिनों से मुझे अपने झमेलों में ऐसा फंसा लिया कि मैं किशोर की ओर जा ही नहीं सका। आपकी बहिन को दिल्ली की सैर कराने न जाता तो आप बुरा मानतीं और किशोर के यहां नहीं गया तो यह सोच रहा होगा कि मैं कितना लापरवाह हो गया हूं।"

प्रकाश की बात सुनकर किशोर मुस्कराकर बोला, "सरोज भाभी की बहिन को सैर कराना अधिक आवश्यक कार्य था प्रकाश ! ये मेहमान जो हुई अपनी। मेरे पास तुम नहीं आए दो दिन तो तुम्हारी प्रतीक्षा करके मैं स्वयं चला आया तुम्हारे पास।"

तभी किशोर की दृष्टि सरोज भाभी की बहिन मालती के सुन्दर मुख पर जा पड़ी। दृष्टि का पड़ना था कि किशोर के मानस में विद्युत-सी कौंध उठी। मानो वह बैठा-बैठा ही संज्ञाविहीन-सा हो गया। रूप का सागर-सा लहरा उठा उसके नेत्रों के सम्मुख। किशोर के अपलक नेत्र मालती के चेहरे पर जमे देखकर प्रकाश को अथाह आनंद की प्राप्ति हुई। उसे संतोष हुआ कि जिसे प्रकाश ने रूपवती गिना उसपर किशोर भिन्न मत न हो सका।

नाश्ते के पश्चात् प्रकाश और किशोर ऊपर ज़ीने से चढ़कर प्रकाश की बैठक में पहुंच गए।

प्रकाश कुर्सी पर बैठते ही किशोर से बोला, "किशोर, देखी यह लड़की ! कैसी जंची तुम्हें ? क्या तुम इसे अपने छोटे भाई प्रकाश की वधू बनाना पसंद करोगे ?"

प्रकाश की बात सुनकर किशोर का जैसे स्वप्न भंग हो गया। उसका मस्तिष्क, जिस समय से उसने मालती के रूप को देखा था, उसके रूप और अपनी पत्नी की कुरूपता में उलझा हुआ था। वह सोच रहा था कि वह आंखें मींचकर अपने जीवन-पथ पर अवतीर्ण हुआ। परमात्मा ने दो आंखें दी हैं भला-बुरा देखने के लिए। वह उनका भी उपयोग न कर सका अपनी पत्नी के चुनाव में। आंखें बन्द करके कुएं में छलांग लगा गया। वहां अब जीवन-भर पछताने के अतिरिक्त और क्या हाथ आनेवाला था उसके ? जो लोग इस दुनिया में आंखें बन्द करके चलते हैं उनकी मेरे जैसी ही दशा होती है।

तभी प्रकाश का अंतिम वाक्य उसके कानों में बज उठा। वह जाग्रत्-सा

होकर बोला, "अद्‌भुत रूप पाया है सरोज भाभी की बहिन ने प्रकाश ! तुम्हारे उपयुक्त लड़की है यह, हर प्रकार से। विधाता तुम्हारी जोड़ी को बना दे तो अति उत्तम रहे। तुम जैसी पत्नी चाहते थे प्रकाश, तुम्हें वैसी ही पत्नी मिल जाए।"

प्रकाश मुस्कराकर बोला, "इसी वर्ष लॉ फर्स्ट डिवीज़न में पास किया है इसने। बड़ी चतुर लड़की है।"

"अरे वाह ! तब तो सोने को सोहागा मिल गया। रूप और विद्या दोनों का सामंजस्य हो गया। फिर तुम ही क्या कम हो किसी बात में ? मेरा भाई प्रकाश भी तो सर्वगुण-सम्पन्न है।" किशोर बोला।

"किशोर ! कोई कमी नहीं है मालती में। मैंने दो दिन इसके साथ रहकर पूरी गहराई के साथ देखा है। इसके अंग-अंग का विधाता ने बड़ी कुशलतापूर्वक निर्माण किया है। क्या मजाल जो कहीं बाल बराबर भी किसी चीज में कोई कमी दृष्टिगोचर हो। हर चीज का निर्माण विधाता ने नाप-तोलकर किया है।" प्रकाश बोला।

किशोर की आंखों के सम्मुख इस समय मानो मालती बैठी मुस्करा रही थी। उसकी रूप-आभा उसके सम्मुख बिखरी पड़ी थी। किशोर को वह आभा अपने छोटे भाई सरीखे मित्र प्रकाश के बहुत उपयुक्त जंची। वह मुक्तकण्ठ से बोला, "प्रकाश ! तुम जैसी पत्नी चाहते थे विधाता ने घर बैठे वैसी ही तुम्हारे पास भेज दी। सरोज भाभी की बहिन के रूप और गुणों में कोई कमी नहीं है। भय केवल एक ही बात का प्रतीत हो रहा है प्रकाश, कि कहीं यह भी तुम्हारी ही तरह तर्क-वितर्क करनेवाली लड़की न हो, और होगी यह अवश्य।"

"यह कैसे जाना तुमने !" आश्चर्यचकित होकर प्रकाश ने पूछा।

"ऐसा न होता तो यह लॉ पास न करती। इसका वकालत पास करना इसका द्योतक है। इसके अन्दर यह प्रवृत्ति न होती तो यह वकालत पास करने का स्वप्न न देखती।" किशोर बोला।

प्रकाश बोला, "तर्क-वितर्क का कुपरिणाम मनों में मैल होने पर बुरा निकल सकता है किशोर ! परन्तु मालती के प्रति मन में मैल उत्पन्न होने का तो मुझे कोई कारण प्रतीत नहीं होता। और उसके मन में भी भला

मैल क्यों पैदा होगा ? तुम कम से कम मेरे स्वभाव से तो परिचित ही हो।"

किशोर मुस्कराकर बोला, "सरोज भाभी की बहिन सचमुच बहुत रूपवती है प्रकाश ! इसके विषय में दो मत नहीं हो सकते। मुझे इसके रूप और गुणों में कोई कमी प्रतीत नहीं होती, तुम चाहो तो माताजी भी आकर देख लें इसे।"

"तुमने मेरे मुंह की बात छीन ली किशोर ! मैं आज स्वयं आनेवाला था माताजी के पास इस कार्य के लिए। तुम आ गए, यह अति उत्तम हुआ।" प्रकाश बोला।

आज किशोर की माताजी प्रकाश के घर आईं और नीचे सरोज के घर में प्रवेश करके बोलीं, "सरोज रानी ! तुम तो जैसे मुहल्ले से लापता हो गईं। किशोर की बहू नित्य दोपहर में तुम्हारी राह देखती है और तुम्हारे न आने पर निराश होकर रह जाती है।"

किशोर की माताजी को अपने आंगन में खड़ी देखकर सरोज ने आगे बढ़कर उन्हें प्रणाम किया और उनके बैठने के लिए पीढ़ा डालकर वे स्वयं चटाई पर बैठते हुए अपनी बहिन की ओर संकेत करके बोली, "दो दिन से यह छोटी बहिन आ गई थी मेरी ! इसीसे आपके यहां न आ सकी। क्षमा करना माताजी ! और विमला से भी मेरी क्षमा-याचना कह देना।"

किशोर की माताजी सरोज की बहिन की ओर देखकर बोलीं, "अच्छा, अच्छा ! तो बहिन है यह तुम्हारी छोटी। कितनी मिलती है यह तुम्हारी सूरत से ? क्या नाम है इसका सरोज रानी ?"

"मधुमालती।" सरोज ने कहा।

"कितना मधुर नाम है इसका। रूप और माधुर्य को मानो विधाता ने एक ही स्थान पर लाकर एकत्रित कर दिया है। बिटिया कुछ पढ़ी-लिखी भी है सरोज ?" किशोर की माताजी ने पूछा।

सरोज भाभी सगर्व बोलीं, "इसी वर्ष फर्स्ट डिवीज़न में लॉ पास किया है माताजी ! बड़ी ही तीव्र बुद्धि है इसकी।"

"हां हां, क्यों नहीं सरोज रानी ! तुम्हारी बहिन होकर इतनी तीव्र बुद्धि भला क्यों न होती।" किशोर की माताजी ने सहर्ष कहा। उन्हें मालती बहुत पसंद आई।

मालती के रूप ने किशोर की माताजी को बहुत प्रभावित किया। वे मालती को देखकर अपने घर चली गई। किशोर के पिताजी अभी-अभी पूजा से उठे थे। उन्होंने पूछा, "आज इतना सवेरे ही सवेरे किधर चली गई थीं किशोर की माताजी ?"

किशोर की माताजी प्रसन्नतापूर्वक बोलीं, "मिठाई खिलाने का वायदा करो तो एक बहुत मीठी बात सुनाऊं आपको।"

"हां, हां, मिठाई क्यों नहीं खिलाएंगे तुम्हें जब तुम मीठी बात सुनाओगी ?" इतना कहकर उपहास में किशोर के पिताजी घूंघट में बैठी विमला की ओर देखकर बोले, "क्यों बेटी ! तुम्हारे पिताजी तुम्हारी माताजी को मीठी बात सुनाने पर मिठाई खिलाते हैं ना ! सो मैं भी आज तुम्हारी सास को खिलाऊंगा।"

विमला के हृदय में ससुर के उपहास का मधुर रस भर गया। उसके निरंतर गम्भीर बने चेहरे पर भी आज हास्य की रेखा खिंच गई।

किशोर की माताजी मुग्ध मन से बोलीं, "आपके लाड़ले प्रकाश की होनेवाली बहू को देखने गई थी।"

"अरे सच ! यह लड़का तो बड़ा पाजी निकला। हमसे पूछा भी नहीं और बात पक्की कर ली।" वे बोले।

किशोर की माताजी प्रसन्नतापूर्वक बोलीं, "परन्तु बहू अपने अनुरूप ही छांटी है उसने। बहुत सुन्दर है किशोर के पिताजी, और इसी वर्ष उसने फर्स्ट डिवीज़न में लॉ पास किया है।"

"लॉ पास किया है !" किशोर के पिताजी की ज़बान से अनायास ही निकल गया। "फिर वह शादी किसलिए करेगी किशोर की माताजी ! वह वकालत नहीं करेगी ? वह गृहिणी नहीं बन सकती। प्रकाश के जीवन में वह शान्ति का संचार नहीं कर सकती। और हां, ज़रा यह भी तो सुनूं कि वह है, कौन ?"

"वह सरोज रानी की छोटी बहिन है मालती।" किशोर की माताजी हर्षित मन से बोलीं।

किशोर के पिताजी का यह सब सुनकर माथा ठनक उठा। उन्हें यह सब कुछ पसंद नहीं आया। वे दुखी मन से बोले, "आज प्रकाश के पिताजी

जीवित होते तो वे कदापि इस रिश्ते को स्वीकार न करते।"

वे बाहर को चलने लगे तो किशोर की माताजी बोलीं, "किशोर के पिताजी, आप प्रकाश से कुछ कहना नहीं। उसने उसे बड़े मन से पसंद किया है। आप कहीं कुछ बुराई न ले बैठना इस विषय में।"

किशोर के पिताजी बोले, "मैं बुराई नहीं लूंगा किशोर की माताजी! परन्तु मुझे यह पसंद कतई नहीं आया। लड़की का रिश्ता लेने के लिए केवल लड़की का रूप ही नहीं देखा जाता। रूप के अतिरिक्त भी बहुत-सी चीज़ें होती हैं देखने के लिए। उसके परिवार का पूर्ण ज्ञान किए बिना रिश्ता स्वीकार नहीं करना चाहिए।"

किशोर के पिताजी का यह विरोध सुनकर किशोर की माताजी सहमी-सी रह गई। उनका सारा उत्साह भंग-सा हो गया। वे एक शब्द भी न बोल सकीं, परन्तु उनके मन में भी कुछ आशंका-सी अवश्य उत्पन्न हो गई। उन्होंने गम्भीर दृष्टि से मालती के विषय में सोचा तो उन्हें मालती के बिखरे हुए रूप में भारतीय सभ्यता की झलक दिखलाई नहीं दी। बहू-बेटियों को चाहिए कि वे अपने रूप को समेटकर रखें, बिखराकर नहीं। जो रूप जितना बिखरा हुआ होगा उसके उतना ही शीघ्र मैला होने की सम्भावना बनी रहेगी।

वे न जाने क्यों प्रकाश के लिए चिंतित-सी हो उठीं। उनके पति द्वारा प्रदर्शित आशंका उनके मस्तिष्क में घर कर गई। परन्तु साथ ही उनके समक्ष अपने पुत्र और पुत्रवधू का परस्पर बिगड़ा हुआ सम्बन्ध भी था। वे फिर बहुत देर तक उसपर सोचती रहीं और सोचती रहीं कि आजकल के लड़के-लड़कियां अपने विवार-सम्बन्धों के बीच से अपने माता-पिता को बिलकुल निकाल फेंकना चाहते हैं। क्या उनका यह विचार उचित है?

उनका मन कुछ खिन्न-सा हो उठा। परन्तु उन्होंने इस खिन्नता को अपने चेहरे पर नहीं उभरने दिया।

थोड़ी देर में किशोर ने बाहर से आकर पूछा, "क्या गई थीं माताजी आप प्रकाश के घर?"

"गई थी बेटा!"

"सरोज भाभी की बहिन देखी आपने?"

"देखी बेटा!"

"कैसी लगी आपको ?"

"बहुत सुन्दर है ।"

यह सुनकर किशोर का मन खिल उठा। वह बोला,"भाग्य से प्रकाश को उसकी इच्छा के अनुरूप ही लड़की मिल गई । न मिलती तो उसका मन बड़ा उदास रहता ।" और वह तुरन्त प्रकाश के पास जा पहुंचा ।

प्रकाश अकेला अपने कमरे में बैठा था । किशोर को देखकर वह खड़ा हो गया और बोला,"माताजी आकर देख गई है सरोज भाभी की बहिन को।"

किशोर ने कहा, "और उन्होंने सरोज भाभी की छोटी बहिन को बहुत पसंद भी किया प्रकाश !"

"क्या सच ?" कहकर प्रकाश उछल पड़ा । उसे पूर्ण आशा थी कि माताजी मालती को निश्चित रूप से पसंद करेंगी ।

दोनों मित्रों की ये बातें चल ही रही थीं कि तभी सरोज भाभी वहां आ गई और मुस्कराकर बोलीं, "किशोर ! माताजी को मालती कैसी पसंद आई ?"

"बहुत पसंद आई भाभी !" किशोर सहर्ष बोला। "अब आप इस शुभ कार्य को करने में देर न करें।"

सरोज भाभी का मन मुग्ध हो गया यह समाचार पाकर । उन्हें अपनी छोटी बहिन के सौंदर्य पर गर्व हो उठा । उन्होंने मन ही मन कहा, 'रूप भी कोई चीज है दुनिया में ! उसपर दृष्टि पड़े और सराहना न हो, यह कभी सम्भव नहीं । मालती का रूप ही ऐसा है कि जो हर देखनेवाले पर ठगोरी डालता है । रूप नारी का सबसे बड़ा आकर्षण है ।'

इसके पश्चात् किशोर अपने घर चला गया और सरोज भाभी नीचे अपने घर चली आईं ।

प्रकाश अकेला अपने कमरे में बैठा रह गया । उसका मन आज प्रसन्न था । वह अपने विवाह की कल्पना कर रहा था। वह उसीके विषय में सोच रहा था ।

प्रकाश पुराने ढंग का विवाह अपना नहीं करेगा, यह उसने निश्चय कर लिया था। घोड़ी पर चढ़कर जाना, बारात निकालना इत्यादि 'फ्यूडल

एज' के रीति-रिवाज उसे पसंद नहीं थे। बाजे-गाजे और रोशनी इत्यादि पर भी अधिक व्यय करना उसे अच्छा नहीं लगता था। अपने इष्टमित्रों और नाते-रिश्तेदारों की एक दावत करना वह उचित समझता था। वह अवश्य करेगा।

मालती के लिए साड़ियां और अन्य कपड़े तथा ज़ेवर की व्यवस्था करनी होगी। इसके विषय में मालती से ही पूछ लिया जाएगा। जैसी-जैसी जो चीज़ें मालती पसंद करेगी तैयार करा दी जाएंगी।

संध्या तक प्रकाश यही सब कुलावे मिलाता रहा। संध्या समय तभी उसकी दृष्टि ज़ीने की ऊपरी सीढ़ी पर पड़ी, तो देखा मालती इठलाती हुई उसीकी ओर आ रही थी। वह मस्ती में कुछ गुनगुना रही थी।

सिर खुला था मालती का और काले लम्बे-लम्बे बाल पीठ पर पड़े लहरा रहे थे। पीली साड़ी पर बैंगनी ब्लाउज़ ने शोभा को दोबाला कर दिया था। प्रकाश मालती का यह रूप देखकर ठगा-सा रह गया।

प्रकाश दृष्टि घुमाकर ऐसे बैठ गया मानो उसने मालती को देखा ही नहीं और चुपके से अपनी किसी पुस्तक के पन्ने पलटने लगा।

परन्तु मालती के गालों पर हास्य की रेखा खिंच गई। वह समझ गई कि प्रकाश बाबू बन रहे हैं क्योंकि उन्हें अपनी ओर देखते वह देख चुकी थी।

मालती हलके-हलके गुनगुनाती हुई मस्ती के साथ प्रकाश के सम्मुख इस प्रकार चली आ रही थी कि मानो यह उसका अपना ही घर था और वह अभ्यस्त थी इसी प्रकार नित्य आने की इस घर में।

लज्जा या संकोच उसके बदन को छू तक नहीं गए थे। वह मुस्कराती हुई आई और प्रकाश के सम्मुख खड़ी होकर बोली, "आपकी दिल्ली के लोग बनना और बनाना खूब जानते हैं प्रकाश बाबू! आज मैंने इसका दूसरा नमूना देखा।"

प्रकाश प्रश्न सुनकर पहले तो तनिक सकपकाया, परन्तु तुरन्त बोला, "वह कैसे मालती?" और नेत्र मालती के चेहरे पर टिका दिए।

मालती बोली, "वह ऐसे कि कल आप मुझे बना रहे थे और आज अपने को बना रहे हैं अर्थात् स्वयं बन रहे हैं।" कहकर मालती हंस पड़ी।

प्रकाश तनिक लजा-सा गया मालती की यह बात सुनकर, परन्तु

फिर सतर्क होकर बोला "मैं बन नहीं रहा हूं मालती ! तुम्हारे प्रखर रूप को देखने के लिए अपने-आपको तैयार कर रहा हूं।"

प्रकाश की बात सुनकर मालती और भी ज़ोर से खिलखिलाकर हंस पड़ी। प्रकाश को लगा कि रूप बिखर पड़ा। मालिन के सिर पर रखी पुष्पों की गठरी की गांठ यकायक खुल पड़ी और पुष्प चारों ओर को बिखर गए।

मालती हंसती-हंसती ही बोली, "आप सचमुच बनने और बनाने की कला में अति प्रवीण हैं प्रकाश बाबू ! मैं मान गई बस आपको !"

मालती को खड़ी देखकर प्रकाश बोला, "बैठ जाओ मालती ! खड़ी कैसे रह गई ?"

मालती बोली, "ऊंहूं ! आज बैठने का दिन नहीं है।"

"तब फिर, किस चीज़ का दिन है मालती ?"

"कैनाट प्लेस की सैर करने का !" मालती ने मुस्कराकर कहा।

प्रकाश बोला, "वहां भी चले चलेंगे मालती, बैठो तो सही। क्या खड़े ही खड़े चल देना है कनाट प्लेस की सैर को !"

"ऊंहूं !" उसी मुस्कराती मुद्रा में मालती ने कहा, "कपड़े पहनिए और तैयार हूजिए। तब तक मैं आपके कमरे का निरीक्षण करती हूं कि इसमें रखे सामान पर कल से आज तक कितना गर्दा और जमा हो गया।"

"उपहास कर रही हो मालती ! किसीकी दुर्बलता पर बार-बार आघात नहीं किया जाता।" प्रकाश मुस्कराकर बोला, "जब तक मैं कपड़े बदलूं तुम यह मेज़ ठीक कर दो। देखूं तो सही तुम्हें क्या कुछ करना आता है !"

मालती फिर हंस पड़ी। आज पता नहीं उसका मन कितना प्रसन्न था कि वह मुस्कराना चाहती थी और हास्य फूट पड़ता था। उसके हृदय का पुष्प पूर्ण रूप से खिल चुका था। उसकी मादक गन्ध ने उसके मानस को भर दिया था। आज उसे अपने जीवन में एक नई ताज़गी-सी प्रतीत होती थी। जो चीज़ें भी उसकी दृष्टि के सम्मुख आती थीं वे सब रंगीन दिखलाई देती थीं। उन सभीमें आकर्षण दिखलाई देता था। वह आज एक नवीन दुनिया में विचरण कर रही थी।

प्रकाश ने फुर्ती से कपड़े पहन लिए और तैयार होकर बोला, "चलो

मालती ! परन्तु सरोज भाभी को भी साथ ले लेते तो अच्छा रहता। भाभी सोचेंगी कि दोनों मक्कार लोग सैर के लिए अकेले ही अकेले उड़ गए।"

मालती बोली, "आप पूछ लें जीजी से। वह चलना चाहें तो ले चलिए उन्हें भी। मुझे इसमें क्या आपत्ति हो सकती है ? परन्तु वे चलेंगी नहीं, इतना आप जान लीजिए।"

प्रकाश ने मालती के साथ नीचे आंगन में उतरकर सरोज भाभी से कहा, "भाभी ! मिस मालती कनाट प्लेस चलने के लिए कह रही हैं। आप भी साथ चलें तो कितना अच्छा रहे।"

प्रकाश की बात सुनकर सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "मैं भला कैसे चल सकती हूं इस समय लालाजी ! अभी तो तुम्हारे भाई साहब भी दफ्तर से नहीं लौटे। दिन-भर के थके-मांदे आएंगे और मैं यहां नहीं मिलूंगी तो भला क्या कहेंगे वे ? तुम दोनों घूम आओ, परन्तु जल्दी आ जाना।"

प्रकाश और मालती चांदनीचौक फव्वारा से सवारी लेकर कनाट प्लेस पहुंचे और वहां की रौनक देखी।

प्रकाश की कई मित्रों से आज घूमते-घूमते भेंट हुई। मालती प्रकाश के साथ न होती तो शायद वे कन्नी काटकर आगे निकल गए होते, परन्तु आज बड़े तपाक से उन्होंने प्रकाश से हाथ मिलाया। सभीने थोड़ी देर खड़े होकर बातें करने का प्रयास किया।

प्रकाश अपने उन मित्रों की हरकतें देखकर अन्दर ही अन्दर मुस्करा उठा, परन्तु ऊपर से सरल ही बना रहा। उसने भी शान के साथ सभीसे हाथ मिलाया और मुस्करा-मुस्कराकर बातें कीं।

सवारी से ओडियन पर उतरकर कनाट प्लेस के बरांडे में बायीं दिशा को प्रकाश और मालती जा रहे थे। बरांडे में भीड़-भाड़ देखकर दोनों पटरी पर खुले आकाश के नीचे चलने लगे। प्रकाश को भी आज कनाट प्लेस की सैर में कुछ विचित्र-सा आनंद आ रहा था।

चलते-चलते फिर वे बायीं दिशा में मुड़नेवाली सड़क पर घूम गए और सिंधिया हाउस के बराबर से निकलकर इण्डिया कॉफी हाउस के सामने से होकर एल्प्स रेस्ट्रां के सम्मुख पहुंच गए।

मालती बड़े चाव से कनाट प्लेस की दुकानों को देख रही थी। वह एल्प्स के सम्मुख पहुंचा तो रुककर खड़ी हो गई और बोली, "क्या एल्प्स रेस्ट्रां यही है ?"

प्रकाश खड़ा होकर बोला, "चाय पीना चाहती हो क्या मालती ?"

मालती मुस्कराकर बोली, "सुना है बहुत अच्छा रेस्ट्रां है यह। हमारी एक प्रोफेसर कहा करती थीं कि जब वे अपना विवाह करने के पश्चात् हनीमून मनाने के लिए मसूरी जा रही थीं तो संध्या समय का भोजन उन्होंने अपने पति के साथ इसी रेस्ट्रां में किया था।···चलिए देखें तो सही इसमें ऐसी क्या विशेषता है जिसका बखान करते-करते वे अघाती नहीं थीं।"

चलते-चलते प्रकाश बोला, "सोच लो मालती, रेस्ट्रां में प्रवेश करने से पूर्व। इस रेस्ट्रां का वातावरण ही कुछ ऐसा है।"

मालती मुस्कराकर बोली, "सोच लिया मैंने प्रकाश बाबू ! परन्तु पता नहीं आपको रेस्ट्रां में प्रवेश करने में इतना संकोच क्यों हो रहा है। ऐसे रेस्ट्रां में अकेले जाने का सम्भवतः कभी आपने साहस न किया हो। और अकेले जाने में सचमुच यहां भय भी है। परन्तु अब तो मैं हूं आपके साथ, फिर चिंता की क्या बात ?"

प्रकाश समझ न सका मालती की इस बात को। प्रकाश का जन्म दिल्ली में ही हुआ था और आज तक का उसका जीवन भी दिल्ली में ही व्यतीत हुआ था, परन्तु उसे इस प्रकार होटलों में घूमने और सिनेमाओं के चक्कर लगाने का शौक कभी नहीं रहा।

उसके जीवन के आज तक के शौक, अच्छा खाना-पहनना, जमकर अपना अध्ययन करना, खेलना-कूदना और अधिक से अधिक किशोर के साथ ओखला, महरौली या ऐसे ही अन्य स्थानों की कभी-कभी सैर को निकल जाना, रहे थे। स्कूल-कालेज में होनेवाले उत्सवों में वह खूब भाग लेता था। वहां के कार्यक्रमों में उसका विशेष भाग होता था। इन होटलों में वाही-तबाही घूमनेवाले कालेज के छात्रों में वह कभी नहीं रहा। इन होटलों की शक्ल भी उसने कभी नहीं देखी थी। यहां तक कि नई दिल्ली तक में आने का उसे कभी कोई शौक नहीं रहा। परन्तु आज मालती के आग्रह को टालना उसके लिए असम्भव था। मालती का आकर्षण उसकी सब प्रवृत्तियों पर

छा गया था। वह मालती को मना नहीं कर सकता था किसी बात के लिए।

प्रकाश को लगा कि उसके जीवन में नवीन प्रवृत्तियां प्रवेश करना चाहती हैं। उसने मुस्कराकर मालती से पूछा, "इन होटलों में अकेले आदमी को जाने में क्या भय होता है मालती ?" कहकर प्रकाश ने प्रश्नवाचक दृष्टि से मालती के चेहरे पर देखा।

मालती ने मुस्कराकर कहा, "मालूम होता है आप दिल्ली में रहकर भी दिल्ली के होटलों की दुनिया से पूर्णतया अनभिज्ञ हैं। आपने इस दुनिया में कभी प्रवेश ही नहीं किया।"

प्रकाश ने उतनी ही सरलता से स्वीकार किया, "तुम्हारा अनुमान ठीक ही है मालती ! मैंने आज तक के अपने जीवन में केवल एक बार होटल में प्रवेश किया है और वह भी तब, जब हमारे कालेज की टीम को पार्टी दी गई थी। वह होटल भी पुरानी दिल्ली का ही था। नई दिल्ली का नहीं। मैं इन होटलों में कभी नहीं आया।"

मालती मुस्कराकर बोली, "तब चलिए आज आपको नई दुनिया का ज्ञान करा दूं। अच्छा हुआ आप मेरे साथ इस दुनिया में प्रवेश कर रहे हैं। वरना न जाने आज क्या दशा होती आपकी। कहीं भटक जाते तो जीजी आपको खोजती ही फिरतीं !"

प्रकाश और मालती ने एल्प्स रेस्ट्रां में प्रवेश किया तो सचमुच प्रकाश वहां का वातावरण देखकर स्तब्ध रह गया। सुन्दर, शानदार सोफों के बीच सुन्दर मेजें लगी थीं, जिनपर अधिकांश अंग्रेज पुरुष और स्त्रियां बैठे थे। कुछ अकेले और कुछ पेयर्स में थे। कुछ हिन्दुस्तानी युवक और युवतियां भी थे, परन्तु वे भी अंग्रेजों के ही नाती प्रतीत होते थे। बेपदर्गी में वे अंग्रेजों को भी मात कर रहे थे।

प्रकाश ने यह सब देखा तो उसे वहां का वातावरण कुछ भला प्रतीत नहीं हुआ। उसके मन में इस नई दुनिया के प्रति कोई आकर्षण पैदा नहीं हुआ।

मालती मुस्कराकर बोली, "आप तो सचमुच सहमे-से रह गए इस दुनिया को देखकर। दिल्ली में रहकर भी आप इस रंगीन दुनिया से

अपरिचित ही रहे। यह विचित्र बात है। देखिए कितने आनंदमग्न प्रतीत होते हैं ये सभी लोग। जीवन का उल्लास इनके जीवन से फूटा पड़ रहा है।"

तभी सामने स्टेज पर बैठे कुछ साज़िन्दों की टोली ने आरकेस्ट्रा पर एक धुन छेड़ी, होटल में बैठे लोग उसे सुनकर झूम उठे। मालती भी आनंद-मग्न हो उठी।

प्रकाश का मन इस वातावरण से अन्दर ही अन्दर कुछ क्षुब्ध-सा हो उठा परन्तु उसने कुछ कहा नहीं, क्योंकि उसने देखा कि मालती उस सबमें बहुत रस ले रही थी।

यहां बैठे-बैठे पर्याप्त समय बीत गया। प्रकाश की दृष्टि अपनी कलाई पर बंधी घड़ी पर गई तो देखा आठ बज चुके थे।

प्रकाश बोला, "मालती, अब चलो। देखो आठ बज गए हैं। भाभीजी ने कहा था कि आने में विलम्ब न करना।"

मालती मुस्कराकर बोली, "चलते हैं अभी! आरकेस्ट्रा की यह धुन समाप्त होने पर चलेंगे। सचमुच बहुत अच्छे आर्टिस्ट हैं इस रेस्ट्रां में! हमारी प्रोफेसर उचित ही प्रशंसा करती थीं इस रेस्ट्रां की। देहरादून में यह सब कुछ नहीं है प्रकाश बाबू! दो-चार रेस्ट्रां हैं अवश्य, परन्तु उनमें यह रौनक कहां! यहां की रौनक देखकर तो सचमुच दिल मचल उठता है।"

आरकेस्ट्रा की धुन समाप्त होने पर दोनों उठकर बाहर आए।

बाहर निकलकर प्रकाश ने खुलकर सांस ली। वहां बैठे-बैठे उसका दम कुछ घुटने लगा था। वहां का निर्लज्ज वातावरण उसे कतई पसंद नहीं आया।

दोनों ने एक टैक्सी ली और चांदनीचौक की ओर चल दिए। इस समय दोनों के मन बहुत प्रसन्न थे।

मार्ग में मालती ने मुस्कराकर पूछा, "कैसी लगी आपको यह रेस्ट्रां की रंगीन दुनिया?"

"तुम्हें पसंद आई मालती तो मुझे भी अच्छी ही लगी, परन्तु सच यह है कि मैं कुछ अधिक दिलचस्पी नहीं ले सका इसमें। हद दर्जे की निर्लज्जता थी यहां के वातावरण में। मुझे जीवन का यह रूप कतई पसंद

नहीं है। मेरा तो यदि सच पूछो तो दम-सा घुटने लगा था।"

"निर्लज्जता ! क्यों निर्लज्जता की यहां क्या चीज़ देखी आपने ? आमोद-प्रमोद में सब लोगों का इतना समय दुनिया की रंगीनियों के साथ निकल गया। अब सब लोग मौज के साथ अपने-अपने घर जाकर आराम करेंगे और कल सुबह तरोताजा उठकर अपने-अपने काम पर जाएंगे। तमाम दिन काम करके जब ये लोग यहां आते हैं तो यहां के वातावरण में दिन-भर की थकान को भूल जाते हैं।"

मालती की बात सुनकर प्रकाश मुस्करा दिया। परन्तु उसका मन उस रंगीनी की ओर आकर्षित न हो सका।

मालती ने सोच लिया आज पहला ही तो दिन था। आते-आते बान पड़ जाएगी इन्हें। आज जो दुनिया इन्हें आकर्षक नहीं लगी, कल इसी वातावरण में सैर करनेवाले पंछी बन जाएंगे ये भी। प्रथम बार किसी नये वातावरण में प्रवेश करने पर संकोच होता ही है।

मोटरगाड़ी तीव्र गति से आगे बढ़ रही थी।

८

विमला का जीवन सब प्रकार से सुखी था। विधाता ने उसे सभी सुख प्रदान किए थे। घर-बार अच्छा मिला था उसे। सास-ससुर उसे प्यार करते थे, अपने दिल का एक टुकड़ा समझते थे, अपनी आंखों का एक तारा मानते थे। उसके सुख तथा शांति के लिए वे अपना जीवन उसपर न्योछावर कर सकते थे। धन-धान्य से घर भरा-पूरा था। परन्तु यह सब होने पर भी उसका मन उदास ही बना रहता। उसका हृदय क्लांत रहता था। क्यों ? केवल इसलिए कि अपने जीवन की वास्तविक निधि को वह प्राप्त न कर सकी थी। वह अपने प्राणनाथ के जीवन में सुख तथा शांति का संचार न कर सकी थी।

विमला की सास विमला के जीवन में आनेवाली इस दुर्घटना से अपरिचित नहीं थीं। इसीलिए वे कभी उसे अकेली नहीं छोड़ती थीं और

किशोर के पिताजी भी जब घर में प्रवेश करते थे तो सबसे पहले ये ही शब्द होते थे उनकी जबान पर, "हमारा विमल बेटा कहां है किशोर की माताजी ! क्या कर रहा है वह ?"

ससुर के ये स्नेहपूर्ण शब्द सुनकर दो घड़ी के लिए विमला का मन कुछ और-सा हो जाता था। परन्तु फिर वही पीड़ा उसके हृदय और मस्तिष्क पर छा जाती थी। स्थायी कष्ट उसकी आत्मा को कचोटने लगता था और उसका मन दुःखी हो उठता था।

आज वह अनायास ही किशोर के कमरे में चली गई और वहां जाकर उसने देखा कि एक कोने में इकतारा रखा हुआ था।

विमला ने वह इकतारा उठाया और उसपर धुन निकालनी प्रारम्भ कर दी। वह कमरे में एक ओर बिछे तख्त पर बैठ गई और इकतारा बजाती-बजाती धीरे-धीरे गुनगुनाने लगी। वह अपना वही प्रिय गीत गाने लगी—जिसे गाकर वह दो घड़ी के लिए अपने हृदय के व्यापक दुःख पर विजय प्राप्त कर लेती थी।

"मीरा के प्रभु गिरिधर नागर, दूसरो न कोई।" यही विमला का सबसे प्यारा गाना था।

संगीत का स्वर सम्पूर्ण घर के वायुमंडल में व्याप्त हो गया। किशोर की माताजी को लगा कि मानो घर में आनंद की लहर दौड़ गई। घर में सुख तथा शांति का साम्राज्य छा गया।

उसी समय किशोर ने घर में प्रवेश किया और वह सामने आंगन में बैठी अपनी माताजी के पास जा बैठा।

आज किशोर का मन भी बहुत उदास-सा था। वह कई बार प्रकाश के घर गया था परन्तु प्रकाश से उसकी भेंट नहीं हो सकी थी। जब जाता था तो आंगन में सरोज भाभी ही हस्तिनी के समान झूमती और इठलाती हुई मिलती थीं।

दो घड़ी उनसे बातें करने में निकालकर किशोर वापस लौट आता था। उन्हींसे उसे पता चलता था कि प्रकाश मालती के साथ कहीं गया है सैर-सपाटे के लिए। सम्भवतः नई दिल्ली की सैर को गया है और शायद सिनेमा गए हों दोनों।

वह निराश मन अपने घर लौट आता था। इस समय भी वह वहीं से आ रहा था।

उसकी माताजी ने पूछा, "कहां से आ रहे हो किशोर ?"

"प्रकाश के घर से।" किशोर ने भारी मन से कहा।

"क्या कर रहा था प्रकाश नटखट ?"

"था नहीं घर पर। सरोज भाभी ने बतलाया कि उनकी छोटी बहिन मालती के साथ सिनेमा गया है।"

"सिनेमा ! और कुंवारी लड़की के साथ !"

अपनी माताजी की बात सुनकर किशोर मुस्कराकर बोला, "कुंआरी भी अब चन्द दिन में ब्याही हो जाएगी माताजी ! सरोज भाभी कहती थीं कि प्रकाश ने 'हां' कर दी है मालती के साथ विवाह करने के लिए।"

तभी विमला के मधुर रस में डूबे उसके संगीत के बोल किशोर के कानों में पड़े तो उसे लगा कि मानो अमृत की बूंदें किसीने उसके कानों में गिरा दीं। उसका हृदय संगीत की लहरों पर तैरने लगा। संगीत की मिठास उसके कानों में भरने लगी। वह संगीत-रस में धीरे-धीरे डूबता जा रहा था। उसका हृदय और मन तरंगित हो उठे। इतना सरल और मीठा स्वर उसके कानों में प्रथम बार पड़ा था।

किशोर स्वंय भी संगीत में अच्छी दक्षता रखता था। अपने कालेज की हर प्रतियोगिता में उसने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया था। वह अपने मधुर कंठ के लिए कालेज में ही नहीं नगर-भर में ख्याति प्राप्त कर चुका था। अच्छे-अच्छे संगीत-समारोहों में वह भाग लेता था और उसकी प्रशंसा से समारोहों का वातावरण भर उठता था।

आज अचानक इस स्वर ने उसके कानों में प्रवेश किया तो उसका संगीतप्रिय मन प्रफुल्लित हो उठा। एक रस की धारा अनायास ही उसके हृदय में प्रवाहित हो चली। वह शांति के साथ उसे सुनने लगा और अपनी माताजी से उत्सुकतापूर्वक पूछा, "माताजी ! कोई गा रहा है घर में ? कौन गा रहा है इतने मधुर स्वर में ?"

"इतना मधुर कौन गा सकता है भला किशोर ?" किशोर की माताजी ने मुस्कराकर कहा।

किशोर कुछ समझा नहीं अपनी माताजी की बात। वे मुस्करा रही थीं और मुस्कराती हुई ही बोलीं, "मेरी बहूरानी गा रही है किशोर! वह बहुत अच्छा गाती है और नृत्य करती है तो प्रतीत होता है कि मानो राजरानी मीरा उतर आई है हमारे घर के प्रांगण में। संगीत और नृत्यकला की अवतार है मेरी बहूरानी!"

किशोर स्तब्ध-सा रह गया अपनी माताजी की बात सुनकर। उसके कानों में इस समय सरोज भाभी के वे शब्द बज उठे जो उन्होंने कल ही उसका उदास चेहरा देखकर उससे कहे थे। उन्होंने कहा था, "देवरजी! आपने विमला का रंग-मात्र ही देखा, उसके रूप तक आपकी दृष्टि नहीं पहुंच सकी, और उसके गुणों को तो परखने का कोई प्रयत्न ही नहीं किया आपने। विधाता ने कला की देवी बनाकर भेजा है उसे संसार में!"

विमला गाती-गाती मुग्ध हो उठी थी। उसे सुध-बुध ही न रही कि वह कहां बैठी गा रही थी। उसने आज इकतारे पर बहुत दिन पश्चात् गाया था। इकतारे पर गाना उसे बहुत प्रिय था। यह साज उसे आज अपने मनपसंद मिला था। वह आत्मविभोर हो उठी थी गाते-गाते। उसे अपने तन-बदन की सुध ही नहीं रही थी।

विमला का संगीत इतना स्वरमय था कि किशोर तन्मय हो उठा। उसकी आत्मा संगीत की ओर को खिचती चली जा रही थी। उस मधुर संगीत के अतिरिक्त अब कोई और चीज ही मानो नहीं रही उसके सम्मुख।

अबोध बालक के समान वह उठा और अपने कमरे की ओर चल दिया। परन्तु कमरे के द्वार पर जाकर उसके पैर ठिठक गए। वह द्वार पर जाकर खड़ा हो गया। उसके आगे बढ़ते हुए कदम रुक गए। वह वहीं पर खड़ा रह गया।

किशोर का यह आकर्षण बहूरानी के संगीत की ओर देखकर किशोर की माताजी के मन की मुरझाई हुई कलिका अनायास ही खिल पड़ी। उनका हृदय गुदगुदा उठा। उनके मन में आया कि उसी समय किशोर के पिताजी को जाकर इस शुभ समाचार की सूचना दें।

किशोर द्वार पर पहुंचा तो कमरे में प्रवेश करने का उसमें साहस नहीं हुआ। इतनी विलक्षण कलाकार का अपमान करके वह किस मुंह से

उसके सम्मुख जाए ? किशोर लज्जा से गड़ा जा रहा था। उसे बहुत दिन पूर्व की वह बात स्मरण हो आई जब एक बार प्रकाश अपनी धुन में नारी के बाहरी रूप की प्रशंसा किए चला जा रहा था तो उसने क्षुब्ध होकर कहा था, 'तुम क्या कहे जा रहे हो प्रकाश ! यह रूप, जिसकी तुम इतने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा कर रहे हो केवल नेत्रों का सुख-मात्र है। इससे अधिक कुछ नहीं। यह हृत्तंत्री को तरंगित नहीं कर सकता। आंखों की प्यास-मात्र बुझा सकता है। रस की धारा प्रवाहित नहीं कर सकता व्यक्ति के मानस में। नारी का जो रूप हृदय में रस की धारा प्रवाहित कर सकता है वह है उसकी कलाकारिता और उसका सरल स्वभाव। यह ऊपरी रूप तो केवल धोखा-मात्र है।'

नारी के जिन गुणों की किशोर ने उस दिन इतने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की थी आज जब वह उसके अपने जीवन में आया तो वह उसके प्रति उदासीन होकर बैठ गया। वह स्वयं भी नारी के उसी रूप का शिकार हो गया जिसकी प्रकाश प्रशंसा कर रहा था।

किशोर अपने प्रति क्षोभ से भर उठा। उसने अपने अन्दर आत्मग्लानि का अनुभव किया। उसे लगा कि वह विमला के समक्ष जाने के योग्य नहीं था।

किशोर ने चाहा कि वह द्वार से लौट पड़े और जाकर माताजी के पास आंगन में बैठ जाए, परन्तु उसके पैर मानो जड़ हो गए। वह एक पग भी पीछे नहीं रख सका। वह चाहकर भी वापस न लौट सका। विमला के संगीत-स्वर ने उसकी आत्मा को कसकर अपने बंधन में बांध लिया था। वह बेबस था इस समय।

विमला उन्मुक्त वाणी में गा रही थी। किशोर ने देखा कि वह साक्षात् मीरा के समान उसके तख्त पर उसीका इकतारा लिए गा रही थी। वह खिड़की की ओर मुंह किए बैठी गा रही थी। उसे पता ही नहीं था कि उसके द्वार पर कौन खड़ा था। उसे क्या पता था कि उसकी संगीत-कला ने उसके जीवन के सुख तथा शान्ति को बटोरकर उसके द्वार पर ला खड़ा किया था। उसे क्या पता था कि उसके हृदय का स्वामी आज उसके गुणों पर मुग्ध होकर उसके द्वार पर खड़ा था।

किशोर का मन तरंगित हो उठा। विमला के काले रूप की छाया किशोर के नेत्रों की पुतलियों से तिरोहित हो गई। उसका सुन्दरतम रूप उसके सम्मुख आ गया। नारी के रूप की अपनी परिभाषा उसके मानस में साकार हो उठी।

किशोर अपने-आपको रोक न सका। वह धीरे-धीरे कमरे में प्रवेश कर गया। और आगे बढ़कर विमला के निकट पहुंच गया।

विमला को किशोर के कमरे में प्रवेश का कोई ज्ञान न हुआ। वह आत्मविभोर होकर गाती रही। उसके नेत्र बन्द थे और उसकी आत्मा उसके संगीत में एकाकार हो गई थी।

किशोर विमला के बिलकुल निकट पहुंचकर मौन खड़ा हो गया। वह प्रस्तर-मूर्ति के समान खड़ा था।

किशोर की माताजी ने किशोर को विमला के कमरे में प्रवेश करते देखा तो उनका हृदय हर्ष से बांसों उछलने लगा। उन्होंने मन ही मन कहा, 'विधाता उनपर आज दयालु हो उठे। बहूरानी के मधुर संगीत ने किशोर का मन बदल दिया।' वे हर्ष से कम्पायमान हो उठीं। उन्हें आज अपने जीवन में उस आनन्द की प्राप्ति हुई जिसके प्रति वे निराश हो उठी थीं।

किशोर ने ध्यानपूर्वक देखा कि संगीत जिसने उसके हृदय में रस की धारा प्रवाहित की थी और उसके मानस में आनंद को भर दिया था, वह विमला के हृदय की मार्मिक पीड़ा में डूबकर उसके पास तक पहुंचा था। उसने देखा कि विमला रो रही थी और उसके नेत्रों से मुक्त प्रवाह के साथ अश्रुओं की धारा बह रही थी। उसके नेत्रों से निकलकर बहनेवाले अश्रुओं का प्रवाह जितना तीव्र होता जाता था विमला की वाणी में उतनी ही मिठास भरता जाता था। वह रोती जाती थी और गाती जाती थी।

किशोर का हृदय अपने दुर्व्यवहार की याद करके टुकड़े-टुकड़े हुआ जा रहा था। उसके मस्तिष्क में आज असीम पीड़ा थी। उसके हृदय में अथाह वेदना थी। वह कर सकता तो इस देवी के चरणों पर मस्तक टिका-कर अपने अपराध की क्षमा-याचना करता।

विमला आत्मविभोर होकर गा रही थी। उसके हृदय की पीड़ा उसके

स्वर में भरकर उसके स्वर को मधुरतम बना रही थी। उसके संगीत से रस की धारा प्रवाहित हो चली थी।

गाते-गाते वह व्याकुल हो उठी और अचानक ही तख्त पर एक ओर को निर्जीव-सी ढुलक पड़ी। उसे अपनी सुधबुध ही न रही।

विमला के हृदय की व्यापक पीड़ा ने विमला को गाते-गाते अचेत कर दिया।

किशोर भी यह देखकर व्याकुल हो उठा। वह लपककर तख्त पर चढ़ गया और विमला को अपने अंक में भरकर संभाला। उसने स्नेह से विमला का सिर उठाकर अपनी गोद में रख लिया।

किशोर ने धीरे-धीरे विमला के मस्तक पर हाथ फेरा। उसके बालों को अपनी उंगलियों से सहलाया और उसके रूप को निहारा तो वह स्तब्ध रह गया। विमला के चेहरे की बनावट को उसने देखा। उसके लम्बे चिरवां, बन्द नेत्रों को उसने देखा। उसके पतले-पतले होंठ और सुडौल ग्रीवा पर उसकी दृष्टि पड़ी तो उसका सांवला रंग मानो उसके समक्ष व्यर्थ हो उठा। किशोर के हृदय में अथाह पीड़ा और हर्ष का संगम एकसाथ बन उठा।

किशोर ने मन ही मन कहा, 'इतने सुन्दर रूप को गोरा-चिट्टा होने की क्या दरकार ? यह रूप दिखाना नहीं चाहता। इसीलिए विधाता ने इस रूप को सांवली आभा से ढक दिया है। न ढकता तो यह रूप मैला हो जाता।'

किशोर अपने-आपसे बोला, 'तू कितना मूर्ख निकला किशोर ! विधाता ने तुझे इतना अलौकिक रूप प्रदान किया और तू अपनी मूर्खता-वश उसका भी स्वागत न कर सका। तूने विमला का तिरस्कार करके विधाता का अपमान किया ! तू इस अनुपम रूप के प्रति अंधा हो गया !'

किशोर अचेतन अवस्था में ही विमला को न जाने कितनी देर तक लिए बैठा रहा। उसे विमला का रूप आज न जाने कितना अच्छा लग रहा था। उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि यह वही विमला थी जिसे उसने उस दिन देखा था जब वह रात-भर पलंग पर पड़ा-पड़ा आंखें बन्द किए उसांसें भरता रहा था और यह उसके पलंग के तकिये के सहारे खड़ी-खड़ी रोती रही थी।

किशोर विमला के रूप-दर्शन में इतना खो गया कि उसे यह भी ध्यान

न रहा कि विमला उसकी गोद में अचेत हुई पड़ी थी। उसे जाग्रत् अवस्था में लाने का उसने कोई प्रयास नहीं किया। वह मुग्ध होकर अपने मन में उसके रूप की प्रशंसा करता रहा और अपने भाग्य की सराहना करता रहा।

लगभग आधा घंटे पश्चात् विमला की चेतना लौटी। वह सकपकाकर उठना ही चाहती थी कि किशोर ने उसे धीरे से संभालकर कहा, "लेटी रहो विमला! तनिक मन और ठीक हो जाए तो उठना।"

विमला चुपके से सिर रखकर वहीं लेटी रह गई। उसने नेत्र बन्द कर लिए। वह अपने पति किशोर की गोद में सिर रखकर लेटी हुई थी। उसे यह सुख आज जीवन में प्रथम बार प्राप्त हुआ था। उसे अपनी अचेतन अवस्था में अचानक वह सुख प्राप्त हो गया जिसकी वह कल्पना भी नहीं कर सकती थी। उसे विश्वास नहीं हुआ इसपर। उसने एक बार फिर नेत्र खोलकर किशोर के चेहरे पर देखा तो पाया कि किशोर डबडबाए नेत्रों से एकटक उसके मुख पर दृष्टि पसारे मौन बैठा था। वह धीरे-धीरे उसके मस्तक पर हाथ फेर रहा था। उसके स्पर्श से विमला को अलौकिक आनंद की प्राप्ति हो रही थी।

किशोर ने धीरे से पूछा, "अब कैसा मन है विमला?"

विमला लजाकर कुछ बोली नहीं। उसने नेत्र बन्द कर लिए, परन्तु उसके चेहरे पर हर्ष की स्पष्ट रेखा खिंची देखी किशोर ने। किशोर ने विमला के श्वास-प्रवाह का अनुभव किया कि उसकी गति तीव्र हो चली थी। उसका हृदय हर्ष से पुलकायमान हो उठा।

प्रकाश का अपना श्वास भी पहले से तीव्र गति से वह चला था। उसके हृदय में आज वह आनन्द भर उठा था जिसका अनुभव-मात्र ही वह कर सकता था।

किशोर इसी प्रकार विमला को संभाले न जाने कितनी देर बैठा रहा और विमला किशोर की गोद में सिर रखे स्वर्गिक आनन्द के सागर में डुबकियां लगाती रही। वह आनन्द के इस सरोवर में स्नान कर रही थी जिसमें प्रवेश करने के लिए प्रथम बार पग बढ़ाते ही वह सरोवर के किनारे की कीचड़ में फिसलकर गिर पड़ी थी। परन्तु कितनी उदार निकलीं सरोवर की लहरें कि वे स्वयं उस कीचड़ में पड़ी विमला को उठाकर

अपने अंक में ले गई और अब वे उसे स्नान कराकर उसके अंग पर लगे पंक को धोकर उसके रूप को निखार रही थीं।

विमला का मानस पुष्प के समान महक उठा। उसके सांवले-सलौने रूप में और निखार आ गया। उसका मन पुलकायमान हो उठा। उसने मन ही मन मुरलीवाले मनोहर की स्मृति की, और श्रद्धापूर्वक कहा, 'गिरिधर गोपाल ने आखिर मेरी प्रार्थना सुन ही ली!' उसका मन अपने इष्टदेव के चरणों में श्रद्धा से झुक गया। उसे लगा कि उसका पीड़ा से कराहता हुआ भारी मन पुष्प के समान हलका होकर आनन्द की मौजों में हिलोरें लेने लगा। वह आनन्दमग्न हो उठी।

किशोर ने धीरे-धीरे विमला के मस्तक को सहलाना आरम्भ किया तो विमला को पता नहीं कितना सुख मिला। उसे लगा कि मानो उसके प्राणनाथ ने उसे छूकर उसके मानस में दहकनेवाली ज्वाला को शांत कर दिया।

वह इस समय अपने पति के क्रोड में सिर धरे नहीं लेट रही थी बल्कि सुख तथा शान्ति की शय्या पर पड़ी चैन की बंसी बजा रही थी। वह आनन्द की सरिता में स्नान कर रही थी। उसके जीवन का सारा सन्ताप, सारी वेदना, सारी जलन काफूर हो चुकी थी।

किशोर की माताजी ने कनखियों से खड़ी होकर यह दृश्य देखा तो वे आत्मविभोर हो उठीं। उनके दिल में जलनेवाली भयंकर ज्वाला मानो एकदम शांत हो गई। उन्हें आज आत्मिक सुख की प्राप्ति हुई। उनका जो आनन्द विधाता ने उनसे कुछ दिन पूर्व छीन लिया था वह आज उन्हें फिर लौटा दिया।

उन्हें विश्वास न हुआ अपनी आंखों पर तो वे खड़ी होकर दुबारा देखने गईं। विमला को किशोर की गोद में सिर धरे लेटी और किशोर को उसके मस्तक पर हाथ फेरते देखकर उनके आनन्द का पारावार न रहा। उनकी कामना का सूखता हुआ वृक्ष मानो फिर से हरा-भरा हो उठा। उन्होंने उसे लहलहाते और पुष्पों से आच्छादित होते देखा।

उन्होंने अपने घर के उस छोटे-से पूजागृह में जाकर राधाकृष्ण के सम्मुख हाथ जोड़कर गद्‌गद स्वर में कहा, "देव! तुमने मेरी प्रार्थना सुन

ली। मेरी मनोकामना आपने पूर्ण कर दी। मेरे इकलौते पुत्र की उजड़ती हुई दुनिया को तुमने आबाद कर दिया। उसे घोर निराशा के सागर में डूबने से बचाकर आप उसे किनारे पर ले आए!"

वे बहुत प्रसन्न थीं इस समय। उनका मन आनन्द से भर उठा था और सोच रही थीं कि इस सुखद घटना को वे किशोर के पिताजी से कैसे कहेंगी। वे कैसे उन्हें बतलाएंगी कि कैसे किशोर बहूरानी के स्वर में बंधा हुआ उसके निकट जा पहुंचा और किस प्रकार उसके सिर को अपने अंक में रखकर उसके मस्तक को सहलाने लगा। कैसे बहूरानी के मधुर स्वर की सरस धारा ने किशोर के हृदय की सूखी हुई धारा को भर दिया और कैसे उनके बच्चे के जीवन की सूखती हुई खेती हरी-भरी होकर लहलहा उठी। उन्हें तभी अपने पति के वे शब्द स्मरण हो आए जब उन्होंने विमला की प्रशंसा करते समय उसके मधुर कंठ की सराहना की थी और कहा था, "नारी का रूप उसकी गोरी चमड़ी ही नहीं होती किशोर की माताजी! नारी का वास्तविक रूप उसके गुण होते हैं।"

वे तो आज तक समझ ही न पाई थीं कि उनका इतना सरल और सरल किशोर कैसे ऐसा कुंठित हृदय बना बैठा कि अपनी प्राणेश्वरी के रूप और गुणों को परखने की क्षमता भी उसमें न रही। नारी के सफेद चिट्टे बगुले जैसे रूप के प्रति अनायास ही उनके मन में खीज-सी उत्पन्न हो उठी। वे अपने मन में बोलीं, 'मरा कितना बुरा है नारी का यह बगुले जैसा गोरा-चिट्टा रूप, कि जिसने मेरे पुत्र किशोर की आंखों पर पर्दा डाल दिया। जिसने इतने दिन के लिए मेरे पुत्र और मेरी पुत्रवधू के जीवन को क्लान्त कर दिया।'

किशोर धीरे से अपना मुंह विमला के कान तक लेजाकर बोला, "विमला! मुझसे तुम्हारे प्रति, न जाने क्यों, जो घृणित व्यवहार हुआ है, क्या उसके लिए तुम मुझे क्षमा कर सकोगी? मेरी आत्मा बहुत दुखी है अपने दुर्व्यवहार के प्रति!"

विमला का हृदय अपने पति के ये मधुर वाक्य सुनकर उद्वेलित हो उठा। उसे स्वप्न में भी आशा नहीं रही थी कि यह शुभ घड़ी भी कभी उसके जीवन में आएगी जब वह अपने पति का प्रेम प्राप्त कर सकेगी। आज अनायास

ही अपने को इस सुख-सागर में स्नान करते देखकर उसके नेत्रों में स्नेह-जल उमड़ आया और उसकी चिरवां आंखों के दो कोनों में दो मोटे-मोटे अश्रु उभरकर दो मुक्ताओं के समान दमक उठे।

किशोर ने धीरे से अपना रूमाल निकालकर उन अमूल्य मोतियों को उसमें भर लिया और हलके-से विमला की ठोड़ी के नीचे उंगली लगाकर बोला, "विमला ! मेरी आंखों पर पर्दा पड़ गया था। मैं अपने सिद्धान्त और बुद्धि दोनों के मार्ग से विचलित हो गया था। मैंने बहुत बड़ी मूर्खता की। तुम क्षमा कर दो मुझे !"

विमला ने धीरे से किशोर के अपने मस्तक पर फिरते हुए हाथ पर अपनी हथेली रख दी। किशोर का हाथ स्थिर हो गया। उसने विमला का हाथ अपने हाथ में ले लिया। पति के प्रति नारी के हृदय की कोमल भावना के किशोर ने दर्शन किए। उसका हृदय उद्वेलित हो उठा। उसकी आशा का सागर तरंगित हो उठा।

किशोर धीरे से बोला, "तो समझ लूं विमला कि तुमने मुझे क्षमा कर दिया ? मैं अथाह निराशा के सागर में डूबा जा रहा था विमला ! तुम मुझे उसके अन्दर से निकालकर किनारे पर ले आईं। मेरा सरस और मधुर जीवन एकदम नीरस और कड़वा हो उठा था। मुझे प्रकृति असुन्दर प्रतीत होने लगी थी और सुन्दर से सुन्दर वस्तु की भी सराहना करने की मुझमें क्षमता नहीं रह गई थी। मेरे मानस पर संसार की कुरूपता छा गई थी। मुझे दुनिया की प्रत्येक वस्तु काली और कुरूप दिखलाई देने लगी थी विमला ! मेरी दृष्टि कुंठित हो गई थी। मेरी अंतश्चेतना विलुप्त हो गई थी। मेरा हृदय अंधा हो गया था, नेत्र दृष्टिविहीन हो गए थे। मैं कुछ सोच नहीं सकता था विमला, कुछ समझ नहीं सकता था विमला ! तुमने एक बार फिर मेरे हृदय को गति प्रदान कर दी और मेरे नेत्रों को दृष्टि। मेरी आंखों के सम्मुख जो अंधेरा बादल छा गया था, तुमने उसे चीर डाला। तुम वह विमला नहीं हो विमला, जिसे मैंने प्रथम दिन देखा था। वह तुम ही होतीं तो क्या मैं इतना अंधा हो जाता कि इतने अनुपम रूप की भी सराहना न कर पाता ?"

किशोर की बात सुनकर विमला के मुख पर स्निग्ध हास्य की रेखा खिंच

गई। उसने नेत्र खोलकर किशोर के मुखमंडल को निहारा, उस रूप को देखा जिसे घूंघट की ओट से देख-देखकर वह उसकी दीवानी हो गई थी। वह बोली नहीं फिर भी कुछ। उसके अधर-पल्लव खुल ही न सके। उसकी वाणी मौन ही रही। उसके नेत्र पति-दर्शन का सुधा-रस पान करते रहे।

विमला के होंठों की मुस्कराहट से किशोर का मानस महक उठा। उसने आज एक अलौकिक सुख की अनुभूति की। अपने जीवन के सरलतम रस की प्राप्ति की। उसका मानस सुख तथा शांति से भर उठा। उसके जीवन की निराशा का तिमिर प्रभात के सूर्य की किरणों ने भेद डाला। उसका हृदय-कक्ष आलोकित हो उठा।

किशोर बोला, "विमला! सचमुच बहुत मधुर गाती हो तुम! मैंने इतना मधुर संगीत आज तक नहीं सुना। तुम्हारे मधुर कंठ में पाषाण को भी पिघला देने की शक्ति है। तुमने आज मेरे पाषाण हृदय को ही पिघलाया है विमला! मेरा हृदय सचमुच पाषाण बन चुका था। उसमें चेतना होती तो क्या मैं ऐसा घृणित कार्य करता जैसा मैंने किया? मेरा हृदय पाषाण बन चुका था। मैंने विधाता का उपहास किया विमला!"

विमला फिर भी कुछ न बोली। वह किशोर के मुखचन्द्र से बरसनेवाले सुधा-रस का पान करती रही। ऐसे अद्‌भुत आनन्द की कल्पना के समय अपने मौन को वह चन्द शब्दों की गड़गड़ाहट से खंडित नहीं करनेवाली थी। जो सुख उसे आज विधाता ने प्रदान किया था उसकी अवधि को वह जितना भी आगे बढ़ा सकती थी बढ़ाना चाहती थी। वह चाहती थी कि जिस आनन्द में वह लेटी थी उसी आनन्द में जीवन-भर लेटी रहे।

अब विमला बिलकुल स्वस्थ और प्रसन्न हो गई थी। उसने धीरे से अपना सिर उठाया और साड़ी का आंचल संवारकर सिमटी-सी एक ओर को बैठ गई।

किशोर बोला, "विमला! तुम्हें कभी क्रोध तो नहीं आया मेरे दुर्व्यवहार पर।" और फिर सरल दृष्टि से विमला के चेहरे पर देखा।

विमला ने किशोर के नेत्रों में अपने नेत्र डालकर धीरे से सिर हिलाकर 'ना' का संकेत किया।

"फिर मुझे क्या समझा तुमने?"

"अपने को समझने का तो आपने अधिकार ही नहीं दिया था प्राणनाथ! मैं तो केवल यही समझ पाई कि मैं अपने-आपको आपके सम्मुख ऐसी योग्य वधू के रूप में प्रस्तुत न कर सकी जो आपकी कृपापात्र बन जाती!" विमला सरल वाणी में बोली।

किशोर विमला की सरल और निश्छल वाणी सुनकर लज्जित हो उठा। उसने अपने उथले और विमला के गम्भीर चिंतन पर एकसाथ दृष्टि डाली और फिर विमला की ओर देखा तो देखता ही रह गया वह।

किसने कहा कि विमला रूपवती नहीं है? कौन कहता है विमला सुन्दर नहीं है? विमला को विधाता ने वह रूप प्रदान किया है जो अन्यत्र मिलना दुर्लभ है।

आज किशोर ने विमला के मुखमंडल को आंखें गड़ा-गड़ाकर देखा तो पाया कि रूप की अद्भुत कांति छिटक रही थी उसपर। विमला का ढका हुआ सौंदर्य अनावरण होकर उसके नेत्रों के सम्मुख आ गया था। वह मुग्ध हो उठा उसपर और विमला का हाथ अपने हाथ में लेकर बोला, "मेरे मन की रानी विमला! तुम्हारा रूप अवर्णनीय है। तुम्हारे रूप ने मेरे अंधकारपूर्ण मानस को प्रकाशपूर्ण कर दिया। मेरे हृदय की कुम्हलाई हुई कली को तुमने अपने रूप-जल से सींचकर खिला दिया। मेरे दग्ध हृदय को तुमने शीतल कर दिया!"

अपने पति के मुख से अपने को रूपवती सुनकर विमला के हृदय की क्या दशा हुई, यह वही जाने। उसे विश्वास नहीं हो रहा था अपने कानों पर। वह क्या सुन रही थी आज। क्या सचमुच उसके पति की दृष्टि में उसका रूप इतना आकर्षक हो उठा था? क्या सचमुच उसने अपने पति के मुरझाए हुए हृदय-पुष्प को खिला दिया था? क्या सचमुच उसने अपने दग्ध हृदय को शीतलता प्रदान की थी?

विमला ने किशोर के चेहरे पर देखा तो दीनता और सरलता की आभा मिली उसे। किशोर की वाणी में किशोर का हृदय बोल रहा था, उसकी आत्मा बोल रही थी।

विमला से रहा नहीं गया। वह किशोर के हृदय को और कष्ट नहीं पहुंचा सकती थी। वह मधुर स्वर में बोली, "प्राणनाथ! मैं अपने इष्टदेव

भगवान कृष्ण की पूजा का गीत गाती न जाने कैसे और कब अचेत हो गई। मैं स्वप्न देख रही थी और मेरे इष्टदेव मेरे सम्मुख खड़े थे। मैंने उनसे कहा, "देव ! मेरे मनमन्दिर का देवता मुझसे रूठ गया है। वह मेरे द्वार पर आते ही न जाने क्यों इतना कुंठित हो उठा कि उसके नेत्र बन्द हो गए। उसने मेरे मन-मन्दिर में प्रवेश करने से पूर्व ही....." कहते-कहते विमला की वाणी रुक गई। उसके नेत्र छलछला आए। उसके हृदय की धड़कन तीव्र हो गई।

विमला तनिक धैर्य धारण करके बोली, "प्राणनाथ ! तभी मेरे इष्ट-देव प्रसन्न होकर बोले, "तुम्हारे सौभाग्य को तुमसे कोई नहीं छीन सकता विमला !" और उनके इता कहते ही मेरी मूर्छा भंग हो गई। मैं सचेत हो उठी। मैंने अपने बदन को आपकी अंक में पड़ा पाया तो मुझे लगा कि मैं तब भी स्वप्न ही देख रही थी। मैं समझ ही न पाई कि यह सब क्या हुआ ? मेरे इष्टदेव भगवान कृष्ण का वरदान सार्थक हो उठा।" इतना करकर विमला ने कातर दृष्टि से किशोर की ओर देखकर डबडबाए नेत्रों में जल भरकर कहा, "नाथ, मैंने आपके हृदय को बहुत पीड़ा पहुंचाई। इसके लिए क्षमा-याचना करती हूं।"

किशोर के पास अब शब्द नहीं थे 'क्षमा' करने के लिए। क्षमा मांगता-मांगता किशोर स्वयं विमला की 'क्षमा' के सागर में गोते खाने लगा।

दो बिछुड़े हुए हृदय मिलकर आज एक हो गए। दो साथ-साथ मिल-कर बहने वाली सरिताएं जो दुर्भाग्य से पृथक्-पृथक् बहने लगी थीं वे फिर एक-दूसरे की बाहुपाश में आबद्ध हो गईं।

किशोर बोला, "विमला ! एक बार फिर अपना वही मधुर संगीत सुनाओ जिसने इन दो हृदयों की उजड़ती हुई दुनिया को फिर से आबाद कर दिया। जिसने दो प्राणियों की सूखती हुई खेती पर अपने स्नेह-जल की वर्षा करके उसे लहलहा दिया। लाओ मैं इकतारा बजाऊंगा और तुम गाना प्रारम्भ करो।"

किशोर ने इकतारा अपने हाथ में ले लिया और उसपर वही धुन छेड़ दी जिसे विमला गा रही थी। विमला के कंठ से एक बार फिर मधुर रागिनी

फूट पड़ी। किशोर के घर का वायुमंडल उसकी मिठास से भर गया।

तभी किशोर के पिताजी अपनी कपड़े की कोठी से घर आए तो किशोर की माताजी ने लपककर द्वार पर ही होंठों पर उंगली रखकर उन्हें न बोलने का संकेत किया। उन्हें भय था कि कहीं वे बोल पड़े तो किशोर और विमला का रस भंग हो जाएगा।

किशोर की माताजी ने चुपके से यह दृश्य किशोर के पिताजी को दिखलाया तो उनकी आत्मा प्रसन्न हो उठी। उनके दिल की मुरझाई हुई कलिका खिल गई।

९

मालती से प्रकाश के विवाह की बात निश्चित हो गई। प्रकाश ने आधुनिक रीति से विवाह किया। न स्वयं अधिक व्यय किया न सरोज भाभी को ही करने दिया। व्यर्थ दिखावे की उसने कोई आवश्यकता नहीं समझी।

प्रकाश ने अपने इष्ट-मित्रोंको दावत दी। मालतीकी इच्छा से इस दावत का प्रबन्ध नई दिल्ली के मेरीना होटल में किया गया। प्रकाश के सब मित्रों ने मालती के रूप की प्रशंसा की और उसकी योग्यता का भी सभीपर प्रभाव पड़ा। मालती को देखकर सभीको हर्ष हुआ। इस जोड़ी की सभी ने सराहना की।

किशोर के माता-पिता ने भी प्रकाश की शादी के उपलक्ष्य में अपने यहां एक विशाल भोज का आयोजन किया। प्रकाश अपनी शादी में कोई बाजा-गाजा नहीं ले गया था परन्तु आज किशोर के मकान पर बाजे-गाजों का वही ठाट था जो विवाहोत्सवों पर होता है। पूर्ण रूप से भारतीय ढंग की व्यवस्था थी वहां।

अपने ढंग की यह भी शानदार दावत रही।

प्रकाश और किशोर ने लगभग साथ-साथ अपने गृहस्थ-जीवन में प्रवेश किया।

किशोर अपनी दूकान पर बैठने लगा और प्रकाश हिन्दू कालेज में प्रोफेसर हो गया। अब ये दोनों केवल प्रकाश और किशोर न रहकर प्रोफेसर प्रकाश और किशोर भाई बन गए। इनके नामों को भी इन्हीं आदर-सूचक उपाधियों के साथ पुकारा जाने लगा। संक्षेप में इनके इष्ट-मित्र इन्हें प्रोफेसर साहब और भाईजी कहकर भी अपना काम चलाने लगे। प्रकाश नित्य नियम से अपने कॉलेज जाने लगे और किशोर भाई अपनी कोठी का काम देखने लगे।

मालती घर पर अपनी बहिन सरोज के साथ रहने लगी। परन्तु इसी बीच बाबू ब्रिजकिशनजी का दिल्ली से तबादला हो गया और उन्हें कलकत्ता जाना पड़ा।

बाबू ब्रिजकिशन और सरोज भाभी के दिल्ली से चले जाने पर प्रोफेसर प्रकाश का घर खाली-खाली-सा हो गया। प्रोफेसर प्रकाश जब कालेज चले जाते थे तो उनके पश्चात् मालती अकेली रह जाती थी घर पर।

मालती ने अपना यह खाली समय काटने के लिए कुछ दिन पुस्तकों का सहारा लिया परन्तु हर समय बैठकर पुस्तकें ही पढ़ते रहना भी उसके लिए कठिन हो गया। आखिर हर समय पुस्तकें ही कैसे पढ़ती रहे बैठी-बैठी।

प्रोफेसर प्रकाश ने प्रोफेसरी प्रारम्भ करते ही डॉक्टरेट करने के लिए एक थीसेस का विषय ले लिया और वे अपने काम में ऐसे लिप्त हुए कि उनका सारा समय कालेज और स्टडी में ही व्यतीत होने लगा।

मालतीकी नया विवाह करके सैर-सपाटा करनेकी आकांक्षाओंकी ओर प्रोफेसर प्रकाश ध्यान न दे सके। मालती नित्य सोचती कि प्रोफेसर प्रकाश संध्या को कालेज से लौटेंगे तो कनाट प्लेस घूमने चलेंगे, परन्तु प्रोफेसर प्रकाश लौटे तो उनकी बगल में चार मोटी-मोटी पुस्तकें दबी हुई थीं।

मालती ने पूछा, "ये इतनी पुस्तकें आप क्यों उठा लाए?"

प्रोफेसर प्रकाश हंसकर बोले, "मालती! ये पुस्तकें मैं जो शोधग्रन्थ लिख रहा हूं उसके विषय में अध्ययन करने के लिए लाया हूं। पुस्तकों के नोट्स लेकर इन्हें एक सप्ताह में पुस्तकालय को लौटा दूंगा। तुम जानती

हो कि सब पुस्तकें खरीदी नहीं जा सकतीं।"

यह सुनकर मालती का मन मुरझा-सा गया। वह मुंह भारकर बोली, "सारा दिन तो आपको पुस्तकों और लड़के-लड़कियों में सिर खपाते बीत जाता है। यह सन्ध्या का समय मिलता है कहीं जाने-आने के लिए, सो इस समय के लिए आप यह बला उठा लाए। मैं सारा दिन यहां बैठी मक्खियां मारती रहती हूं और सोचती रहती हूं कि आप सन्ध्या को लौटेंगे तो नई दिल्ली की ओर घूमने चलेंगे। परन्तु आप आते हैं तो आपको अवकाश ही नहीं होता कहीं जाने के लिए।"

मालती का उतरा हुआ चेहरा देखकर प्रकाश बाबू ने पुस्तकें मेज़ पर पटक दीं और हंसकर बोले, "रूठ गईं, बस ! इन पुस्तकों को पढ़ने का कौन समय बीता जा रहा है मालती ? थीसेस दो वर्ष में समाप्त नहीं होगा तो तीन वर्ष ले लेगा। थीसेस के लिए क्या तुम्हें अप्रसन्न होने दूंगा ? चलो चलते हैं घूमने के लिए। जिधर तुम्हारी इच्छा हो चलो, साड़ी पहन लो और हां आज वह बैंजनी रंग की साड़ी पहनना जिसे पहनकर तुम शादी के समय फेरों पर बैठी थीं।"

प्रो० प्रकाश की बात सुनकर मालतीदेवी का मन खिल उठा। उन्होंने तुरन्त जाकर वस्त्र बदल लिए और उसी बैंजनी रंग की साड़ी पर बैंजनी ब्लाउज़ पहना। मालती का रूप दमदमा उठा। प्रोफेसर प्रकाश मालती के साथ जाकर सिर-समान शीशे के सम्मुख खड़े हुए और दोनों ने दोनों की सूरत देखी तो दोनों के आनंद का पारावार न रहा। प्रकाश मालतीदेवी के सौंदर्य पर मुग्ध हो उठा और मालतीदेवी अपने पति के पौरुष और रूप पर अपने को भूल गईं।

दोनों नई दिल्ली पहुंचे। वोल्गा रेस्ट्रां में बैठकर दोनों ने शान के साथ चाय पी। वहां की रंगीन दुनिया की सैर की और फिर कनाट प्लेस का एक राउण्ड लगाकर दोनों प्रसन्न मुद्रा में अपने घर लौटे। दोनों का चित्त बहुत प्रसन्न था।

लगभग एक वर्ष यह जीवन चला जिसमें मालती की प्रवृत्ति सैर-सपाटे की ओर बढ़ी और प्रकाश को उसकी ओर से विरक्ति-सी होने लगी। फिर प्रोफेसर की आय भी इतनी नहीं होती कि वह नित्य होटलबाजी

कर सके। दो प्राणियों की छोटी-सी गृहस्थी को चलाने के लिए प्रोफेसर प्रकाश की डेढ़ सौ रुपये की आय पर्याप्त थी। मकान अपना घर का होने से प्रो० प्रकाश को बड़ी सुविधा थी, परन्तु जब उनका सारा वेतन ही होटलों के हवाले होने लगा तो उनके मन में चिन्ता उत्पन्न हुई। उन्हें इस होटलबाज़ी के जीवन से घृणा होने लगी और वे उसकी ओर से खिंचने लगे।

इस होटलबाज़ी ने उनका अध्ययन-कार्य भी चौपट कर दिया था। कालेज से लौटते थे तो मालतीदेवी नई दिल्ली को सैर-सपाटे के लिए चलने को तैयार बैठी मिलती थीं। मालतीदेवी को दुखाने का साहस प्रो० प्रकाश में नहीं था। वे अपने मन से मालतीदेवी को न जाने कितनी कोमल मानते थे। इसीलिए कभी कोई ऐसा शब्द भी वे अपनी ज़बान से नहीं निकालते थे, जिससे मालती देवी के हृदय को तनिक-सी ठेस लगे। यह जानते हुए भी कि नित्य सैर-सपाटे में निकल जाने से उनके कार्य में हानि हो रही है, वे कभी मालतीदेवी के प्रस्ताव की अवज्ञा नहीं करते थे। मालतीदेवी चलने को कहती थीं और प्रोफेसर प्रकाश उनके साथ-साथ हो लेते थे।

आज रात्रि को भोजन के उपरांत जब प्रो० प्रकाश और मालती अपने ड्राइंग रूम बैठे में तो प्रो० प्रकाश सरल वाणी में बोले, "मालतीदेवी, एक बात कहूं तुमसे ?"

"कहिए !" मालती ने मुस्कराकर कहा।

प्रो० प्रकाश भी मुस्कराकर ही बोले, "तुम्हें पता है कि अब हमारा खर्चा बढ़नेवाला है।"

मालती तनिक लजाकर बोली, "मालूम मुझे न होगा तो और किसे प्रकाश बाबू !"

"तो अब हमें यह नित्य की होटलबाज़ी बन्द कर देनी चाहिए। इसमें व्यर्थ समय नष्ट होता है और धन का भी अपव्यय होता है।" प्रोफेसर प्रकाश बोले।

"क्या कहा आपने ? हमें होटलों में जाना बन्द कर देना चाहिए !" मुस्कराकर मालतीदेवी बोलीं, "या हमें अपनी आमदनी बढ़ाने का प्रयास

करना चाहिए ? मैं सोच रही हूं प्रकाश बाबू कि मुझे अब वकालत प्रारम्भ कर देनी चाहिए। क्योंकि इसके अतिरिक्त मुझे आय बढ़ाने का अन्य कोई मार्ग सुझाई नहीं दे रहा।"

प्रोफेसर प्रकाश ने गम्भीरतापूर्वक पूछा, "तो क्या तुमने सचमुच निश्चय कर लिया मालती ! कि तुम वकालत प्रारम्भ करोगी ? क्या तुम्हें मेरा प्रस्ताव पसंद नहीं आया ?"

मालतीदेवी मुस्कराकर बोलीं, "काम सभीको करना चाहिए प्रकाश बाबू ! मैं नहीं चाहती कि मैंने जो कुछ पढ़ा है उसे निरर्थक कर दूं। फिर हम लोगों को अपनी आय भी बढ़ानी चाहिए। आय बढ़ाने से ही हम लोग अपना स्टैण्डर्ड ऊंचा उठा सकेंगे। आपके मित्र किशोर बाबू की आय अधिक है तभी तो उनके पास मोटरगाड़ी है। क्या हम लोगों के पास मोटरगाड़ी नहीं होनी चाहिए ?"

प्रोफेसर प्रकाश मालतीदेवी की बात सुनकर कुछ समझ नहीं सके। उन्हें अपनी आय पर सन्तोष था। दो प्राणियों के छोटे-से परिवार के लिए क्या उनकी आय पर्याप्त नहीं थी ? यह सच था कि इतनी आय में मोटर-गाड़ी नहीं रखी जा सकती परन्तु सभी लोगों पर मोटर होना आवश्यक भी तो नहीं है। मालतीदेवी से कुछ कहा नहीं उन्होंने।

अब मालतीदेवी ने सचमुच वकालत प्रारम्भ कर दी और उनकी ऐसी चली कि कमाल हो गया।

वर्ष दो वर्ष में ही मालतीदेवी की वकालत चार-पांच सौ रुपया मासिक की हो गई। उन्हें गर्व हो उठा अपनी आय पर।

इसी बीच में प्रोफेसर के घर में एक पुत्र का जन्म हुआ जिसकी प्रसन्नता में दम्पति ने एक दावत दी। इस दावत का प्रबन्ध मालतीदेवी ने मेडेन्स होटल में किया। प्रोफेसर प्रकाश ने चाहा कि दावत का प्रबन्ध वे अपने मकान पर ही करें, परन्तु मालतीदेवी इसके लिए सहमत न हुई। वे नहीं चाहती थीं कि उनके बड़े-बड़े क्लाइण्ट्स उनके इस सड़े मुहल्ले के सड़े मकान पर आकर नाक-भौं सिकोड़ें और उन्हें लज्जा से अपना सिर झुकाना पड़े।

इस दावत में प्रोफेसर प्रकाश के मित्रों ने भी भाग लिया और

मालतीदेवी के क्लाइण्ट्स भी आए। प्रोफेसर प्रकाश के अधिकांश मित्र बेचारे खरामा-खरामा घूमते हुए या किराये की सवारियों में ही दावत-स्थल तक पहुंचे, परन्तु मालती के क्लाइण्ट्स प्रायः सभी अपनी मोटरकारों में आए। उनमें अधिकांश नगर के धनी व्यक्ति थे।

मालतीदेवी उनकी कारों की पंक्ति की ओर संकेत करके प्रोफेसर प्रकाश से बोलीं, "देखिए प्रकाश बाबू! यदि हम लोग दावत का प्रबन्ध अपने मकान पर करते तो कितनी कठिनाई सामने आती इन लोगों के। ये लोग अपनी कारें कहां पार्क करते? फिर हमारा मकान भी बहुत छोटा था इस इतने बड़े आयोजन के लिए।"

प्रोफेसर प्रकाश आजकल अपना डाक्ट्रेट का थीसेस लिखने में लगे थे और मालतीदेवी ठाट के साथ अपनी वकालत कर रही थीं। वे अब अपने क्लाइण्ट्स के साथ ही नई दिल्ली की सैर को चली जाती थीं। प्रोफेसर प्रकाश को उनके कार्य में वे डिस्टर्ब नहीं करती थीं। वे कभी पूछती भी नहीं थीं उनसे अपने साथ चलने के लिए।

मालतीदेवी ने धीरे-धीरे अपने सम्बन्ध दिल्ली की बड़ी-बड़ी पार्टियों से बना लिए थे और उनकी वे लीगल एडवाइज़र बन गई। एक दिन मालतीदेवी जब संध्या को एक रेस्ट्रां में बैठी थीं तो तभी हाईकोर्ट के एक जज महोदय ने रेस्ट्रां में प्रवेश किया। उनकी दृष्टि मालतीदेवी पर पड़ी तो वे सीधे उन्हींकी टेबल पर पहुंच गए और बोले, "श्रीमती मालती-देवी बैठी हैं।"

मालतीदेवी जज साहब को देखकर खड़ी हो गईं और मुस्कराकर बोलीं, "आइए मिश्राजी!"

मिश्राजी मालती के बराबर ही सोफे पर बैठ गए। दोनों ने साथ-साथ चाय पी और फिर बैरे को बिल लाने के लिए आज्ञा की। बिल का पेमेण्ट श्रीमती मालती ने किया। मजिस्ट्रेट साहब ने लाख अनुरोध किया बिल पेमेंट करने का परन्तु मालती ने उन्हें पेमेंट नहीं करने दिया।

सेठ दामोदरप्रसाद के लड़के लाला किशोरीलाल भी उस समय इसी रेस्ट्रां में अपनी मित्रमंडली में बैठे थे। उनकी दृष्टि मालतीदेवी और हाई-कोर्ट के जज मिश्राजी पर गई तो उन्होंने आज ही मालतीदेवी से भेंट करने

का निश्चय किया। उनका एक पच्चीस लाख का केस मिश्राजी की अदालत में चल रहा था।

श्रीमती मालती की ख्याति दिन-दूनी और रात-चौगुनी बढ़ती जारही थी। अदालत के मजिस्ट्रेटों और जजों पर उनका प्रभाव बढ़ता जा रहा था। श्रीमती मालतीदेवी का रूप, उनकी योग्यता और तर्क-बुद्धि तीनों एकसाथ अदालत पर प्रभाव डालते थे। उनके समक्ष आकर विपक्षी वकीलों के होश उड़ जाते थे।

आज रात्रि को मालतीदेवी अपने कमरे में बैठीं तो एक नया ही क्लाइण्ट उनके यहां आया और उसने मालती देवी के कार्यालय पर चारों ओर दृष्टि फैलाकर कहा, "श्रीमती मालती देवी! आपकी इतनी बड़ी प्रेक्टिस है और यह कार्यालय है आपका। आपको चाहिए कि आप नई दिल्ली में अपना कार्यालय बनाएं।"

इस क्लाइंट की बात सुनकर मालतीदेवी बोलीं, "आपका फरमाना उचित ही है, परन्तु नई दिल्ली में स्थानों का बहुत अभाव है। मैं जानती हूं कि वहां पहुंचने से मेरी प्रेक्टिस बढ़ सकती है परन्तु धनाभाव में मैं अभी यहीं पर काम चला रही हूं। यह हमारा अपना घर का मकान है। यहां कोई किराया नहीं देना होता हमें।"

क्लाइण्ट मुस्कराकर बोला, "मेरा मकान नई दिल्ली में है। उसे भी आप अपना ही मकान समझें। मैं आपके लिए कार्यालय की व्यवस्था कर सकता हूं। आप चाहें तो चलकर देख सकती हैं वह स्थान।"

"सच!" आश्चर्यचकित होकर मालतीदेवी ने कहा, "नई दिल्ली में किस स्थान पर है आपका मकान?"

"ओडियन सिनेमा के ठीक सम्मुख है। वह पूरी बिल्डिंग आपकी अपनी ही है।" इस क्लाइण्ट ने कहा।

मालतीदेवी मुग्ध हो उठीं यह सुनकर। उनकी आत्मा प्रसन्न हो उठी। वे अनुभव कर रही थीं कि अब इस मालीवाड़े के कार्यालय से उनका काम नहीं चल सकता। इसमें रहकर उनकी प्रेक्टिस आगे नहीं बढ़ सकती। इस कार्यालय में बड़े-बड़े क्लाइण्ट्स को डील नहीं किया जा सकता। और जब तक बड़े-बड़े क्लाइण्ट्स हाथ में नहीं आते तब तक उनकी आय और

अधिक नहीं बढ़ सकती।

मालतीदेवी की आय अब लगभग सात-आठ सौ रुपया मासिक हो गई थी परन्तु इससे उन्हें सन्तुष्टि नहीं थी। वे एकदम उन्नति के उच्चतम शिखर पर पहुंच जाना चाहती थीं।

मालतीदेवी बोलीं, "तो आप वह स्थान कब दिखलाएंगे मुझे?"

क्लाइण्ट बोला, "अभी, इसी समय।"

"इसी समय!" मालतीदेवी ने मुस्कराकर कहा।

क्लाइण्ट बोला, "हां।"

"तो चलो।" कहकर मालतीदेवी उठकर चलने को तैयार हो गईं।

प्रोफेसर प्रकाश बराबर के कमरे में बैठे मालतीदेवी और इस क्लाइण्ट की ये बातें सुन रहे थे। उन्हें ये बातें भली नहीं लग रही थीं। वे दोनों के निकट आकर मालतीदेवी से बोले, "मालती! तुम अभी-अभी तो आकर बैठी हो और अभी फिर कहीं जाने को उद्यत हो गईं। कल चली जाना। वह मकान कहीं उठकर तो नहीं चला जाएगा रात-रात में।"

मालतीदेवी मुस्कराकर बोलीं, "प्रकाश बाबू! नेक कार्य जितना शीघ्र हो उतना शीघ्र कर लेना चाहिए। उसमें विलम्ब नहीं करना चाहिए।" और इतना कहकर वे बिना प्रोफेसर प्रकाश के उत्तर की प्रतीक्षा किए क्लाइण्ट के साथ चल पड़ीं।

प्रोफेसर प्रकाश देखते के देखते ही रह गए। उनके हृदय पर भारी ठेस लगी। पुत्र के जन्मोत्सव की दावत मेडेन्स होटल में करके मालतीदेवी ने प्रोफेसर प्रकाश की इच्छा के विरुद्ध कार्य किया था। और फिर वहां अपने क्लाइण्ट्स की मोटरों की कतार दिखलाकर मालतीदेवी ने प्रोफेसर प्रकाश और उनके सब मित्रों का अनादर किया था। परन्तु उन सब बातों पर एक सभ्यता का आवरण था। लेकिन आज जो कुछ हुआ वह उनकी इच्छा की स्पष्ट अवहेलना थी।

प्रोफेसर प्रकाश का मन अपने काम में न लग सका। उन्होंने अपनी पुस्तकें उठाकर एक ओर रख दीं और खरामा-खरामा कमरे में घूमने लगे।

मालतीदेवी के जीवन में धन की बढ़ती हुई लालसा को देखकर उन्हें लग रहा था कि वे प्रोफेसर प्रकाश से दूर जा रही थीं। उन्हें अब मालता

के हर काम में अपनी उपेक्षा की बू आने लगी थी। वह उपेक्षा होती मुस्करा-कर ही थी परन्तु मालतीदेवी की यह मुस्कान प्रोफेसर प्रकाश के दिल में गुदगुदी पैदा नहीं कर पाती थी। उलटी कुछ जलन और टीस का सा आभास उन्हें मिलता था अपने हृदय में।

प्रोफेसर प्रकाश का मन चिन्ताग्रस्त हो उठा। उनके माथे में हलका-हलका दर्द-सा होने लगा। उन्होंने कमरे में सामने लगे मालतीदेवी के चित्र की ओर देखा और वहीं खड़े होकर चित्र की ओर मुंह करके बोले, "मालती! जिस मार्ग पर तुम इतनी तीव्र गति से बढ़ रही हो। वह पता नहीं कहां ले जाएगा तुम्हें।" और फिर लम्बी उसांस लेकर बोले, "जाओ मालती! प्रकाश तुम्हारे मार्ग में रुकावट नहीं बनेगा कभी। तुमने आकर्षण से विकर्षण का मार्ग चुना है तो चलो उसीपर। तुम जहां जिस रूप में भी रहो सुखी रहो।" कहते-कहते प्रोफेसर प्रकाश की आंखों में आंसू भर आए। उनका हृदय दग्ध हो उठा।

मालतीदेवी एक घंटे पश्चात् लौटीं तो उनके मानस में आनन्द की हिलोरें उठ रही थीं। उनकी प्रसन्नता का पारावार नहीं था। उनके पैर सही तौर पर भूमि पर नहीं पड़ रहे थे। उनका मन अपनी सफलता का ब्योरा प्रोफेसर प्रकाश के सम्मुख प्रस्तुत करने को उतावला हो रहा था।

वे प्रोफेसर साहब के पास आकर बैठीं तो प्रोफेसर प्रकाश ने और भी ध्यान के साथ अपने नेत्र अपनी पुस्तक के पन्नों में गड़ा लिए।

मालतीदेवी अपनी इस उपेक्षा को देखकर खीझ-सी उठीं और कुढ़कर बोलीं, "क्या आज ही डॉक्ट्रेट की उपाधि लेने की ठान ली है आपने प्रकाश बाबू?"

मालती देवी की बात सुनकर प्रकाश बाबू ने गर्दन ऊपर उठाकर कहा, "तुम आ गई मालतीदेवी! चलो भोजन कर लें।"

परन्तु मालतीदेवी को कतई भूख नहीं थी। वे आज सेठ दामोदरप्रसाद के लड़के लाला किशोरीलाल को अपना क्लाइण्ट बनाकर आ रही थीं। कनाट-प्लेस के अन्दर शानदार आफिस के अतिरिक्त उन्होंने पांच हजार रुपये का एक चेक भी मालतीदेवी को उनकी फीस के बतौर दिया था। एक केस था उनका हाईकोर्ट में। उन्हें अपनी आज की असाधारण सफलता पर गर्व हो

उठा था। उन पांच हज़ार रुपये का नशा उनके नेत्रों की पुतलियों में खुमार बनकर छा गया था। प्रोफेसर प्रकाश रात-दिन मरकर भी क्या इतना धन कभी कमा पाएंगे। उनके सम्मुख प्रोफेसरी का पेशा अपने काम के सम्मुख चिउंटी और हाथी की तुलना में खड़ा दिखलाई दिया।

लाला किशोरीलाल को अपना क्लाइण्ट बनाकर फिर वे दोनों किसी रेस्ट्रां में चले गए थे और दोनों ने ठाटदार भोजन किया था। मालतीदेवी को इस समय कतई भूख नहीं लगी थी। सच बात यह थी कि उन्हें घर के रसोइये का बनाया भोजन कुछ पसंद भी नहीं आता था इसीलिए वे संध्या का भोजन किसी नई दिल्ली के रेस्ट्रां में ही कर लिया करती थीं।

प्रोफेसर प्रकाश इधर लगभग कई मास से यह प्रक्रिया देख रहे थे कि मालतीदेवी संध्या का भोजन घर पर नहीं करती थीं। उन्हें मालतीदेवी का यह कार्यक्रम भला नहीं लगता था।

मालतीदेवी बोलीं, "कर लेना भोजन भी।" और फिर पांच हजार का चेक प्रोफेसर प्रकाश के सम्मुख मेज़ पर रखकर बोलीं, "आप रोक रहे थे न मुझे। मैं नहीं जाती तो पता नहीं कल यह क्लाइण्ट हाथ आता या नहीं। ऐसे क्लाइण्ट कभी-कभी ही हाथ में आते हैं।"

प्रोफेसर प्रकाश के मन में यह पांच हज़ार का चेक देखकर कोई उत्तेजना पैदा नहीं हुई। उन्हें लगा कि यह कागज़ का टुकड़ा मालतीदेवी ने अपने पर्स से निकालकर उनकी मेज़ पर रख दिया था।

प्रोफेसर प्रकाश बोले, "मालूम देता है भूख नहीं है तुम्हें।" इतना कहकर वे कुर्सी से उठ खड़े हुए और रसोईघर में जाकर पंडित से बोले, "पंडित, थाली लगाओ हमारे लिए।"

पंडित ने प्रोफेसर साहब की थाली लगाकर पूछा, "क्या बहूजी भोजन नहीं करेंगी?"

प्रोफेसर साहब हंसकर बोले, "आज क्या कुछ नई बात है पंडित! जो बहूजी भोजन करेंगी। कहीं किसी होटल में खा लिया होगा उन्होंने। उन्हें घर का बना भोजन पसन्द नहीं है।"

पंडित बोला, "मेरा खाना नित्य बचा रह जाता है बाबूजी! मुझे नित्य सवेरे यही बचा हुआ खाना खाना होता है।"

प्रोफेसर साहब हंसकर बोले, "जब तुम जानते हो कि वे सन्ध्या का भोजन तुम्हारी रसोई में नहीं करतीं तो बनाते ही क्यों हो? न बनाया करो कल से।"

पंडित रुआंसा होकर बोला, "बाबूजी, घर में रहनेवाले किसी भी आदमी के लिए भोजन न बनाने पर बनानेवाले को पाप चढ़ता है। और फिर वह भी घर की मालकिन के लिए भोजन की व्यवस्था न करना तो और भी बड़ा पाप है।"

पंडित की भावुकतापूर्ण बात सुनकर प्रोफेसर प्रकाश के हृदय पर भारी ठेस लगी। उनके मन में कुछ बेचैनी-सी पैदा हो गई।

वे भोजन करके चुपके से घर से बाहर निकल गए और थोड़ा आगे बढ़कर किशोर के घर चले गए।

किशोर के यहां आए उन्हें काफी दिन हो गए थे। वे सीधे घर के आंगन में गए तो किशोर की माताजी भोजन बना रही थीं। प्रोफेसर प्रकाश ने जाकर उन्हें प्रणाम किया। किशोर की माताजी का मन हर्षित हो उठा, प्रोफेसर प्रकाश को देखकर वे बोलीं, "अरे! इतने दिन कहां रहा तू प्रकाश। अपनी माताजी की भी सुध नहीं आई तुझे। ऐसा किस काम में फंसा था जो यहां आना भी भूल गया।"

प्रोफेसर प्रकाश तनिक लजाकर बोले, "कुछ काम में फंसा रहा माताजी। डाक्ट्रेट का थीसेस लिख रहा हूं। उसीमें रात-दिन उलझा रहता हूं। बहुत कम अवकाश मिलता है इधर-उधर जाने का।"

"अच्छा-अच्छा! खूब पढ़ो बेटा! खूब विद्वान बनो। तुम्हारी योग्यता की बात सुनती हूं तो मन फूला नहीं समाता।"

माताजी के मुख से ये शब्द सुनकर प्रोफेसर प्रकाश का भारी मन तनिक हलका हो गया। उन्हें सांत्वना-सी मिली कुछ माताजी के इन शब्दों से। उनके मन की उदासी भी तनिक दूर हुई।

प्रोफेसर प्रकाश ने पूछा, "क्या किशोर भाई अभी नहीं लौटे माताजी कलकत्ता से?"

माताजी ने सामने किशोर के कमरे की ओर संकेत करके कहा, "भोजन कर रहा है किशोर बेटा! जाओ वहीं चले जाओ। यहां अंगीठी

की गर्मी भी हो रही है। वहीं पंखे के नीचे बैठना।"

प्रोफेसर प्रकाश ने वहीं से देखा तो किशोर और विमलारानी दोनों चटाई पर बैठे एक थाली में भोजन कर रहे थे और मीठी-मीठी बातें कर रहे थे मुस्करा-मुस्कराकर।

यह देखकर प्रोफेसर प्रकाश ने अपने हृदय में महान शांति का अनुभव किया। किशोर भैया का भाभी के प्रति कुंठित हुआ मन यकायक इतना विशाल हो उठा, यह देखकर उनका मन मुस्करा दिया। वे स्वयं भी विधाता की विचित्रता पर मुस्करा दिए। किशोर भाई के जीवन के इस आकस्मिक परिवर्तन को देखकर उनकी आत्मा को महान शांति प्राप्त हुई।

प्रोफेसर प्रकाश की दृष्टि भाभी के अनावृत मुखमण्डल पर पड़ी तो वे चकित-से रह गए। उनका सांवला वर्ण उनकी दृष्टि के सामने से धुल गया और उन्होंने भाभी के रूप का जो निखार देखा उसे देखकर वे अपने-आप से कह उठे, 'क्या इसी रूपवती को तूने एक दिन 'काली-कलूटी' कहा था ?' उन्होंने अपने शब्दों का स्मरण कर अपने मन में लज्जा का अनुभव किया और अपने-आपको धिक्कारा।

वे कुछ देर तक बाहर ही खड़े-खड़े किशोर भाई और भाभी को भोजन करते हुए देखते रहे और फिर न जाने कब उनके पैर उन्हें किशोर के कमरे में उठाकर ले गए।

उन्हें देखते ही विमला ने अपना घूंघट तनिक नीचा कर लिया। किशोर भाई ने विमला को घूंघट खिसकाते और हाथ का कौर थाल में छोड़ते देख, मुड़कर पीछे की ओर देखा तो उनका सारा बदन पुलकायमान हो उठा। उनका हृदय हर्ष से खिल उठा।

किशोर भाई खड़े होकर प्रोफसर प्रकाश से लिपट गए और गद्‌गद स्वर में बोले, "प्रकाश, अच्छे तो रहे इतने दिन। मैं अभी-अभी भोजन करके तुम्हारे ही पास आने का विचार कर रहा था। आज ही सन्ध्या की गाड़ी से तो लौटा हूं कलकत्ता से। घर पर सब कुशलपूर्वक तो हैं। हमारा मुनवा सुबोध और उसकी मां तो सकुशल हैं।"

प्रोफेसर प्रकाश के मन का भारीपन अब बिलकुल साफ हो गया।

वे बोले, "सब कुशल है भैया किशोर! तुम तो सकुशल रहे कलकत्ता

में। कोई परेशानी तो नहीं हुई परदेश में ?"

"हां भैया, सब कुशल ही रही। अभी-अभी तुम्हारी भाभी कह रही थीं कि इधर बीच में तुम हमारे घर आए ही नहीं। ऐसे किस काम में फंसे रहे जो दो-चार घड़ी भी अवकाश नहीं मिला इधर आने का ?" किशोर भाई ने पूछा।

प्रोफेसर प्रकाश बोले, "फंसा ही रहा समझो किशोर भाई ! डॉक्ट्रेट करने का झमेला कुछ ऐसा पाल लिया है मैंने कि रात-दिन उसीमें उलझा रहता हूं। परन्तु अब लगभग कार्य समाप्त कर लिया है मैंने।"

"अच्छा ! तो प्रोफेसर प्रकाश डा० प्रकाश बनने की तैयारी में हैं। बहुत अच्छा भैया ! बहुत अच्छा ! मुझे गर्व है अपने भाई की योग्यता पर और खेद भी है कि मैं अपने भैया का साथ न दे सका। परन्तु तुममें और मुझमें क्या कोई अन्तर है ? तुम डा० प्रकाश कहलाओगे तो मैं डा० प्रकाश का बड़ा भाई क्या नहीं कहलाऊंगा ? एक वर्ष बड़ा हूं न तुमसे।" किशोर भाई सहर्ष बोले।

प्रोफेसर प्रकाश अवसर देखकर विमला की ओर मुंह करके बोले, "कुछ सुना भाभी आपने ! भैया यह बतलाकर कि ये मुझसे बड़े हैं, आपसे कह रहे हैं कि फिर यह घूंघट क्यों ? आप भैया के आशय को नहीं समझीं, इसलिए मुझे व्याख्या करनी पड़ रही है। तुम्हारे देवर ने काम ही व्याख्या करने का चुना है प्रोफेसर बनकर।"

किशोर भाई प्रोफेसर प्रकाश की बात सुनकर खिलखिलाकर हंस पड़े और विमला के घूंघट को देखकर बोले, "विमला ! प्रकाश सच कह रहा है। इसे मैंने आज तक अपने सगे छोटे भाई के तुल्य ही माना है। इसके सामने तुम्हारा घूंघट करना उचित नहीं होता।" और फिर प्रोफेसर प्रकाश की ओर देखकर बोले, "प्रकाश, तुम स्वयं भी तो अपनी भाभी के घूंघट को खोल सकते हो। डरते क्यों हो आखिर तुम ?"

किशोर भाई का यह वाक्य सुनकर विमला देवी ने स्वयं धीरे से अपना घूंघट ऊपर सरका लिया। उनके घूंघट से बाहर निकले मुस्कराते मुख को देखकर प्रोफेसर प्रकाश को लगा कि चांद बदली से बाहर निकल आया। नील कमल को लजानेवाली विमला भाभी के निर्मल रूप को देखकर

प्रोफेसर प्रकाश के हृदय को महान सांत्वना मिली। सरोज भाभी ने जो एक दिन विमला के रूप की प्रशंसा उनके सम्मुख की थी, उन्हें आज उसपर विश्वास हुआ।

किशोर भाई प्रोफेसर प्रकाश को एकटक अपनी भाभी के चेहरे पर आंखें गड़ाए देखकर बोले,"प्रकाश! सुन्दर है न तुम्हारी भाभी! ठीक वैसा ही है न जैसी तुम चाहते थे!"

प्रोफेसर प्रकाश श्रद्धापूर्ण स्वर में बोले,"उससे भी कहीं अधिक सुन्दर हैं भाभी, किशोर भाई! इस रूप का सचमुच कोई उत्तर नहीं है।"

प्रोफेसर प्रकाश के मुख से अपनी पत्नी के रूप की प्रशंसा सुनकर किशोर भाई मुग्ध हो उठे। वे और भी उत्साहपूर्ण स्वर में बोले, "भैया प्रकाश! तुम्हें एक बात और बतलाऊं। तुम्हारी भाभी केवल शक्ल-सूरत में ही रूपवती नहीं हैं, गुणों की भी खान हैं। यदि इनका मनोहर संगीत तुम किसी दिन सुनोगे तो तुम्हारी आत्मा को बहुत सुख मिलेगा।"

प्रोफेसर प्रकाश सरोज भाभी से विमलादेवी के संगीत की प्रशंसा सुन चुके थे और उसे सुनने की उनके मन में प्रबल आकांक्षा थी परन्तु किशोर भाई की उनके प्रति अनासक्ति ने इस घर का वातावरण इतना नीरस और निराशापूर्ण बना रखा था कि उनकी आकांक्षा का दम अन्दर ही अन्दर घुटकर रह जाता था। कई बार मन में प्रबल इच्छा उत्पन्न होने पर भी वे मुंह नहीं खोल पाए थे।

आज उपयुक्त अवसर देखकर प्रोफेसर प्रकाश बोले,"भाभी का मधुर संगीत सुनने की प्रबल आकांक्षा को मैं कितने दिन से अपने मन में दबाए बैठा हूं किशोर भाई! यह आप नहीं जानते। सरोज भाभी ने आपके मधुर स्वर की मेरे सम्मुख जिस दिन मुक्त कंठ से प्रशंसा की थी तो मेरा मन हुआ था कि मैं तभी यहां दौड़ा हुआ चला आऊं और भाभी से कहूं, 'भाभी, वही गाना सुनाओ जिसने सरोज भाभी पर जादू कर दिया था।' आप सच जाने भैया! कि सरोज भाभी जितने दिन भी यहां रहीं, शायद ही कोई दिन ऐसा गया हो जिस दिन उन्होंने मेरे सम्मुख भाभी के रूप और गुणों की प्रशंसा न की हो। परन्तु सच यह था कि मैं वह सब कुछ समझ ही न पाया था। आपकी भाभी के प्रति अनासक्ति और सरोज भाभी की प्रशंसा

में कोई सामंजस्य न देखकर मैं विचारशून्य रह जाता था। आपके समक्ष इस विषय पर बातें करने का मुझमें साहस ही न होता था। परन्तु आज प्रत्यक्ष देख रहा हूं कि सरोज भाभी ने जब-जब जो कुछ भी कहा वह कितना सत्य था।"

प्रोफेसर प्रकाश की बात सुनकर किशोर भाई ने अपने मन में लज्जा का अनुभव किया। वे तनिक लजाते-से बोले, "प्रकाश! मुझसे सचमुच तुम्हारी भाभी के प्रति महान अनर्थ बन पड़ा। पता नहीं मेरी आंखों पर कैसे वह पर्दा पड़ गया था कि जिसे चीरकर मेरी दृष्टि तुम्हारी भाभी के मुखचन्द्र की आभा को देख ही न सकीं।" और फिर हंसकर बोले, "सच बात बतला दूं प्रकाश तो वह यह है कि मेरे नेत्रों में तुम्हारी रूप की परिभाषा भरी हुई थी, उस समय जब मैंने तुम्हारी भाभी के मुख पर प्रथम दृष्टि डाली और मुझे जब इस चेहरे पर तुम्हारी परिभाषा की पहली शर्त का ही विरोधाभास मिला तो मेरे नेत्र बन्द हो गए। मेरे मन और नेत्र दोनों का उत्साह भंग हो गया, उनकी गति रुक गई। मेरी विचार-शक्ति कुंठित हो गई। परन्तु प्रकाश! मैंने अन्त में अनुभव किया कि तुम्हारी रूप की परिभाषा को तुम्हारी भाभी ने गलत साबित कर दिया और मेरी ही परिभाषा सही निकली।"

कोई और समय होता तो सम्भवतः प्रोफेसर प्रकाश इस प्रश्न पर तर्क करते। परन्तु आज तर्क करने का उनके पास कोई कारण नहीं था। रूप की अपनी परिभाषा की असारता उनके समक्ष अपनी पत्नी मालती के रूप में साक्षात खड़ी थी।

प्रोफेसर प्रकाश का चेहरा गम्भीर हो उठा और वे उतनी ही गम्भीर वाणी में बोले, "किशोर भाई, रूप के विषय में आपकी ही परिभाषा सत्य निकली। अपनी परिभाषा का उथला स्वरूप जितना प्रत्यक्ष मेरे समक्ष आज है, उतना अन्य किसी समय मेरे सम्मुख नहीं आया।" ये शब्द कहते समय प्रोफेसर प्रकाश के समक्ष मालतीदेवी की सूरत आकर खड़ी हो गई थी और वे स्पष्ट देख रहे थे कि नारी के ऊपरी रूप का आकर्षण कितना निराधार है।

प्रोफेसर प्रकाश के चेहरे और उनकी वाणी में यह आकस्मिक

परिवर्तन देखकर किशोर भाई स्तब्ध रह गए। परन्तु उन्हें प्रसन्नता बहुत हुई।

प्रोफेसर प्रकाश का हृदय अनायास ही अपनी पत्नी मालतीदेवी के अपने प्रति व्यवहार की याद करके पीड़ा से भर उठा था। उनका मन कह रहा था, 'वह रूप ही क्या जो अपने पति के हृदय और मस्तिष्क को शांति प्रदान न कर सके।'

जिस रहस्य को किशोर भाई समझने में असमर्थ रहे उसे समझने में विमला देवी को एक क्षण भी न लगा। वे मुस्कराकर बोलीं, "मालूम देता है आज देवरजी के हृदय को देवरानीजी ने अपने किसी व्यवहार से दुःखी कर दिया है।" और फिर मुस्कराकर बोलीं, "परन्तु अब इस प्रकार गम्भीर बनने से काम नहीं चलेगा देवरजी! उनकी कमियां आपको निभानी चाहिएं। उनकी कमियों को आप नहीं निभाएंगे तो कौन निभाएगा?"

"निभाऊंगा भाभी! प्राण रहते निभाने का प्रयास करूंगा। जो भूल मुझसे जीवन में बन पड़ी है, उसे सही करने का प्रयास करूंगा। जब मैंने अपने विवाह की स्वीकृति सरोज भाभी को दी थी तो मुझे मालूम है कि आपके पिताजी ने अपनी असहमति प्रकट की थी। उन्होंने स्पष्ट रूप से मुझसे कुछ नहीं कहा और यही कहा कि वे मेरे जीवन को सुखी देखना चाहते हैं, परन्तु उनकी वाणी में वह जो कुछ भी होने जा रहा था उसके प्रति घोर निराशा थी। उन्होंने दुःखी मन से सहमति प्रदान की थी। उनकी वह निराशा जो उस समय मुझे भली नहीं लग रही थी आज सोच रहा हूं कि मैंने क्यों नहीं उनकी उस घोर निराशा को अपने सीने से चिपटा लिया? मेरी बुद्धि नारी के ऊपरी रूप से आगे भी कुछ होता है यह समझने में अनभिज्ञ रही। पिताजी के दीर्घकालीन जीवन-अनुभव की उपेक्षा का अभिशाप मैं देख रहा हूं कि जीवन-भर मुझे दग्ध करता रहेगा।"

इसके पश्चात् प्रोफेसर प्रकाश ने किशोर भाई और विमला भाभी के समक्ष अपने और मालती देवी के आज तक के जीवन की पूरी कहानी सुनाई तो उसे सुनकर वे दोनों स्तब्ध रह गए। प्रोफेसर प्रकाश के जीवन में घटनेवाली इस दुर्घटना का ज्ञान प्राप्त करके उन्हें असीम वेदना हुई और दोनों ने करुणापूर्ण दृष्टि से प्रोफेसर प्रकाश के चेहरे पर देखा। उन्होंने

देखा कि प्रोफेसर प्रकाश के नेत्रों में जल छलछला आया था। परन्तु भैया और भाभी के समक्ष अपनी आंतरिक वेदना को स्पष्ट करके उनके हृदय को कुछ सांत्वना अवश्य मिली। उनके मन का भार कुछ हलका-सा हुआ और उन्होंने अपने हृदय में उठनेवाले बवंडर को दबाकर बलात् होंठों पर मुस्कराहट लाकर कहा, "किशोर भाई ! जो होना था वह हो चुका। अब तो सहन करने की बात शेष है। सो सहन करता रहूंगा उस समय तक जब तक इस शरीर में श्वास चलते रहेंगे। प्रकाश का शेष जीवन अब सहन करने के अतिरिक्त और रह ही क्या गया है ?"

आज इससे अधिक बातें न हो सकीं। रात काफी हो गई थी। प्रोफेसर प्रकाश उठकर चले तो किशोर भाई उन्हें उनके मकान तक छोड़ने आए। मार्ग में दोनों ने कोई बात नहीं की। किशोर भाई का मन प्रोफेसर प्रकाश के जीवन में आनेवाली इस निराशा को देखकर दुःखी हो उठा।

उन्होंने अपने घर लौटकर विमला देवी से कहा, "विमला ! मालती ने प्रकाश के जीवन को घोर निराशा के अंधकार में धकेल दिया। मुझे पहले ही भय था कि यह लड़की प्रकाश के जीवन में शांति और सुख का संचार नहीं कर सकेगी। उसे अपनी वकालत में जो सफलता मिली है उसने उसके मस्तिष्क को खराब कर दिया है। उसने प्रकाश का कहना न मानकर प्रकाश को आज बहुत कष्ट पहुंचाया। ऐसा उसे नहीं करना चाहिए था।"

विमला देवी को इस समाचार ने बहुत कष्ट पहुंचाया।

१०

मालतीदेवी को अपने प्रति किया गया आज प्रोफेसर प्रकाश का व्यवहार अत्यन्त अपमानजनक प्रतीत हुआ। उन्होंने अपनी दृष्टि से आज तक कोई ऐसा कार्य नहीं किया था जिसपर प्रकाश बाबू को बुरा मानने का कोई कारण होना चाहिए।

उन्होंने अपनी योग्यता से अपने परिवार को सम्पन्न बनाने का प्रयास

किया तो इसमें क्या अपराध किया उन्होंने ? उनके अर्जित धन के प्रति प्रकाश बाबू के मन में इतना उपेक्षा का भाव क्यों जाग्रत् हो ?

उन्हें होटलों की दुनिया पसंद नहीं थी और संध्या को नित्य घूमने जाने से उनके कार्य में हानि होती थी तो उन्होंने इन दोनों कामों से उन्हें मुक्त कर दिया। इसमें क्या अपराध किया उन्होंने ? उनके मन की किसी इच्छा का उन्होंने कभी विरोध नहीं किया। विरोध प्रकाश बाबू ने भी कभी इनके किसी कार्य का नहीं किया, परन्तु पीड़ा उन्हें अवश्य पहुंची। उनकी समझ में प्रकाश बाबू की पीड़ा का कोई कारण न आ सका।

उन्हें लगा कि प्रकाश बाबू ने उनके प्रति अन्याय किया। यह भाव मन में आते ही उनका मन अंगारे के समान दहक उठा। उन्हें मन ही मन कुछ ग्लानि-सी अनुभव होने लगी पुरुषों के व्यवहार पर। आखिर प्रोफेसर प्रकाश क्या पत्नी को एक कठपुतली-मात्र समझते हैं, जिसकी चोटी उनके हाथ में रहे और वे जिस प्रकार उसे नचाना चाहें नचाएं। एम० ए० तक शिक्षा प्राप्त करके भी इनके मस्तिष्क की रूढ़ियां खंडित न हो सकीं। ये पत्नी को अपने उसी संकुचित दृष्टिकोण से परखते हैं जिसका इस घर की चारदीवारी से बाहर की दुनियां से कोई सम्पर्क ही नहीं होना चाहिए।

मालतीदेवी अकेले में ही मुस्करा उठीं। उन्हें प्रोफेसर प्रकाश की संकीर्णता पर दया आई, परन्तु उनके मन की जलन दूर नहीं हुई। उनके हृदय में आज अथाह पीड़ा थी। उनका मन उनकी अदूरदर्शिता पर क्षुब्ध हो उठा।

जिस दिन प्रथम बार एल्प्स रेस्ट्रां के सम्मुख मालतीदेवी ने प्रोफेसर प्रकाश की आज की रंगीन दुनिया में अनासक्ति देखी थी तो उन्हें उसी दिन अपना निर्णय बदल देना चाहिए था। उन्हें प्रोफेसर प्रकाश की मनोवृत्तियों का अध्ययन करना चाहिए था, परन्तु उस समय वे प्रकाश बाबू के रूप पर मोहित हो उठी थीं। उन्होंने सोचा था कि वे प्रकाश बाबू के रूढ़िवादी स्वरूप को दूर करने में समर्थ हो सकेंगी। परन्तु जब एक वर्ष के निरन्तर प्रयास के फलस्वरूप भी उन्हें सफलता प्राप्त न हो सकी तो उन्हें अपना मार्ग बदलना पड़ा। उन्हें अपने जीवन का स्वतन्त्र मार्ग खोजना पड़ा। और अपने इस मार्ग पर वे प्रोफेसर प्रकाश की सीमित आय पर

आश्रित रहकर नहीं चल सकती थीं। वे अपनी स्वच्छंदता पर प्रकाश बाबू की उपार्जित निधि को व्यय करने के लिए उद्यत न हो सकीं।

उस समय उनके पास इसके अतिरिक्त अन्य कोई चारा नहीं था कि वे अपनी वकालत प्रारम्भ करें। उन्होंने कोई गलत कार्य नहीं किया। प्रोफेसर प्रकाश अपने मार्ग पर चलें। वे उनके मार्ग में कोई बाधा उपस्थित नहीं करेंगी परन्तु उनका अपने मार्ग में आना भी अब वे सहन नहीं करेंगी। वे अपने मार्ग पर अपनी स्वेच्छा से ही चलेंगी। प्रोफेसर प्रकाश उनके साथ चल सकें तो उन्हें इसमें प्रसन्नता होगी और न चल सकें तो इसका उन्हें खेद नहीं होगा।

आज मालतीदेवी ने अपने मन में यह दृढ़ निश्चय कर लिया।

तभी प्रोफेसर प्रकाश ने पंडित को आवाज दी और पंडित ने द्वार खोल दिए।

प्रोफेसर प्रकाश अपने ड्राइंग रूम में आए तो मालतीदेवी को उसी कुर्सी पर बैठे पाया जिसपर बैठी छोड़कर वे भोजन करने के लिए उठ खड़े हुए थे।

"तुम सोईं नहीं मालती, अभी तक! मैं तो समझ रहा था कि तुम सो गई होंगी। किशोर भाई कलकत्ता से लौटे थे तो उनसे ज़रा मिलने के लिए चला गया था। वहीं इतनी देर हो गई।" प्रोफेसर प्रकाश ने कहा।

मालतीदेवी ने प्रोफेसर प्रकाश की बात का प्रश्नवाचक शब्दों में उत्तर दिया, "आप सोने योग्य स्थिति में छोड़ गए थे क्या मालती को?

प्रोफेसर प्रकाश सरल वाणी में बोले, "दिन-भर के कामों से थककर नींद आ जाना स्वाभाविक ही था; इसीसे मैंने कहा। चलो सो जाओ अब। बहुत रात हो गई।"

प्रोफेसर प्रकाश के इन शब्दों से मालतीदेवी के दग्धहृदय को सांत्वना न मिल सकी। वे अन्यमनस्क वाणी में बोलीं, "सो जाऊंगी मैं। आप विश्राम करें। सोने में अधिक देर होने से आपकी पढ़ाई के कार्य में बाधा पड़ेगी।"

प्रोफेसर प्रकाश मालतीदेवी के व्यंग्य को समझकर मुस्कराते हुए बोले, "तो क्या सेठ दामोदरप्रसाद के लड़के लाला किशोरीलाल के केस

की तैयारी तुम्हें सब आज ही करनी है मालती ? कल कर लेना। आखिर कुछ काम तो कल पर छोड़ने ही पड़ेंगे। सभी काम तो आज समाप्त नहीं हो सकते।"

मालतीदेवी अपनी कुर्सी पर गम्भीर बनी बैठी रहीं। उन्होंने प्रोफेसर प्रकाश की बात का कोई उत्तर नहीं दिया, और मन में कहा, 'ये मेरी सफलता का आदर नहीं कर सके। मेरे कार्य की उन्नति इनके हृदय के विषाद का कारण बनी। ये इतने संकुचित विचारों के व्यक्ति निकलेंगे, इसकी मुझे स्वप्न में भी आशा नहीं थी।'

प्रोफेसर प्रकाश मालतीदेवी की गम्भीर मुख-मुद्रा को देखकर स्वयं भी गम्भीर हो उठे और गम्भीर वाणी में ही बोले, "मालतीदेवी ! यह दुर्भाग्यपूर्ण बात रही कि मेरा और तुम्हारा जीवन दो विभिन्न दिशाओं में बह चला। अच्छा तो यही होता कि जो संगम हम दोनों के जीवन का बना था वह स्थायी होता और वहां से हम दोनों की जीवन-धारा एक होकर आगे बढ़ती, परन्तु यह सम्भव प्रतीत नहीं हो रहा अब। मेरे और तुम्हारे विचारों में गम्भीर मतभेद पैदा हो गया। ऐसी दशा में मैंने सोचा, उचित यही है कि तुम्हारा जो व्यवहार मुझे अच्छा न लगे उसे मैं सहन करूं और मेरा जो व्यवहार तुम्हें पीड़ा पहुंचाए उसके लिए तुम मुझे क्षमा करती रहो। ऐसा करने से हम दोनों के व्यावहारिक जीवन में शांति बनी रहेगी। विधाता ने यदि कभी चाहा और हम दोनों की सहनशक्ति का बांध न टूट गया तो सम्भव है कभी हम दोनों की दो धाराएं फिर बहती-बहती समुद्र के किनारे तक पहुंचते-पहुंचते आपस में जा मिलें।"

प्रोफेसर प्रकाश की गम्भीर वाणी सुनकर मालतीदेवी के नेत्र छल-छला आए। उनके नेत्र सजल हो उठे। उनके हृदय में अथाह पीड़ा उमड़ आई।

प्रोफेसर प्रकाश ने आगे बढ़कर मालतीदेवी का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "उठो मालती। बहुत रात बीत गई। अब सोना चाहिए। मैं अपने विचारों को बदल नहीं सकता और देख रहा हूं कि यही तुम्हारी भी मनःस्थिति बन चुकी है।"

मालतीदेवी उठ खड़ी हुईं। उनकी दृष्टि प्रोफेसर प्रकाश के चेहरे पर

गई तो उन्होंने देखा कि उनके मुखमंडल पर अथाह पीड़ा छाई हुई थी। उन्हें लगा कि उनके हृदय में अथाह वेदना थी।

दोनों उठकर अपने शयनागार में चले गए। फिर वे दोनों आपस में एक-दूसरे से एक शब्द भी न बोले।

प्रोफेसर प्रकाश दूसरे दिन से फिर अपने थीसेस के कार्य में व्यस्त हो गए और मालतीदेवी ने नई दिल्ली में अपना कार्यालय बना लिया। वे नित्य नियम से नई दिल्ली के कार्यालय में बैठने लगीं।

नई दिल्ली में कार्यालय पहुंच जानेपर मालतीदेवी का कार्य बड़ी तीव्र गति से आगे बढ़ा। उन्होंने थोड़े ही दिनों में धन और ख्याति के क्षेत्र में पर्याप्त उन्नति की।

तभी एक दिन लाला किशोरीलाल उनसे बोले, "मालतीदेवी! देखी आपने इस कार्यालय की करामात! वहां मालीवाड़े के गंदे और बदबू-दार घर में बैठी रहतीं तो आपकी योग्यता का जौहर कैसे खुलता? वहां तो वे ही छोटे-मोटे क्लाइण्ट आपके हाथ लगते। यहां आते ही आपकी ख्याति केवल दिल्ली के ही क्षेत्र में नहीं वरन् भारत-भर में फैल गई।"

मालतीदेवी ने कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि से लाला किशोरीलाल की ओर देखकर कहा, "आपकी मैं हृदय से कृतज्ञ हूं लाला किशोरीलालजी! मेरे कार्य की उन्नति में आपने जो सहयोग प्रदान किया उससे सचमुच मुझे उन्नति करने में अत्यन्त सफलता मिली। मैं आपकी हृदय से आभारी हूं।"

लाला किशोरीलालजी बोले, "अब एक बात और कहूं आपसे।"

"कहिए।" मालतीदेवी ने लाला किशोरीलाल के चेहरे पर आशा-पूर्ण नेत्र पसारकर कहा।

"आपका अब मालीवाड़े के उस गंदे मकान में रहना मुझे अच्छा नहीं लगता। आपने जो केस मुझे जिताया है उसके पुरस्कारस्वरूप मैं आपको एक मोटरगाड़ी देना चाहता हूं। परन्तु सोच रहा हूं कि आप मालीवाड़े के उस मकान में उसे कहां खड़ी करेंगी। आप चाहें तो मैं बारहखम्भा रोड पर जो मैंने नई कोठी बनाई है, उसे आपको आपके निवास-स्थान के लिए दे दूं।"

लाला किशोरीलाल की बात सुनकर मालतीदेवी का मन उनके

प्रति कृतज्ञता से भर उठा। मालतीदेवी के मन में अपनी मोटरगाड़ी रखने की आकांक्षा बहुत दिन से थी। वे पुरानी दिल्ली का निवास-स्थान छोड़कर नई दिल्ली में ही आना चाहती थीं। धनाभाव के कारण ही वे ऐसा नहीं कर पाती थीं। परन्तु अब नई दिल्ली के कार्यालय ने उन्हें मोटरगाड़ी रखने योग्य बना दिया था।

उन्होंने देखा कि आज लाला किशोरीलाल ने उनकी इन दोनों इच्छाओं को फलीभूत करने में सहयोग प्रदान किया। उनका हृदय पुष्प समान खिल उठा। वे बोलीं, "लाला किशोरीलालजी! मेरे पास आपके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए शब्द नहीं हैं। आप कितने अच्छे हैं, मैं वर्णन नहीं कर सकती।"

"तो बात निश्चित रही।" लाला किशोरीलाल ने कहा।

"निश्चित, पूर्ण रूप से निश्चित!" मालतीदेवी बोलीं।

लाला किशोरीलाल चले गए तो मालतीदेवी अकेले में आज इठला उठीं। उन्होंने अनुभव किया कि उनके जीवन में इस समय नई चेतना ने प्रवेश किया। उनके जीवन का नया मार्ग उन्मुक्त हुआ। वे अब जीवन के उच्चतम शिखर पर पहुंच सकेंगी।

उन्होंने सोचा कि आज जब वे अपनी सफलता की बात प्रोफेसर प्रकाश से जाकर कहेंगी तो उन्हें असीम आनन्द की प्राप्ति होगी। इन साधनों की वृद्धि से उनके जीवन को भी नई दिशा मिलेगी। उनकी योग्यता को भी चार चांद लग जाएंगे। उनकी अपनी मित्र-मंडली में उनका सम्मान बढ़ेगा।

आनन्द की इस कल्पना को मन में लेकर आज मालती ने घर में प्रवेश किया तो देखा कि प्रोफेसर प्रकाश अपने छोटे-से मुनवा सुबोध के साथ खेल रहे थे। उसे अपनी पीठ पर बिठलाकर वे उसका घोड़ा बने हुए थे। सुबोध उनके ऊपर सवार होकर जीवन का आनन्द लूट रहा था।

प्रोफेसर प्रकाश का लड़का अब चार वर्ष का हो गया था। अब वह बड़ी-बड़ी बातें बनाने लगा था और प्रकाश बाबू का तो यह एक खिलौना था जिसे लेकर खेलते समय वे अपने हृदय की व्यापक पीड़ा को भूल जाते थे। उन्होंने अब इसीके रूप में मालतीदेवी के रूप को देखना प्रारम्भ कर

दिया था। वे इसीको अपनी छाती से लगाकर आनन्द की लहरों में तैरने लगते थे।

उनकी दृष्टि तभी कमरे के द्वार पर गई तो उन्होंने देखा कि मालती-देवी खड़ी मुस्करा रही थीं, उन्हें इस प्रकार सुबोध का घोड़ा बना देखकर।

मालतीदेवी बोलीं, "पिता-पुत्र का खेल चल रहा है ?"

प्रोफेसर प्रकाश मुस्कराकर बोले, "अपने जीवन का खेल समाप्त करके मालती, अब इस सुबोध के जीवन का खेल सम्पन्न कर रहा हूं। आखिर कोई तो सहारा चाहिए ही जीवन चलाने के लिए। तुम्हें विधाता ने धन दिया और धन ने उन सुखों का मार्ग उन्मुक्त किया जिनसे तुम्हारी आत्मा को शांति प्राप्त होती है। मुझे परमात्मा ने यह खिलौना दे दिया। मैं इसीमें अपनी आत्मा का सुख खोजने का प्रयास कर रहा हूं। मेरा सुबोध ही मेरी आत्मा को शांति पहुंचाएगा।"

प्रोफेसर प्रकाश की बातें सुनकर मालतीदेवी का मन कुछ बुझ-सा गया। नई मोटरगाड़ी और नये बंगले की प्रसन्नतापूर्ण सूचनाएं उनके मस्तिष्क में ही घुमड़कर रह गई।

वे खड़ी-खड़ी दो-चार घड़ी सोचती रहीं कि प्रोफेसर प्रकाश से मोटर-गाड़ी और बंगले के विषय में कुछ कहें या नहीं, परन्तु वे रोक न सकीं अपने उद्वेग को। आज की अपनी सफलता और उससे प्राप्त प्रसन्नता को वे प्रोफेसर प्रकाश पर प्रकट किए बिना न रह सकीं।

वे सामने पड़ी कुर्सी पर बैठ गईं और बोलीं, "प्रकाश बाबू! आज मैंने लाला किशोरीलाल को उनके केस की सफलता का समाचार दिया तो उनके आनंद का पारावार न रहा। पूरा पच्चीस लाख का केस था यह। लोअर कोर्ट में वे हार चुके थे और उन्हें इस केस को जीतने की कोई आशा नहीं रही थी। मैंने हाईकोर्ट में अपील कराके उनका यह केस जितवा दिया। इसे सुनकर उनके पिताजी को भी असीम प्रसन्नता हुई। इसकी प्रसन्नता में उन्होंने मुझे एक नई मोटरगाड़ी देने का वायदा किया है और साथ ही उन्होंने अपनी बारह खम्भा रोड की नई बनी कोठी भी हमें रहने के लिए देने का वचन दिया है। यह कोठी कैसी रहेगी हम लोगों के रहने

के लिए ? क्या राय है आपकी ? उसीमें चलकर क्यों न रहा जाए ?"

मालतीदेवी की बात सुनकर प्रोफेसर प्रकाश का माथा ठनक उठा। उनके नेत्रों के सम्मुख अंधकार छा गया। उन्हें लगा कि जो बची-खुची आशा की किरणें उनके जीवन में थीं वे भी अब अस्ताचल के गर्त में विलीन हुआ चाहती हैं। उन्होंने महान निराशा-भरी दृष्टि से मालतीदेवी के चेहरे पर देखकर कहा, "मैं तुम्हारी उन्नति की हृदय से प्रशंसा करता हूं मालतीदेवी ! परन्तु घर का मकान होने पर किराये की कोठीमें जाने की क्या आवश्यकता है ? आफिस आपका नई दिल्ली में है ही। काम-काज के लिए आनेवाले सज्जनों को वहां पहुंचने में कठिनाई होती ही नहीं होगी।"

परन्तु मालतीदेवी कोठी में रहने के सुख को तिलांजलि नहीं दे सकती थीं। जब विधाता ने उन्हें मालीवाड़े के इस सड़े-गले वातावरण से निकलकर नई दिल्ली की कोठी में रहने का सौभाग्य प्रदान किया था तो उसे ठुकराना कहां की बुद्धिमत्ता थी। घर आई लक्ष्मी और साधनों को ठुकराना मालतीदेवी के निकट मूर्खता के अतिरिक्त और कुछ नहीं था।

वे बोलीं, "यहां कार खड़ी करने की सुविधा नहीं है प्रकाश बाबू ! मैं समझ नहीं सकी कि आपको वहां चलकर रहने में आपत्ति का क्या कारण है ? आपको इस मालीवाड़े के सड़े मकान का आखिर इतना मोह क्यों है? क्या आप अपने जीवन में कतई परिवर्तन नहीं लाना चाहते ?"

प्रकाश बाबू गम्भीरतापूर्वक बोले, "मालतीदेवी ! मैं अपने साधनों की सीमा लांघकर अपने जीवन का मार्ग नहीं बदल सकता। जो भूल प्रकाश एक बार जीवन में कर चुका उसे अपने बच्चे सुबोध के जीवन में उतार देने के लिए मैं तैयार नहीं हूं। मैं ऐसा कदापि नहीं करूंगा। तुम स्वतन्त्रतापूर्वक नई दिल्ली की कोठी में जाकर रह सकती हो। मैं तुम्हारे मार्ग में कोई बाधा उपस्थित नहीं करूंगा।"

प्रोफेसर प्रकाश का इतना स्पष्ट उत्तर सुनकर मालतीदेवी को आश्चर्य हुआ। वे समझ ही न पाई कि क्या यह सचमुच वही प्रकाश बाबू हैं जिन्होंने अपनी इच्छा न रहने पर भी आज तक कभी मालतीदेवी की इच्छा को नहीं ठुकराया, जिन्होंने मालतीदेवी की किसी बात के लिए

कभी आज तक 'ना' शब्द का प्रयोग नहीं किया था।

मालतीदेवी निराश मन से दूसरे कमरे में चली गईं। आज रात-भर उनका मन अशांत ही बना रहा। वे बहुत सवेरे तक निश्चय न कर सकीं कि उन्हें क्या करना चाहिए। उनका मन बहुत ही उद्विग्न हो उठा था।

दूसरे दिन कोर्ट से लौटकर मालतीदेवी, अपने कार्यालय में पहुंचीं तो नई मोटरगाड़ी उनके कार्यालय के नीचे खड़ी थी। नई मोटरगाड़ी को देखकर जैसे ज्योति उतर आई उनके नेत्रों में। उन्होंने इस मोटरगाड़ी को इसके चारों ओर घूमकर देखा।

वे कार्यालय की सीढ़ियों पर चढ़कर ऊपर पहुंचीं तो लाला किशोरी-लाल वहीं बैठे मिले। मालतीदेवी को आते देखकर वे खड़े होकर बोले, "मालतीदेवी! कार देखी आपने! नीचे सड़क पर खड़ी है, आपके कार्या-लय के ज़ीने के सम्मुख।"

मालतीदेवी मुस्कराकर बोलीं, "बहुत सुन्दर है। मैं ऐसी ही गाड़ी लेना चाहती थी लाला किशोरीलालजी! आपने ठीक मेरी रुचि के अनु-रूप ही मोटरगाड़ी खरीदी है। इससे अधिक बड़ी गाड़ी भी मुझे पसन्द नहीं है।"

लाला किशोरीलाल प्रसन्न मुद्रा में बोले, "कोठी भी आपको पसन्द आएगी। आज मैंने स्वयं जाकर उसकी सफाई कराई है। आप चाहें तो कल उसमें शिफ़्ट कर सकती हैं। रंग-रोगन होकर कोठी तैयार होगई है।"

"कल ही!" आश्चर्यचकित होकर मालतीदेवी ने कहा।

"और क्या? अब उसमें कोई कसर शेष नहीं रही। उसका सब कार्य समाप्त हो गया।"

मालतीदेवी के हर्ष का इस समय पारावार नहीं था। उन्होंने निश्चय कर लिया कि यदि प्रकाश बाबू उनका साथ नहीं देंगे तो न दें। वे जीवन में आए इस अवसर की उपेक्षा नहीं कर सकतीं।

दूसरे दिन मालतीदेवी मालीवाड़े का मकान छोड़कर नई दिल्ली की कोठी में रहने के लिए चल दीं।

चलते समय उन्होंने सुबोध की ओर अपने दोनों हाथ फैलाकर कहा, "सुबोध! मेरे साथ नहीं चलोगे क्या तुम?"

सुबोध प्रोफेसर प्रकाश की गर्दन से लिपटकर दृढ़तापूर्वक बोला, "नहीं।"

प्रोफेसर प्रकाश सुबोध का मुंह चूमकर अश्रुपूर्ण नेत्रों से बोले, "सुबोध! तुम्हारी माताजी आज हमें छोड़कर जा रही हैं बेटा! प्रणाम करो इन्हें। भगवान शायद कभी जीवन में इन्हें इतनी सद्बुद्धि प्रदान करे कि ये फिर वापस हमारे पास लौट आएं।"

सुबोध ने मालतीदेवी की ओर देखकर कहा, "आप हमें छोड़कर कहां जा रही है मम्मी?"

मालतीदेवी का मन सुबोध की सरल बात सुनकर तनिक भारी हो उठा। उन्होंने एक लम्बा सांस लेकर साहस बटोरा और चुपके से ज़ीने की पैड़ियों से नीचे उतर गईं।

प्रकाश बाबू सुबोध को गोद में लिए-लिए मालतीदेवी के पीछे-पीछे ज़ीने से नीचे उतरे और मोती बाज़ार से बाहर चांदनी चौक में खड़ी उनकी कार तक उन्हें पहुंचाने गए।

मालतीदेवी कार में बैठ गईं तो प्रोफेसर प्रकाश अपनी आंखें अपने कुर्ते की आस्तीन से पोंछकर बोले, "मालती! कभी भूले-भटके अपने व्यस्त जीवन में तुम्हें प्रकाश की याद आ जाए तो मिलने के लिए आ जाया करना।"

नेत्र मालतीदेवी के भी इस समय सजल हो उठे थे। वे बोलीं, "आपको भी कभी मालती की याद आए तो आप नहीं आएंगे क्या?"

प्रोफेसर प्रकाश बलात होंठों पर मुस्कराहट लाकर बोले, "प्रकाश को तुम हर समय याद रहोगी मालती! प्रकाश मालती को कभी जीवन में भुला नहीं सकता। परन्तु वहां आना मेरे लिए सम्भव न होगा। फिर भी यदि आना ही पड़ेगा कभी और मैं समझूंगा कि तुम्हें मेरी आवश्यकता है तो मैं अवश्य आऊंगा मालती। मुझे आना ही होगा उस समय।"

गाड़ी चलने को हुई तो प्रोफेसर प्रकाश की गोद से सुबोध बोला, "मम्मी जी प्रणाम!"

मालतीदेवी के कानों में सुबोध के शब्द पड़े तो उनका दिल धड़-धड़ कर उठा। मन में आया कि वे अपनी जिद छोड़कर अपने पति और

बच्चे से दूर न जाएं परन्तु तुरन्त ही बारहखम्भे की वह कोठी उनकी आंखों के सम्मुख आ गई। उन्होंने अपने नेत्र बन्द कर लिए और ड्राइवर से कहा, "ड्राइवर गाड़ी चलाओ।"

मालतीदेवी की गाड़ी स्टार्ट होकर चल पड़ी। प्रोफेसर प्रकाश सुबोध को अपनी छाती से चिपकाए चांदनी चौक बाज़ार की पटरी पर खड़े रह गए। वे कई क्षण स्तब्ध-से खड़े रहे, संज्ञाविहीन-से। उन्हें लग रहा था कि उनकी आत्मा उनके शरीर के अन्दर से निकलकर चली गई। उनके नेत्रों का जल-प्रवाह जो एक बार बड़े वेग से छलक पड़ा था, एकदम शांत हो गया। उन्होंने एक लम्बा सांस लिया।

तभी सुबोध ने कहा, "पापाजी! मम्मी हमें छोड़कर चली गईं। अब चलो, घर चलें।"

प्रोफेसर प्रकाश ने सुबोध के सरल मुख पर देखकर कहा, "चलो बेटा" और वे बाज़ार पार करके सीधे अपने घर लौट आए। उनके पैर लड़खड़ा रहे थे इस समय और सारा बदन स्वेदपूर्ण हो उठा था।

उन्होंने घर में प्रवेश किया तो पंडित रुआंसा होकर बोला, "क्या बहूजी चली गईं बाबूजी?"

प्रोफेसर प्रकाश ने भारी मन से कहा, "चली गईं पंडित!"

"आप रोक नहीं सके उन्हें बाबूजी?"

"उन्हें विधाता भी नहीं रोक सकता था इस समय पंडित! मैं क्या रोकता उन्हें? उनका इकलौता लाल सुबोध भी नहीं रोक सका उन्हें।"

पंडित भारी मन से बोला, "बहूजी बहुत निष्ठुर निकलीं बाबूजी! आप जैसे देवता पति को प्राप्त करके भी और जाने क्या प्राप्त करना शेष रह गया बहूजी को, जिसके पीछे अंधी होकर दौड़ी चली जा रही हैं वे। बहूजी आपको छोड़कर सुखी नहीं रह सकतीं बाबूजी! उन्हें अपनी करनी पर किसी दिन पछताना होगा।"

प्रोफेसर प्रकाश पंडित के शोकग्रस्त चेहरे की ओर देखकर बोले, "परमात्मा उन्हें सुखी बनाए पंडित! मेरी यही मनोकामना है उनके लिए।"

पंडित ने गर्दन हिलाकर कहा, "नहीं बाबूजी! बहूजी ने अधर्म की बात की है यह! भगवान उन्हें कभी क्षमा नहीं कर सकते। उन्हें अपनी

करनी का दण्ड भगवान अवश्य देंगे।"

पंडित की सरल और पीड़ायुक्त बातें सुनकर प्रोफेसर प्रकाश का बदन हिल उठा। वे करुणार्द्र वाणी में बोले, "पंडित, ऐसा न कहो मालती के लिए। विधाता उसे कभी कोई कष्ट न दें, मेरी यही मनोकामना है। मैं हृदय से चाहता हूं कि वह सुखी रहे।"

प्रोफेसर प्रकाश सुबोध को गोद में लिए-लिए ही ज़ीने से ऊपर चढ़ने लगे तो उनके पैर भारी हो उठे। जाने कितनी देर में वे धीरे-धीरे ऊपर की पौड़ी पर पहुंचे और अपने कमरे तक पहुचना उनके लिए कठिन हो गया।

रात्रि को पंडित ने भोजन तैयार करके सूचना दी तो बोले, "पंडित! आज भूख नहीं है मुझे। तुम सुबोध का दूध और एक परांठा ले आओ।"

सुबोध बोला, "पापाजी! मैं तो आपके ही साथ खाना खाऊंगा।"

प्रोफेसर प्रकाश ने सुबोध को अपनी छाती से लगाकर कहा, "अच्छा, पंडिता खाना लगा लाओ।"

पंडित थाली में भोजन परसकर ले आया। प्रोफेसर प्रकाश ने कौर तोड़कर सुबोध के मुंह की ओर किया तो वह बोला, "पहले आप खाओ पापाजी!"

प्रोफेसर प्रकाश ने चुपके से कौर अपने मुंह में रख लिया और फिर दूसरा कौर सुबोध के मुंह में रखकर उसे दूध का घूंट भराया। धीरे-धीरे उन्होंने सुबोध को दूध पिला दिया, परन्तु उन्होंने अपने मुंह में जो कौर रखा था उसे वे चबा न सके, निगल न सके। वह ज्यों का त्यों उनके मुंह में बना रहा।

पंडित ज्यों का त्यों थाल उठाकर वापस ले गया। उसके मन में भी आज अपार कष्ट था।

प्रोफेसर प्रकाश ने सुबोध को पलंग पर लिटाया और दुलराकर सुला दिया। वे सब काम वह चार वर्ष से नित्य करते आ रहे थे। सुबोध को दूध पिलाना, उसे नहलाना-धुलाना और वस्त्र बदलकर, बालों में तेल डालकर कंघा करना, उसे गोद में लेकर गांधी मैदान में घुमाने के लिए ले जाना, यह सब प्रोफेसर साहब स्वयं करते थे। मालतीदेवी को इस ओर

ध्यान देने का अवकाश नहीं मिला कभी। परन्तु आज जैसे उनका बदन यह सब करने में थकान से चूर हो गया। उनका माथा दुख रहा था इस समय और हृदय व्याकुलता से टुकड़े-टुकड़े हुआ जा रहा था।

प्रोफेसर प्रकाश अपने ड्राइंग रूम में आए तो उनकी दृष्टि सामने लगे मालतीदेवी के चित्र पर पड़ी। उसके सम्मुख खड़े होकर वे उसे देखने लगे और देखते-देखते ही उनकी आंखों में जल भर आया। वे एकांत में अकेले ही बोले, 'मालती! तुमने यह सब क्या किया? मेरी दुनिया को उजाड़कर आखिर क्या मिला तुम्हें? जिस धन और वैभव के पीछे तुम दीवानी बनी हो क्या वे वास्तव में तुम्हारी आत्मा को शांति प्रदान कर सकेंगे? क्या तुम अपने को सुखी अनुभव कर सकोगी उस कोठी में रह कर? क्या तुम्हें मेरी और अपने सुबोध की कभी याद नहीं आएगी?' कहते-कहते प्रोफेसर प्रकाश गम्भीर वाणी में बोले, 'मालती, तुम्हें इतना रूप देकर विधाता ने बड़ी भूल की। इतना रूप दिया था तो उसके अन्दर कोमल हृदय की स्थापना भी तो करनी थी उसे। अपनी सारी कला-कुशलता पर विधाता ने स्वयं अपने हाथ से पानी फेर दिया। अपने सौंदर्य की प्रतिमा को विधाता ने स्वयं अपने हाथ से अपूर्ण कर दिया। मालती! क्या तुम सचमुच इतनी पाषण हृदय हो? मेरा मन नहीं कहता कि तुम इतनी पाषाण हृदय हो सकती हो। तुम्हारे जीवन में अचानक धन ने प्रवेश करके तुम्हारे हृदय को पाषाण बना दिया। दिल्ली की रंगीनियों ने तुम्हारी दृष्टि बदल दी। वैभव के चमत्कार ने तुम्हारे मानस को कुंठित कर दिया। तुम्हें विनाश के पथ पर ले जाकर खड़ा कर दिया। तुम्हारे वेग को रोकने की सामर्थ्य मुझमें नहीं हो सकी मालती! मैं रोक नहीं सका तुम्हें।'

प्रोफेसर प्रकाश निराश होकर कुर्सी पर बैठ गए और बहुत देर तक एकटक मालतीदेवी के चित्र को देखते रहे। वे अन्त में उसी निराशा को अपने मन में लिए सुबोध के पास पलंग पर जाकर लेट गए। कुछ देर सिसकियां-सी लेते रहे और उनकी नाड़ी की गति बढ़ती रही, उनका बदन गर्म होता गया।

उनकी दृष्टि अपने पलंग के पास बिछे मालतीदेवी के पलंग पर गई तो उनके हृदय में विद्युत-सी कौंध गई। उनका हृदय टुकड़े-टुकड़े हो गया।

उनके माथे में बहुत तीव्र पीड़ा होने लगी थी।

वे आंखें बन्द करके लेटे रहे परन्तु अपने व्याकुल चित्त को शांति प्रदान न कर सके। उनके हृदय की धड़कन बराबर बढ़ती जा रही थी—उनके चित्त की व्याकुलता बढ़ती जा रही थी। उनके नेत्र लाल हो उठे थे। उनके मन की अशांति ने उग्ररूप धारण कर लिया था। उनका सिर चकरा रहा था।

प्रोफेसर प्रकाश उठकर बैठे हो गए और अपने ड्राइंगरूम की ओर बढ़ना चाहा परन्तु एक पग भी आगे न बढ़ सके। उनके पैर लड़खड़ा उठे और वे अस्वस्थ-से हो पलंग पर गिर पड़े। उन्हें अपनी सुध-बुध ही न रही।

११

प्रोफेसर प्रकाश रात-भर सो नहीं सके। सुबह तक उनका बदन तीव्र ज्वर में जलने लगा था। वे अपने पलंग पर पड़े-पड़े बौखला रहे थे।

नित्य नियम से प्रातःकाल चार बजे उठनेवाले प्रोफेसर प्रकाश आज जब सुबह सात बजे तक भी न उठे और पंडित ने दूध गर्म करके नाश्ता तैयार कर लिया तो वह स्वयं दबे पांव उनके कमरे में उन्हें देखने के लिए गया।

पंडित ने धीरे से कहा, "बाबूजी!"

प्रोफेसर प्रकाश ने पंडित के शब्द सुनकर बड़ी ही दीन दृष्टि से पंडित की ओर देखा। उनके नेत्र लाल अंगारों के समान जल रहे थे। उनकी दशा बहुत खराब थी।

पंडित ने भयभीत होकर, उनका बदन छूकर देखा तो वह भभक रहा था। यह देखकर पंडित घबरा उठा। उसकी कुछ समझ में न आया तो वह दौड़ा हुआ सीधा किशोर भाई के घर चला गया।

किशोर भाई ने पंडित की यह दशा देखकर आतुरतापूर्वक पूछा, "अरे क्या बात है पंडित?"

"बाबूजी को बहुत तीव्र ज्वर है भैया, आप शीघ्रता करें चलने में।"

"प्रकाश को ?" किशोर भाई ने घबराकर पूछा।

"हां भैया।"

"तुम चलो मैं अभी आया।" किशोर भाई बोले।

किशोर भाई तुरन्त खूंटी से कुर्ता उतारते हुए चप्पल पैरों में डालकर प्रोफेसर प्रकाश के घर की ओर लपके तो विमला देवी ने कहा, "कहां जा रहे हैं आप इतनी जल्दी, नाश्ता करते जाते थोड़ा।"

किशोर भाई परेशानी की दशा में बोले, "प्रकाश को बहुत तीव्र ज्वर हो गया है विमला ! पंडित कह गया है अभी।"

"देवरजी को!" आश्चर्यचकित होकर विमला देवी बोलीं, "परन्तु कल संध्या को जब यहां आए थे तो बिलकुल स्वस्थ थे वे। घंटों यहां बैठे माताजी से बातें करते रहे थे। रात-रात में ऐसा तीव्र ज्वर कैसे हो गया उन्हें ?"

किशोर भाई ने कुछ सुना नहीं। वे कुर्ते को गले में डालकर उसकी बाहों में हाथ डालते हुए घर से बाहर हो गए।

किशोर भाई सीधे प्रोफेसर प्रकाश के यहां न जाकर डाक्टर के पास गए और उन्हें साथ लेकर प्रोफेसर प्रकाश के घर पहुंचे।

किशोर भाई ने जाकर देखा तो पंडित सुबोध को अपनी गोद में लिए खड़ा था और प्रोफेसर प्रकाश तीव्र ज्वर में बौखला रहे थे।

डाक्टर ने प्रोफेसर प्रकाश को सावधानी के साथ देखा, और इंजेक्शन लगाकर बोला, "इनके माथे पर आइस बैग रखो किशोर भाई और मेरे साथ किसी आदमी को भेज दो तो वह दवा ले आएगा। घबराने की कोई बात नहीं है। इन्हें कोई मानसिक आघात पहुंचा है। उसीसे ज्वर हो गया है। आइस बैग से माथा ठंडा रखना नितान्त आवश्यक है। उसमें लापरवाही न करना।"

पंडित सुबोध को गोद में लिए-लिए ही डाक्टर के साथ दवा लेने चला गया।

किशोर भाई ने प्रोफेसर प्रकाश के मस्तक पर हाथ रखकर देखा तो वह अंगार के समान जल रहा था। यह देखकर किशोर भाई घबरा उठे।

उन्होंने मालती-मालती कहकर कई बार पुकारा और एक क्षण में ही सारा घर छान मारा, परन्तु मालती वहां कहीं नहीं मिली।

किशोर भाई के हृदय पर गहरा आघात हुआ। उन्होंने मन ही मन कहा, 'मालती, का यह दिखावटी रूप कितना निष्ठुर निकला। मेरे मित्रके शांत और सरल जीवन में इसने दहकती चिंगारी के समान प्रवेश किया। प्रकाश के जीवन को इसने अपने रूप की भट्ठी में झोंककर भस्म कर दिया।'

किशोर भाई दौड़कर अपने घर गए और माताजी से बोले, "माताजी ! प्रकाश को बहुत तीव्र ज्वर है। ज़रा आइस बैग तो दे दो मुझे। और मैं विमला को भी अपने साथ ले जा रहा हूं। प्रकाश इतने तीव्र ज्वर में पड़ा है और मालती का पता नहीं। पता नहीं कहां चली गई है वह। लापरवाही की हद कर दी उसने।"

"मालती नहीं है ? यह क्या कह रहे हो किशोर ! वह कहां चली गई मेरे बेटे को ज्वर में जलता छोड़कर ?"

किशोर भाई बोले, "शीघ्रता करो माताजी ! मुझे आइस बैग ला दो आप। मेरा दिल घबरा रहा है। प्रकाश को बहुत तीव्र ज्वर है। वह अचेत पड़ा है।"

किशोर की माताजी ने आइस बैग लाकर किशोर भाई को दे दिया। उन्हें महान कष्ट पहुंचा प्रकाश के ज्वर को सुनकर।

किशोर भाई विमला को साथ लेकर प्रोफेसर प्रकाश के घर की ओर चल दिए। रास्ते से किशोर भाई ने पांच सेर पानी की बर्फ लेकर अपने थैले में डाल ली और तीव्र गति से चलकर दोनों प्रकाश के घर पहुंच गए।

विमलादेवी ने अपने देवर प्रकाश की यह दशा देखी तो उनकी आंखें भर आईं।

किशोर भाई ने बर्फ कूटकर आइस बैग में भरी और आइस बैग विमलादेवी के हाथ में देकर बोले, "विमला ! तुम इसे प्रकाश के माथे पर रखो तब तक मैं डाक्टर के यहां से दवा लेकर आता हूं।"

किशोर भाई ज़ीने से उतरे तो सामने से उन्हें दीखा, पंडित लपका हुआ चला आ रहा था।

किशोर भाई ने दवा की शीशी पंडित के हाथ से ले ली। एक सुंघाने की दवा थी, एक माथे, हथेलियों और तलुओं पर मलने की। तीसरी दवा पिलाने की थी।

किशोर भाई ने सर्वप्रथम सुंघाने की दवा सुंघाई तो प्रोफेसर प्रकाश ने दो-तीन बार नेत्र खोले परन्तु वे देख नहीं सके कुछ। उनके नेत्र फिर बन्द हो गए।

किशोर भाई ने फिर मस्तक, तलुओं और हथेलियों पर दवा लगाई और फिर एक प्याली में पीने की दवा उड़ेलकर एक चम्मच से उसे धीरे-धीरे प्रोफेसर प्रकाश के मुख में डाला।

विमलादेवी प्रोफेसर प्रकाशके पास उनके मस्तक पर आइस बैग रख-कर मस्तक को ठंडा कर रही थीं।

किशोर भाई हर दस मिनट पश्चात् प्रोफेसर प्रकाश की बगल में थर्मामीटर लगाकर उनका ज्वर देख रहे थे।

लगभग दो घंटे पश्चात् किशोर भाई ने देखा कि थर्मामीटर का पारा कुछ नीचे गिरा। उन्हें यह देखकर प्रसन्नता हुई और विमलादेवी को थर्मामीटर दिखलाकर बोले, "देखो विमला ! अब ज्वर शांत होने लगा है। पारा एक सौ चार डिग्री से एक सौ तीन डिग्री पर आ गया।"

किशोर भाई ने ठीक समय पर प्रोफेसर प्रकाश को दूसरी खुराक दी, वह सुंघाने की दवा भी सुंघाई और मस्तक तथा तलुओं और हथेलियों पर दवाई लगाई। सूंघने की दवा से प्रोफेसर प्रकाश ने एक बार फिर नेत्र खोले, परन्तु यह नेत्र खोलना भी स्थायी न रह सका।

प्रोफेसर प्रकाश का ज्वर धीरे-धीरे और कम होकर एक सौ दो और फिर एक सौ एक डिग्री पर आ गया परन्तु चेतना अभी तक नहीं लौटी। वे अचेतन अवस्था में ही पड़े थे और कभी-कभी जो बड़बड़ाते थे वह कुछ समझ में नहीं आता था।

यह देखकर विमलादेवी का हृदय व्याकुल हो उठा। किशोर भाई बोले, "विमला ! मैं अभी आता हूं। डाक्टर साहब को प्रकाश की दशा बतला के इन्हें चेतन अवस्था में लाने की कोई दवा लाता हूं। इस प्रकार अचेतन बना रहना उचित नहीं है।"

यह कहकर किशोर भाई डाक्टर की ओर चले गए।

विमलादेवी का हृदय अपने देवर की यह दशा देखकर विदीर्ण हुआ जा रहा था। वे अपने को रोक न सकीं। अपने इष्टदेव गिरिधर नागर की स्मृति करके उनके कंठ से मधुर संगीत फूट पड़ा। वे व्याकुल होकर गा उठीं :

"मीरा के प्रभु गिरिधर नागर
दूसरो न कोई।..."

विमलादेवी अपनी धुन में गाती जा रही थीं। उनके संगीत का मधुर स्वर प्रोफेसर प्रकाश के कानों में पड़ा तो उन्हें लगा कि मानो कोई उनके तप्त बदन पर शीतल जल की वर्षा कर रहा था।

गाते-गाते विमलादेवी ने देखा कि प्रोफेसर प्रकाश ने धीरे से अपने नेत्र खोले और उन्हें विमला के मुख पर फैलाया। फिर धीरे से उन्होंने नेत्र बन्द कर लिए।

विमलादेवी अपने नेत्र बन्द करके बराबर मधुर कंठ से गाए जा रही थीं :

"मीरा के प्रभु गिरिधर नागर
दूसरो न कोई।..."

विमलादेवी के व्याकुल हृदय से जो वाणी प्रस्फुटित हुई उसने प्रोफेसर प्रकाश की हृत्तंत्री को झंकृत कर दिया। उनकी चेतना लौट आई।

प्रोफेसर प्रकाश ने नेत्र खोले तो अपने सिरहाने प्रेममयी भाभी को बैठे हुए पाया। उनके नेत्र मुंदे हुए थे। इधर प्रकाश के मानस की सारी जलन जाने कहां चली गई। उनका ज़ोर से धड़कता हुआ हृदय अपनी साधारण गति पर चलने लगा।

रात्रि में सोचते-सोचते जब वे निराशा के अंधकार में जा गिरे थे तो उन्हें लगा था कि अब उनका संसार में कोई नहीं रहा। मालतीदेवी उन्हें छोड़कर चली गईं। वे अब नहीं लौटेंगी तो वे किसके सहारे से जी सकेंगे।

प्रोफेसर प्रकाश भाभी के नेत्र बन्द किए तन्मय होकर गाते हुए मुख-छवि को देखते रहे। उनके नेत्रों को भाभी के रूप ने शांति प्रदान की।

उनके कर्ण-द्वारों से प्रवेश कर भाभी के मधुर संगीत ने उनके हृदय की जलन को दूर किया । उन्हें लगा कि उनकी आत्मा उनके बदन में लौट आई। उन्हें जीने का सहारा मिल गया।

वे धीरे से बोले, "भाभी !"

'भाभी' शब्द सुनकर विमलादेवी ने नेत्र खोले और देखा कि प्रोफेसर प्रकाश के नेत्र खुले हुए थे। उनकी चेतना लौट आई थी।

विमलादेवी आशापूर्ण स्वर में बोलीं, "देवरजी !"

"हां भाभी !" प्रोफेसर प्रकाश ने कहा और करुण नेत्रों से उनकी ओर देखकर बोले, "भाभी, गाना बन्द न करो। गाए जाओ भाभी ! आपके संगीत ने मेरे बदन में सुलगनेवाली ज्वाला को शांत कर दिया। मेरे मस्तिष्क को सांत्वना प्रदान की है आपके मधुर स्वर ने।"

विमलादेवी ने फिर आशा और उमंग के साथ गाना प्रारम्भ कर दिया। उनके चेहरे पर प्रसन्नता नाच उठी । उनका हृदय आशा और उमंग से भर उठा।

प्रोफेसर प्रकाश तनिक सुधरकर लेट गए। उनका एक हाथ अनायास ही भाभी के पैर पर जा पड़ा और उन्होंने श्रद्धा के साथ भाभी के पैर को पकड़ लिया।

विमलादेवी गाती रहीं और प्रोफेसर प्रकाश उनके मधुर संगीत को सुनकर अपने हृदय को सांत्वना देते रहे, अपने दिल की जलन को शांत करते रहे।

किशोर भाई थोड़ी देर में एक थैले में कुछ मौसमियां तथा डाक्टर से दवा लेकर आए तो द्वार में प्रवेश करते ही विमलादेवी के मधुर संगीत का स्वर उनके कानों में पड़ा।

वे ऊपर आए तो उन्होंने देखा कि विमलादेवी गा रही थीं और प्रकाश शांतिपूर्वक उनका मधुर संगीत सुन रहा था।

किशोर भाई ने दबे पैर कमरे में प्रवेश किया। यह देखकर कि प्रकाश सचेत हो गया उनके उद्विग्न मन को महान शांति मिली। उनका हृदय हर्ष से खिल उठा।

थोड़ी देर में जब विमलादेवी ने गाना बन्द किया तो किशोर

भाई मुस्कराकर बोले, "विमला ! तुम्हारे संगीत ने डाक्टर की सब औषधियों को विफल कर दिया।"

"आपने सच कहा भैया ! भाभी का मधुर स्वर तप्त से तप्त हृदय को शीतलता प्रदान करने की क्षमता अपने अन्दर रखता है। मेरे हृदय की जलन को किसी डाक्टर की कोई औषधि शांत नहीं कर सकती थी।" गम्भीर वाणी में प्रोफेसर प्रकाश ने कहा।

प्रोफेसर प्रकाश को बातें करते सुनकर पंडित का मन भी कुछ ठीक हुआ। वह सुबह से बहुत घबराया हुआ था।

पंडित सुबोध को अपनी छाती से चिपकाए इधर से उधर घूम रहा था। आज पंडित के लाख प्रयास करने पर भी उसने दूध नहीं पिया था।

पंडित कमरे में प्रवेश करके बोला, "बाबू ! कैसा जी है अब आपका ?"

प्रोफेसर प्रकाश की दृष्टि पंडित की ओर गई तो उसकी छाती से चिपके सुबोध को उन्होंने देखा। वे बोले "पंडित, मेरा जी ठीक है अब। ला, सुबोध को मुझे दे और जल्दी से जाकर इसका दूध तो गर्म कर ला। भाभी, आज दूध भी नहीं पिया होगा सुबोध ने। यह मेरे अतिरिक्त अन्य किसी-के हाथ से दूध नहीं पीता।"

"सचमुच नहीं पिया बाबूजी, मैंने लाख प्रयास किया परन्तु इसने पिया ही नहीं। मेरे कन्धे से चिपका यह बराबर आपकी ही ओर देख रहा है तब से। मुझसे पूछ रहा था, 'पंडित, क्या हो गया मेरे पापाजी को ?'"

प्रोफेसर प्रकाश ने सुबोध को छाती से लगाकर कहा, "सुबोध, तुमने दूध नहीं पिया ?"

सुबोध मुंह बनाकर बोला, "तब फिर आप ऐसे चुप होकर क्यों लेट गए थे ?"

विमलादेवी ने सुबोध की सरल वाणी सुनकर उसे अपनी गोद में ले लिया और प्यार से बोली, "बेटा, बीमार हो गए तुम्हारे पापाजी। बीमार कोई स्वयं नहीं होता। बीमारी तो कम्बख्त आकर चढ़ जाती है सिर पर। अपने मुनवा को मैं दूध पिलाऊंगी। लाओ पंडित, दूध लाओ जल्दी से।"

"आप पापाजी को भी दूध पिलाओगी ताईजी ?" सुबोध सरल वाणी में बोला।

"हां बेटा ! तुम्हारे पापाजी को भी पिलाऊंगी। दोनों को दूध पिलाऊंगी मैं।" विमलादेवी मुस्कराकर बोली।

सुबोध का अपने प्रति स्नेह देखकर प्रोफेसर प्रकाश के नेत्रों में आंसू छलछला आए। वे करुण स्वर में भाभी की ओर देखकर बोले, "भाभी ! सुबोध का यह सरल स्नेह भी प्राप्त न कर सकी मालती।"

यह सुनकर सुबोध विमलादेवी से बोला, "ताईजी ! मम्मी हमें छोड़कर चली गई।"

"छोड़कर चली गई ! कहां ?" आश्चर्यचकित होकर किशोर ने पूछा। "मालती कहां चली गई देवरजी ?" विमला ने बात जोड़ी।

सुबोध बोला, "मोटर में बैठकर गई मम्मी। मैं नहीं गया उनके साथ। पापाजी मुझे दूध पिलाते हैं। वहां कौन पिलाता मुझे दूध ? पापाजी मुझे प्यार करते हैं, वहां कौन करता मुझे प्यार ?"

तभी पंडित दूध लेकर आ गया। प्रोफेसर प्रकाश ने सुबोध को अपनी गोद में बिठलाकर दूध पिलाया। वे बोले, "किशोर भाई ! यह दस दिन का था तभी से इसे इसी प्रकार दूध पिला रहा हूं। इसके माता और पिता के जितने भी काम करने के हैं उन सबको चार वर्ष से मैं ही कर रहा हूं। मालती ने कभी इसके मुंह-हाथ धुलाना नहीं जाना, कभी इसे टट्टी-पेशाब कराना नहीं जाना, कभी इसे नहलाना-धुलाना नहीं जाना, कभी इसके वस्त्र बदलना, सिर में तेल डालना और कंघी करना नहीं जाना। यह सब काम मैं ही करता चला आ रहा हूं चार वर्ष से।"

किशोर भाई और विमलादेवी यह सुनकर चकित रह गए। किशोर भाई ने पूछा, "परन्तु मालती चली कहां गई प्रकाश ?"

प्रोफेसर प्रकाश लम्बी सांस भरकर बोले, "वह नई दिल्ली, बारह-खम्भा रोड पर एक कोठी में चली गई। उसके पास मोटरगाड़ी है अब। मालीवाड़े के इस सड़े मकान में गाड़ी कहां खड़ी की जा सकती थी ? उसके बड़े-बड़े क्लाइण्ट्स् को यहां आने में कठिनाई होती थी। उसे अब यहां रहते लज्जा प्रतीत होती थी। मालीवाड़े के इस मकान में रहना

अब उसकी शान के विपरीत था।"

"लज्जा प्रतीत होती है!" आश्चर्यचकित होकर किशोर भाई बोले, "यहां रहना उसकी शान के विपरीत है? क्या उसकी शान मेरे देवरजी से पृथक् हो गई?" विमला ने कहा।

प्रकाश बाबू बोले, "किशोर भाई! मालतीदेवी ने मुझसे अनुरोध किया था कि मैं भी उसके साथ चलकर उसकी कोठी में रहूं। परन्तु मैं उसकी इस इच्छा की पूर्ति न कर सका। मैंने उसे कल से पूर्व कभी किसी बात के लिए 'ना' नहीं किया था, परन्तु कल मुझे अपनी असमर्थता देखकर 'ना' करना ही पड़ा। कल मालतीदेवी को मेरे इस मकान में रहने में लज्जा प्रतीत हुई तो क्या आनेवाले कल को उसे अपने इस दो-ढाई सौ रुपया मासिक कमानेवाले पति को देखकर लज्जा नहीं आने लगती? उस दशा में मुझे क्या करना होता किशोर भाई? यही तो, कि मुझे फिर आकर अपने इसी मालीवाड़े के गले-सड़े घर की शरण लेनी पड़ती।"

"तुमने बिलकुल ठीक किया प्रकाश! मालती माया के मोह में पगली हो गई है। उसने अपने ही हाथों अपने परिवार के सुख तथा शांति को नष्ट कर दिया। तुमसे पृथक् होकर वह सुखी नहीं रह सकती प्रकाश।" गम्भीर वाणी में किशोर भाई ने कहा।

किशोर भाई की बात सुनकर प्रोफेसर प्रकाश करुण स्वर में बोले, "किशोर भाई! ऐसा न कहो। मालती जहां भी रहे सुखी रहे।" और फिर सुबोध को छाती से लगाकर बोले, "मेरे जीवन का सहारा उसने मुझे दे दिया है। वह सचमुच पगली है जो झूठे सुख की ओर आंखें बन्द करके दौड़ रही है। उसकी यह दौड़ एक दिन स्वयं रुक जाएगी और तब वह अपनी भूल अनुभव करेगी। मुझे पूर्ण विश्वास है कि मालती को एक दिन अपने व्यवहार पर पछताना होगा। किशोर भाई, मालती देवी को एक दिन अवश्य लौटना होगा। दुनिया की इन रंगीनियों के रंग उसे तभी तक रंगीन दिखलाई पड़ेंगे जब तक उनके जीवन में रंगीनी शेष रहेगी। इस समय रूप और जवानी के तूफान में उड़ी जा रही है मालती। धन और वैभव उसकी दृष्टि के सम्मुख है। वही उसके आनंद की कल्पना बन गया है। इस समय उसे रोका नहीं जा सकता था।"

किशोर भाई प्रोफेसर प्रकाश की उदार भावना और अटल विश्वास के सम्मुख नतमस्तक हो गए। वे बोले नहीं एक शब्द भी, परन्तु मालती को उनका मन क्षमा नहीं कर सका। उन्होंने क्रोधपूर्ण दृष्टि से मालती के चित्र की ओर देखा और फिर घृणा से अपने नेत्र दूसरी ओर को कर लिए। उन्होंने फिर उस चित्र की ओर देखना पसंद नहीं किया।

वे विषय बदलकर बोले, "अब कैसी तबीयत है तुम्हारी प्रकाश ?"

"अब ठीक हूं किशोर भाई !" प्रोफेसर प्रकाश बोले।

तभी किशोर भाई के पिताजी उनकी माताजी को अपने साथ लेकर यहां आ गए। उन्होंने आगे बढ़कर प्रोफेसर प्रकाश को पलंग पर लेटे देखा। उन्होंने किशोर भाई से पूछा, "अब कैसी तबियत है प्रकाश की ?"

"अब ठीक है पिताजी।" किशोर भाई ने उत्तर दिया।

प्रोफेसर प्रकाश ने भी दोनों को प्रणाम किया।

किशोर की माताजी ने प्रकाश के सिरहाने बैठकर स्नेहपूर्ण स्वर में कहा, "प्रकाश।"

"जी माताजी !" प्रकाश बोला।

"अब तुम्हारा कैसा जी है बेटा।" माताजी ने पूछा।

"अब ठीक है माताजी।" प्रकाश ने उत्तर दिया।

किशोर की माताजी किशोर भाई और विमला देवी से बोलीं, "तुम दोनों घर जाओ बेटा। मैं खाना बनाकर रसोई में रख आई हूं। खा-पीकर फिर आ जाना। तब तक मैं और तुम्हारे पिताजी यहां प्रकाश के पास बैठते हैं।"

विमलादेवी और किशोर भाई सुबोध को अपने साथ लेकर घर की ओर चल दिए। किशोर की माताजी प्रोफेसर प्रकाश के माथे पर हाथ फेरती रहीं और किशोर के पिताजी की दृष्टि मालतीदेवी को खोजती रही। उन्हें कहीं मालती दिखलाई नहीं दीं तो वह सीढ़ियों से उतरकर रसोई-घर में पंडित के पास पहुंच गए और उससे पूछा, "पंडित, मालती कहां है ?"

किशोर के पिताजी की बात सुनकर पंडित एक क्षण अवाक्-सा उनके सम्मुख खड़ा रह गया। फिर धीरे-धीरे करुण स्वर में बोला, 'लालाजी !

बहूजी कल यहां से चली गईं।"

"कहां ?" आश्चर्यचकित होकर किशोर भाई के पिताजी ने पूछा।

"नई दिल्ली में कोठी ले ली है लालाजी ! उन्होंने। अब वे वहीं रहा करेंगी।"

किशोर के पिताजी यह सुनकर स्तब्ध रह गए। उनका हृदय विदीर्ण हो गया। उनके मन में प्रोफेसर प्रकाश के लिए किशोर भाई से किसी भी प्रकार कम स्नेह नहीं था। उन्होंने मन ही मन कहा, 'मैंने आशंका गलत नहीं की थी। प्रकाश की भूल ने इसकी जीवन-शांति इससे छीन ली। इस प्रकार की लड़कियां गृहस्थी बसाकर नहीं चल सकतीं।'

वे भारी मन लेकर फिर प्रकाश के पास आ गए परंतु उन्होंने इस विषय में प्रकाश से कोई बात नहीं की। प्रकाश की अस्वस्थता का कारण उनके मस्तिष्क में स्पष्ट हो गया। वे समझ गए कि मालती के इस प्रकार चले जाने से प्रकाश के हृदय और मस्तिष्क पर गहरा आघात पहुंचा है।

उन्होंने मन ही मन क्रोध में भरकर कहा, 'दुष्ट कहीं की ! मेरे बेटे का जीवन खराब करके चल दी। मेरा वश चलता तो मैं प्रकाश का दूसरा विवाह कर देता, परंतु प्रकाश की आदत मैं जानता हूं। वह एक से लाख तक भी दूसरी शादी नहीं करेगा।'

तभी किशोर भाई और विमला देवी भोजन करके लौट आए और किशोर भाई के पिताजी और उनकी माताजी वहां से अपने घर की ओर चल दिए। घर आकर किशोर भाई के पिताजी अपनी पत्नी से बोले, "देख लिया तुमने किशोर की माताजी ! जो मैंने कहा था पूरा हुआ या नहीं ? वह दुष्टा आखिर प्रकाश को छोड़कर चली ही गई। नई दिल्ली में कोठी किराये पर लेकर ठाठ से रहने लगी। उसे अपने पति और बच्चे से क्या मतलब ?"

"क्या ?" आश्चर्यचकित होकर किशोर की माताजी ने पूछा।

"जी हां ! उसीकी तो यह बीमारी है प्रकाश को। कम्बख्त अपनी भरी-पूरी गृहस्थी को बर्बाद करके घर से चली गई। जाते समय अपने फूल-से बच्चे का भी लोभ नहीं आया उसे। उसे स्वतंत्रता चाहिए। पति और पुत्र दोनों ही उसकी स्वतंत्रता में बाधक थे। वह कैसे रहती इनके पास।"

किशोर के पिताजी व्यंग्य और क्रोधपूर्ण स्वर में बोले।

"क्या सचमुच चली गई मालती?" किशोर भाई की माताजी बोलीं।

"तब क्या मैं झूठ बोल रहा हूं। तुमने देख लिया अब, कि हमारी बहूरानी विमला और मालती में क्या अंतर है? ये मालती जैसी लड़कियां क्या गृहिणी बनने के योग्य होती हैं! ये तो आज़ाद चिड़ियां होती हैं। वृक्ष की जिस डाली पर अच्छे फूल लगे देखे, उसीपर फुदककर पहुंच गई।" कहकर किशोर के पिताजी ने बुरी तरह मुंह सिकोड़ लिया।

१२

प्रोफेसर प्रकाश का स्वास्थ्य दो-तीन दिन में ठीक हो गया। उनके जीवन का फिर वही कार्यक्रम बन गया। सुबोध को प्रातः काल नहला-धुलाकर उसके वस्त्र बदलना, उसे तैयार करके स्कूल भेजना और कालेज जाने की तैयारी करना। यही नित्य का क्रम था उनका।

संध्या को कालेज से लौटने पर अपने पुत्र के साथ बैठकर भोजन करना और फिर उसे सुलाकर अपना अध्ययन प्रारम्भ करना।

प्रोफेसर प्रकाश का डाक्ट्रेट का थीसेस, जो बीच में रुक गया था, उन्होंने फिर संभाला और एक वर्ष में ही उसका कार्य समाप्त करके डाक्ट्रेट प्राप्त की। अब प्रो० प्रकाश डा० प्रकाश बन गए।

आज संध्या को प्रोफेसर प्रकाश अपनी डाक्ट्रेट प्राप्त करने की सूचना देने के लिए सुबोध को साथ लेकर किशोर भाई के मकान पर पहुंचे और सूचना दी तो किशोर भाई ने उन्हें अपनी छाती से लगा लिया। वे हर्ष से उछल पड़े। उनकी छाती गर्व से फूलकर चौड़ी हो गई।

किशोर भाई हर्षित मन से बोले, "डा० प्रकाश! तुम्हारी उपाधि की सूचना प्राप्त कर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई।" और फिर सुबोध को गोद में उठाकर बोले, "बेटा सुबोध, एक दिन तुम भी अपने पापाजी के ही समान डाक्टर बनोगे।"

"बनूंगा ताऊजी।" गम्भीरतापूर्वक सुबोध बोला, "अवश्य बनूंगा।"

सुबोध का सरल और गम्भीर उत्तर सुनकर उसकी मुख-मुद्रा पर विमलादेवी रीझ उठीं। उन्होंने उसे किशोर भाई की गोद से अपनी गोद में लेकर उसका मुख चूम लिया और स्नेहार्द्र भाव से बोलीं, "अवश्य बनोगे बेटा ! तुम अपने पिता से भी बड़ी उपाधि प्राप्त करोगे।"

डा० प्रकाश अब अपने विभाग के अध्यक्ष बन गए थे। उनका वेतन भी अब चार सौ रुपया मासिक हो गया था और उन्होंने एक कार भी खरीद ली थी।

तीन वर्ष पश्चात् डा० प्रकाश ने डी० लिट्० की उपाधि प्राप्त की। इससे उनकी योग्यता को चार चांद लग गए और दो वर्ष पश्चात् ही वे अपने कालेज के प्रिंसिपल हो गए।

डाक्टर प्रकाश का कालेज की एक्ज़ीक्यूटिव कमेटी के सदस्यों में बड़ा मान था। उनकी योग्यता, सदाचारिता और ईमानदारी की सभी पर छाप थी। उन्हें गर्व था कि उनकी संस्था का प्रिंसिपल इतना योग्य, सदाचारी और ईमानदार है।

डा० प्रकाश के प्रति उनके कालेज के विद्यार्थी भी बड़ा आदर-भाव रखते थे। डा० प्रकाश बच्चों में मिलकर इस आयु में भी अपने को बच्चा ही समझते थे। वे अपने कालेज की फुटबाल टीम में स्वयं भी खेलते थे और उन्हें फील्ड में उतरते देखकर बच्चे हर्ष से खिल उठते थे। उनका साहस बढ़ जाता था।

संध्या को डा० प्रकाश घर आए और कपड़े उतारकर भोजन करने बैठे तो पंडित ने सूचना दी कि आज किशोर भाई के घर कन्या ने जन्म लिया है।

यह सुनकर डा० प्रकाश को इतनी प्रसन्नता हुई कि वे भोजन करना ही भूल गए और सुबोध से बोले, "सुबोध ! जल्दी से भोजन कर लो, फिर तुम्हें एक छोटी-सी मुन्नी दिखलाकर लाएंगे।"

"ताऊजी की मुन्नी पापाजी ?" सुबोध ने पूछा।

डा० प्रकाश हंसकर बोले, "हां, ताऊजी और ताईजी, दोनों की मुन्नी और मेरी तथा तुम्हारी भी मुन्नी है वह। वह सबकी मुन्नी है।"

सुबोध जल्दी-जल्दी भोजन करके बोला, "चलिए पापाजी ! मैं

तैयार हो गया मुन्नी को देखने के लिए।"

डा० प्रकाश बोले, "चलो बेटा।"

पिता और पुत्र दोनों किशोर भाई के घर पहुंचे तो वहां अपार हर्ष का वातावरण उपस्थित था। घर के सभी प्राणी प्रसन्न थे।

डा० प्रकाश प्रसन्न चित्त किशोर भाई की माताजी से बोले, "माताजी प्रणाम! यह सुबोध अपनी ताईजी की मुन्नी को देखने के लिए उतावला हो रहा है। तनिक इसे मुन्नी को दिखला लाइए।"

किशोर भाई की माताजी ने प्रसन्नतापूर्वक सुबोध को अपनी गोद में उठा लिया और बोलीं, "मुन्नी को देखोगे बेटा!"

"हां दादीजी! पापाजी ने मुझसे कहा है कि हमारे यहां एक मुन्नी भेजी है भगवान ने, तो मैंने कहा, पापाजी पहले आप मुझे उस मुन्नी को दिखला लाएं। और पापाजी मुझे लेकर चल दिए, बस। पापाजी कहते थे कि वह हम सबकी मुन्नी है।"

किशोर भाई की माताजी सुबोध की बातें सुनकर बहुत प्रसन्न हुईं और उसे अपने साथ लेकर जच्चाखाने में पहुंचीं, जहां विमलादेवी पलंग पर लेटी हुई थीं और उन्हींकी बगल में रेशमी छटूलना पहने एक छोटी-सी मुन्नी लेटी हुई थी।

सुबोध उसे देखकर हंस पड़ा और बोला, "दादीजी! यह तो गुड़िया है गुड़िया।" और झट उसने आगे बढ़कर अपना मुंह उसके मुंह पर टिकाकर उसे स्नेह से चूम लिया। सुबोध को मुन्नी बहुत अच्छी लगी।

यह देखकर विमलादेवी और उनकी सास दोनों का मन हर्षित हो उठा। सुबोध की स्नेहप्रियता देखकर उनका हृदय गद्‌गद हो उठा।

सुबोध हंसकर बोला, "दादीजी! बड़े अपने से छोटों को प्यार करते हैं न। तो मैं भी तो इस मुन्नी से बड़ा हूं। मुझे बहुत अच्छी लग रही है यह। तभी तो मैंने इसे चूम लिया।"

सुबोध की बात सुनकर विमलादेवी मुस्कराकर बोलीं, "तुमने ठीक किया बेटा! तुम एक बार और चूम लो अपनी मुन्नी को।"

विमला ताईजी की बात सुनकर सुबोध का ध्यान उनकी ओर गया तो वह सकपकाकर बोला, "ताईजी! आप लेटी क्यों हैं इस तरह? क्या

तबियत ठीक नहीं है आपकी ?"

विमलादेवी सुबोध के सिर पर हाथ रखकर बोलीं, "हां बेटा ! मेरा जी खराब हो गया था रात।"

यह सुनकर सुबोध बेचैनी-सी अनुभव करके बोला, "तो ताईजी, मैं डाक्टर साहब को बुला लाऊं।"

सुबोध की बात सुनकर विमलादेवी मुस्कराकर बोलीं, "नहीं बेटा ! मैं यूंही ठीक हो जाऊंगी दो-चार दिन में।"

सुबोध बोला, "नहीं, ताईजी ! एक बार पापाजी बीमार हुए थे तो ताऊजी डाक्टर को लाए थे। तभी तो तबीयत ठीक हुई थी पापाजी की। मैं पापाजी के साथ जाकर अभी डाक्टर साहब को लिवा लाता हूं।"

किशोर भाई की माताजी बोलीं, "डाक्टर साहब आ चुके है बेटा ! वे दवा दे गए हैं तुम्हारी ताईजी को। अब ठीक हो जाएंगी ये। तुम मुन्नी को खिला लो। तुम्हें अच्छी लगी यह मुन्नी ?"

यह कहकर उन्होंने उस छोटी गुड़िया जैसी मुन्नी को उठाकर सुबोध के हाथों में देकर स्वयं संभाले रखा उसे।

सुबोध को बहुत अच्छी लग रही थी मुन्नी। उसने उसे पकड़कर अपने हाथों में भर लिया।

सुबोध कमरे से बाहर निकला तो डा० प्रकाश ने पूछा, "मुन्नी देखी सुबोध तुमने ?"

"देखी पापाजी।" सुबोध बोला।

"कैसी लगी तुम्हें ?" डा० प्रकाश ने पूछा।

"बहुत सुन्दर है पापाजी ! बहुत अच्छी लगी मुझे।"

तभी किशोर भाई भी वहां आ गए।

"इस छोटी-सी गुड़िया ने घर में प्रवेश करके घर के वातावरण को संतान-स्नेह से भर दिया।" डा० प्रकाश सहर्ष बोले, "बच्चे के घर में आ जाने से घर का वातावरण कुछ और ही हो उठता है।"

डा० प्रकाश कुछ देर पश्चात् सुबोध को साथ लेकर अपने घर लौटे तो उन्होंने क्या देखा कि बाबू ब्रिजकिशनजी और सरोज भाभी मय अपने सामान के डा० प्रकाश के घर के आंगन में विराजमान थे।

डा० प्रकाश सरोज भाभी और बाबू ब्रिजकिशन को इस प्रकार अचानक वहां देखकर खिल उठे और बाबू ब्रिजकिशन से सस्नेह कौली भरकर मिले। सरोज भाभी को भी उन्होंने सादर प्रणाम किया।

सुबोध यह सब खड़ा-खड़ा देखता रहा। इन अपरिचित व्यक्तियों से इस प्रकार अपने पापाजी को सस्नेह मिलते देखकर वह समझ नहीं सका कुछ। सुबोध के सम्मुख इनके विषय में कभी कोई विशेष चर्चा भी नहीं हुई थी। बाबू ब्रिजकिशनजी और सरोज भाभी के कलकत्ता से पत्र आते-जाते थे और डा० प्रकाश उसका उत्तर दे देते थे। इन पत्रों से सुबोध का कोई सम्बन्ध नहीं था।

डा० प्रकाश सुबोध की ओर देखकर बोले, "सुबोध बेटा! अपने ताऊजी और ताईजी को प्रणाम करो।"

सुबोध ने अपनी सरल वाणी में इन अपरिचित व्यक्तियों को प्रणाम किया तो सरोज भाभी ने सुबोध को प्यार से अपनी गोद में उठा लिया। उन्होंने उसे छाती से लगाया और फिर इधर-उधर देखकर बोलीं, "मालती कहीं दिखलाई नहीं दे रही लालाजी! क्या गई हुई है कहीं?"

डा० प्रकाश ने उनके आते ही सब किस्सा कहना उचित नहीं समझा। वे बोले, "जी! कहीं गई हुई हैं।" और फिर डा० प्रकाश बात बदलकर बोले, "आपके तबादले का क्या हुआ भाई साहब? मैं तो प्रतीक्षा में ही रहा आपके पत्र की।"

बाबू ब्रिजकिशनजी बोले, "तबादला कराकर ही तो आया हूं मैं इस समय यहां प्रकाश। कलकत्ता इतने दिन रहा अवश्य परन्तु वहां कुछ स्वास्थ्य ठीक नहीं रह सका मेरा।"

यह सुनकर डा० प्रकाश बहुत प्रसन्न हुए। वे तुरन्त पंडित से बोले, "पंडित! खाना बनाओ, भाभी और भया के लिए।"

सरोज भाभी बोलीं, "नहीं लालाजी! खाना हमारे पास इतना है कि अभी दो दिन भी समाप्त नहीं होगा। हम सब लोग उसीको खाएंगे आज। खाना बनवाने की आवश्यकता नहीं है पंडित।"

डा० प्रकाश मुस्कराकर बोले, "मुझे और सुबोध को तो आज किशोर की माताजी ने इतना ठूंस-ठूंसकर खिलाया है कि भोजन नाक तक आ

गया है भाभी। आज सचमुच बहुत खा लिया हमने।"

"किशोर भाई के घर आज कन्या ने जन्म लिया है। उसीको देखने हम दोनों गए थे।"

सरोज भाभी को यह समाचार पाकर बहुत प्रसन्नता हुई। वे सहर्ष बोलीं, "चलो, इतने दिन पश्चात् भगवान ने उन्हें कन्या दी है तो पुत्र भी देगा भगवान।"

फिर सब लोग ऊपर चले गए। जब सोने की भी तैयारी हो गई और मालती का अभी भी वहां कहीं पता नहीं चला तो सरोज भाभी तनिक सशंकित-सी होकर बोलीं, "लालाजी, सचमुच बतलाओ मालती कहां है?"

डा० प्रकाश मुस्कराकर बोले, "भाभी, मालतीदेवी को इस मकान में रहते लज्जा आती थी। उन्होंने बारहखम्भा रोड पर नई दिल्ली में एक कोठी किराये पर ले ली है और आजकल वे वहीं रहती हैं। कल आप और भाई साहब जाकर मिल आना उससे।"

डा० प्रकाश ने यह बात मुस्कराकर ही कही परन्तु उनके हृदय की वेदना को समझने में सरोज भाभी को समय नहीं लगा। वे दुःखी मन से बोलीं, "मालती! तू ऐसी निकली! तूने मेरे सब किए-धरे पर पानी फेर दिया। तूने मुझे लालाजी की दृष्टि में इतना नीचे गिरा दिया।" और सचमुच उनकी आंखों में आंसू आ गए।

डा० प्रकाश सांत्वना-भरे स्वर में बोले, "भाभी, इसमें किसीका कोई दोष नहीं है। दोष मेरे अपने ही भाग्य का है। मैं मालती के अनुरूप अपने को न बना सका और मालती अपने को मेरे अनुरूप न बना सकी। आपने अपने को भैया के अनुरूप बना लिया तो दोनों का जीवन आनन्दपूर्वक साथ-साथ चल रहा है। विमला भाभी ने अपने गुणों और अपनी तपस्या से किशोर भाई के अनुरूप अपने को बना लिया तो दोनों का जीवन स्वर्ग बन गया। हम दोनों दो विभिन्न धाराओं में बह चले। मालती मेरी चाल को गलत समझ रही और मैं उनकी चाल को। इसीसे हम दोनों के जीवन दो दिशाओं में बह चले।"

डा० प्रकाश की बात सुनकर सरोज भाभी गम्भीर वाणी में दृढ़ता-

पूर्वक बोलीं, "नहीं लालाजी ! चाल मालती की ही गलत है। कोठी तो क्या, उसे स्वर्ग में भी अपनी इच्छा से अपने पति और पुत्र को छोड़कर नहीं जाना चाहिए था। मालती ने भूल ही नहीं, महान पाप किया है। मैं उसकी कोठी पर जाना अपना अपमान समझती हूं।"

सरोज भाभी की बात सुनकर डा० प्रकाश का मन उनके प्रति श्रद्धा से झुक गया। उन्होंने करुण दृष्टि से सरोज भाभी की ओर देखकर नेत्रों से अश्रु बरसाते हुए कहा, "भाभी ! मालती पाषाण बन गई। इतने सुन्दर रूप में इतना कठोर पाषाण भी छिपा रह सकता है, यह मुझे मालती ने ही बतलाया।"

बाबू ब्रिजकिशन को यह सब सुनकर हार्दिक वेदना हुई और वे स्पष्ट वाणी में बोले, "मालती ने निहायत घृणित कार्य किया है प्रकाश ! मेरा मन और मस्तिष्क उसे कभी क्षमा नहीं कर सकते।"

यह सुनकर डा० प्रकाश बोले, "भैया, मालती पर क्रोध न करो। मैंने आज तक जीवन में उसकी हर भूल को क्षमा किया है। उसका हर अपराध मेरी दृष्टि में क्षम्य है ! मैं देखना चाहता हूं कि वह मेरे हृदय को कहां तक कष्ट पहुंचा सकती है और मुझमें कितनी शक्ति है उसे सहन करने की।"

बाबू ब्रिजकिशनजी और सरोज भाभी दोनों डाक्टर प्रकाश के व्यक्तित्व के सम्मुख नतमस्तक हो गए। उन्होंने डाक्टर प्रकाश के चेहरे पर अपूर्व श्रद्धा के साथ देखा।

दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर अपने नित्य कर्म से निवृत्त होकर बाबू ब्रिजकिशन अपने आफिस चले गए। सुबोध को डाक्टर प्रकाश ने नहला-धुलाकर नाश्ता कराया और फिर पंडित को उसे स्कूल छोड़ने के लिए भेज दिया।

सरोज भाभी ने आज सवेरे उठते ही रसोई का काम अपने हाथों में ले लिया था। आज का नाश्ता और चाय उन्हींने तैयार की थी।

डाक्टर प्रकाश स्नान करके अपने ड्राइंग रूम में आए तो नाश्ता और चाय लेकर सरोज भाभी सामने आ गईं।

डाक्टर प्रकाश ने सरोज भाभी की ओर देखकर कहा, "भाभी, आपने यह कष्ट क्यों किया ? पंडित सुबोध को स्कूल पहुंचाकर लौट आता तो

कर लेता यह सब।"

सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "पंडित क्यों कर लेता लालाजी! घर में भाभी के आ जाने पर भी क्या रसोई के लिए नौकर की आवश्यकता है?"

सरोज भाभी के इतना कहते ही डाक्टर प्रकाश के मानस में अपने उन पांच वर्षों की स्मृति जाग्रत् हो उठी जिनमें सरोज भाभी ने कभी उन्हें बाज़ार में भोजन करने के लिए नहीं जाने दिया था। अपने माता-पिता की मृत्यु के पश्चात् डाक्टर प्रकाश कुछ दिनों तक अपने मित्र किशोर भाई के यहां ही भोजन करते रहे थे और रहते भी प्रधानतया उन्हींके मकान में रहे थे। इसी बीच में बाबू ब्रिजकिशनजी डाक्टर प्रकाश के मकान में किरायेदार बनकर आ गए थे।

तभी डाक्टर प्रकाश ने सरोज भाभी को अपने माता-पिता की मृत्यु की पीड़ाप्रद कहानी सुनाई थी और उसके पश्चात् संध्या को डाक्टर प्रकाश भोजन के लिए जब बाज़ार जाने लगे थे तो सरोज भाभी ने पूछा था, "लालाजी! आप भोजन करने कहां जाते हैं?"

डा० प्रकाश ने मुस्कराकर कहा था, "भाभी! संध्या को यहीं परांठेवाली गली में दो-तीन परांठे खा लेता हूं, और सुबह का भोजन जहां होता है कर लेता हूं। कोई निश्चित नहीं रहता सुबह के भोजन का।"

सरोज भाभी ने तब स्नेहपूर्ण शब्दों में सशासन उनसे कहा था, "देखिए लालाजी! आज से आप बाज़ार में भोजन नहीं करेंगे। भोजन अब नित्य नियम से आपको घर पर ही करना होगा दोनों समय। इसका आगे से ध्यान रहे।"

फिर ठीक पांच वर्ष तक डा० प्रकाश ने सरोज भाभी के ही हाथ का बना हुआ भोजन किया था।

उसी दौरान में एक दिन डा० प्रकाश ने सरोज भाभी से अपने भोजन का मूल्य लेने का आग्रह किया था तो सरोज भाभी रूठ गई थीं और वे पांच दिन तक डा० प्रकाश से नहीं बोली थीं। अन्त में डा० प्रकाश को ही उनसे क्षमा-याचना करनी पड़ी थी।

आज सरोज भाभी को फिर छः वर्ष पश्चात् उसी स्नेह से अपना नाश्ता लिए सामने खड़ी देखकर डा० प्रकाश का हृदय उमड़ आया। वे

धीरे से बोले, "भाभी ! आपका अधिकार छीनने की सामर्थ्य क्या प्रकाश में कभी हुई है जो आज होगी।" और इतना कहकर वे कुर्सी पर बैठ गए।

सरोज भाभी ने नाश्ता तश्तरी में लगाकर प्याली में चाय उड़ेली और मुस्कराकर बोलीं, "लालाजी ! नाश्ते के साथ दूध छोड़कर यह चाय पीनी कब से प्रारम्भ कर दी ?"

डा० प्रकाश भारी मन से बोले, "यह चाय की बान भी मालतीदेवी की ही डाली हुई है भाभी ! उसीने मेरा दूध पीना छुड़ाकर चाय पीने की आदत डाल दी और जब चाय पिलाने का समय आया तो आप मुझसे दूर जा बैठी।"

डा० प्रकाश के हृदय की पीड़ा का अनुभव करके सरोज भाभी बोलीं, "लालाजी ! अब तुम मेरे सम्मुख मालती को मालतीदेवी कभी न कहना। वह देवी होती तो क्या अपने पति को छोड़कर इस प्रकार चली जाती ?"

डा० प्रकाश सकरुण स्वर में बोले, "भाभी ! मैंने अपने हृदय और मन में मालती के लिए जो स्थान एक बार बना लिया उसमें जीवन-भर कोई परिवर्तन होनेवाला नहीं है। मैंने अपने मन-मंदिर में उसे देवी के समान ही स्थापित किया है और वह मेरे लिए इस जीवन में देवी ही रहेगी। और कोई उसे कुछ भी समझे और कहे परन्तु मैं अपनी धारणा में परिवर्तन नहीं कर सकता। मैं आज भी उसे उसी रूप में देखता हूं जिस रूप में मैंने उसे एक बार स्वीकार कर लिया।

"मुझे विश्वास है कि मालती के जीवन में एक दिन ऐसा अवश्य आएगा जब वह अनुभव करेगी कि जीवन का वास्तविक सुख विपुल धन, सम्पत्ति और एश्वर्य तथा दुनिया की रंगीनियों में नहीं है, नारी के जीवन की शांति अपने पति और बच्चों के स्नेह में है।"

सरोज भाभी ने डा० प्रकाश की बात सुनकर उनके चेहरे पर हार्दिक स्नेह और श्रद्धा की दृष्टि से देखा। वे दर्द-भरे स्वर में बोलीं, "लालाजी ! मालती को मैंने अपनी बेटी के समान पाल-पोसकर इतना बड़ा किया और फिर जब तुम जैसा सुयोग्य वर भी मैं उसके लिए खोज सकी

तो मेरे हर्ष का पारावार नहीं रहा था। इसे मैंने अपने जीवन की उसके विषय में सबसे बड़ी सफलता माना था। परन्तु लालाजी! उसने अपने आचरण से मेरे हृदय को जो पीड़ा पहुंचाई है, उसने मेरा हृदय विदीर्ण कर दिया। मेरा मन उसकी ओर से कुंठित-सा हो गया। मैं समझ नहीं पा रही कि उसे हो क्या गया। इतनी सीधी और सरल लड़की थी वह कि तुमसे क्या कहूं! कभी मुझसे पूछे बिना उसने टुकड़ा नहीं तोड़ा और उसीने गत चार वर्ष के दौरान में मुझे कभी एक भी पत्र अपनी कुशलता का लिखना उचित नहीं समझा। मैंने यहां जो पत्र लिखे उनके उत्तर में तुमने ही कभी मालती के विषय में कुछ लिख दिया तो लिख दिया, उसने कभी एक पत्र अपनी बहिन को नहीं लिखा।"

डा० प्रकाश को सरोज भाभी से यह सूचना प्राप्त कर हार्दिक कष्ट हुआ।

अब उनका कालेज जाने का समय हो गया था। उन्होंने जल्दी-जल्दी अपने वस्त्र बदले और कलाई पर बंधी घड़ी देखते हुए बोले, "भाभी! अब मैं चला। कालेज का समय हो गया है। केवल दस मिनट शेष रह गए।"

डा० प्रकाश मोतीबाज़ार से निकलकर चांदनीचौक में आए, जहां ड्राइवर ने उनकी कार लाकर खड़ी की हुई थी। वे कार में बैठ गए और ड्राइवर ने गाड़ी स्टार्ट कर दी।

१३

मालतीदेवी अपनी कार में बैठकर बारहखम्भा रोड की कोठी पर पहुंचीं तो देखा कि लाला किशोरीलाल उनके स्वागत के लिए वहां पहले से उपस्थित थे। वे मालतीदेवी की प्रतीक्षा कर रहे थे।

लाला किशोरीलाल ने कार से अकेली मालतीदेवी को उतरते देखा तो उनकी आत्मा प्रसन्न हो गई। वे समझ गए कि प्रो० प्रकाश मालती-देवी के साथ रहने के लिए इस कोठी में नहीं आए।

लाला किशोरीलाल के मन में यह देखकर अपार हर्ष हुआ। परन्तु वे अपने हृदय भर उठनेवाले हर्ष को हृदय के एक कोने में दबाकर सरल वाणी में बोले, "मालतीदेवी ! क्या आपके पति प्रो० प्रकाश नहीं आए आपके साथ यहां रहने के लिए ?"

"आ जाएंगे वे भी।" उपेक्षा के भाव से मालतीदेवी ने कहा।

लाला किशोरीलाल बोले, "मालतीदेवी ! मुझे कहना तो नहीं चाहिए कुछ, क्योंकि पति और पत्नी के सम्बन्ध की बातें हैं, परन्तु इधर इतने दिन से देख रहा हूं कि प्रो० प्रकाश को आपकी उन्नति देखकर हर्ष नहीं हुआ, बल्कि और पीड़ा ही उत्पन्न हुई उनके हृदय में। उनके हृदय में आपकी उन्नति देखकर डाह उत्पन्न होती है कुछ। उनका आपके साथ न आना भी इसी बात का प्रमाण है।" और फिर हंसकर कहा, "नाली का कीड़ा नाली में ही पड़ा रहना पसन्द करता है।"

लाला किशोरीलाल का यह अन्तिम वाक्य, जो उन्होंने उनके पति के विषय में कहा, मालतीदेवी को अच्छा नहीं लगा, परन्तु वे उसकी पीड़ा को अपने अन्दर ही घोंटकर पी गईं। लाला किशोरीलाल के उपकारों से दबी थीं वे इस समय। उनको यह उज्ज्वल भविष्य उन्हींकी सुकृपा के फलस्वरूप प्राप्त हुआ था। वे हंसकर बोलीं, "अपनी-अपनी इच्छा है लालाजी ! प्रो० साहब के रूढ़िवादी जीवन में इस नवीनतम विकास के लिए बहुत कम स्थान है। उनका मत है कि जीवन की आवश्यकताओं को अपनी आय के अन्दर सीमित रखकर चलना चाहिए और मेरा मत है कि आवश्यकताओं के अनुसार मनुष्य को अपनी आय बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। मैं विकासवाद की समर्थक हूं और वे संतोषवाद के। मैं उनके संतोषवाद को मनुष्य की उन्नति में बाधक मानती हूं और उनका मत है कि धन के पीछे दौड़ने से मानसिक शांति नष्ट होती है। मैं उनके मत से सहमत नहीं हूं। मेरा मत है कि मनुष्य को अपनी आय जितनी भी वह बढ़ा सकता है बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। आय अच्छी होने पर मानसिक शांति भी प्राप्त हो ही जाती है। धन से ही मनुष्य के जीवन का विकास होता है।"

"इसमें क्या सन्देह है मालतीदेवी ! धन को मैं मानसिक शांति का

मूल साधन मानता हूं। अभी उस दिन जब आपने मुझे मेरे केस में जीतने की सूचना दी तो सच जानिए कि मैं कह नहीं सकता मुझे कितनी मानसिक शांति प्राप्त हुई। मेरी मन की मुरझाई हुई कलिका खिल उठी। मेरा मानस फूल जैसा हलका हो उठा। मेरे नेत्रों के सम्मुख प्रकाश छा गया।"

लाला किशोरीलाल के शब्दों में अपने मत का समर्थन प्राप्त कर मालतीदेवी उमंग में नाच उठीं। उनकी दृष्टि अपने सामने की कोठी पर गई और उसकी आभा देखी तो मुक्त कंठ से बोलीं, "कोठी बहुत सुन्दर बनवाई है आपने। बहुत ही शानदार बनी है यह कोठी।"

"सचमुच बहुत सुन्दर बनी है मालतीदेवी! मैं जब एक दृष्टि आपके चेहरे पर डालता हूं और दूसरी इस कोठी पर, तो लगता है कि यह कोठी आपके ही लिए बनी है। इसमें रहकर आप देखेंगी कि आप कितनी उन्नति करती हैं।" लाला किशोरीलाल बोले।

लाला किशोरीलाल के मुख से मालतीदेवी अपने कार्य की प्रशंसा ही आज तक सुनती आई थीं। अपने रूप की प्रशंसा उनके मुख से मालतीदेवी ने आज तक नहीं सुनी थी। मालतीदेवी को यह प्रशंसा भली नहीं लगी। उनके हृदय में मानो उन्होंने एक पिन-सी चुभा दी।

परन्तु इसे भी उन्होंने शब्दों में व्यक्त नहीं किया।

मालतीदेवी ने कोठी में रहना प्रारम्भ कर दिया। वहां उनके पास बड़े-बड़े क्लाइण्ट्स् ने आना प्रारम्भ कर दिया। मालतीदेवी को अब कनाट प्लेस के कार्यालय में जाने की भी आवश्यकता नहीं रही। उन्होंने अपना कार्यालय कोठी में ही बना लिया। जिसे गरज होती थी वह यहीं आता था उनके पास। मालतीदेवी की ख्याति क्लाइण्ट्स् को स्वयं उनके पास खींचकर लाने लगी।

कोठी में आने पर मालतीदेवी एकदम स्वतंत्र हो गईं। अपनी स्वतंत्रता में प्रो० प्रकाश को बाधास्वरूप तो उन्होंने कभी पहले भी नहीं समझा था और सत्य यह था कि प्रो० प्रकाश ने कभी कोई बाधा उपस्थित भी नहीं की, परन्तु जब से उन्होंने अपना कार्यालय नई दिल्ली में बना लिया था तब से तो वे ऐसी स्वतंत्र हो गई थीं

कि कहीं आने-जाने के विषय में उनसे कहने-सुनने की भी आवश्यकता नहीं रह गई थी।

अब कोठी के स्वतंत्र वातावरण ने उन्हें और भी स्वतंत्र बना दिया। मानो विधाता ने उनके सब कृत्रिम बंधन काट दिए। उन्होंने संसार के स्वतंत्र वातावरण में खुलकर श्वास लिया और धीरे-धीरे उनके पास आने-जानेवाले महानुभावों की संख्या में भी वृद्धि होने लगी।

मालतीदेवी के पास आनेवालों की संख्या अधिकांशतः उनके क्लाइण्ट्स् की ही थी जो समय-असमय बिना कामकाज के भी मालतीदेवी के पास मिलने आ जाते थे और संध्या समय नई दिल्ली के किसी अच्छे रेस्ट्रां में चलने या सिनेमा इत्यादि देखने का कार्यक्रम बना लेते थे।

लाला किशोरीलाल जो पहले मालतीदेवी की स्वतंत्रता के बड़े समर्थक थे, अब मालतीदेवी का इस प्रकार अपने अन्य क्लाइण्ट्स् के साथ नित्य होटलबाज़ी करते देखकर कुछ खिन्न-से हो उठे थे। उन्हें मालतीदेवी की इतनी स्वतंत्र प्रवृत्ति कुछ खटकने-सी लगी थी।

इधर कई दिन से नित्य मालतीदेवी की कोठी पर कई-कई बार गए थे परन्तु मालतीदेवी से उनकी भेंट नहीं हो रही थी। आज वे फिर कई बार आए और जब भी आए तो पंडित से यही पता चला कि वे कोठी में नहीं थीं। यह 'नहीं हैं, नहीं हैं' सुनते-सुनते लाला किशोरीलाल का मन कुछ खीज-सा उठा। उनके कान पक चले थे इस 'ना' को सुनकर।

वे सोचने लगे कि ये मालतीदेवी भी आखिर क्या हैं जो दो घड़ी जमकर अपनी कोठी में नहीं बैठ सकतीं। वे पोर्टिको में खड़े-खड़े यही सोच रहे थे कि कोठी के द्वार में उन्होंने मालतीदेवी की कार को आते देखा।

कार को देखते ही लाला किशोरीलाल की बाछें खिल उठीं। उनके मन की कुम्हलाती हुई पंखुड़ियां खुलकर सतर हो गईं। उन्होंने कार की खिड़की से झांककर देखा तो मालतीदेवी लाला रतनलाल के साथ कार में बैठी बातें करती चली आ रही थीं।

कार पोर्टिको में रुकी और दोनों कार से नीचे उतरे तो मालतीदेवी की दृष्टि लाला किशोरीलाल पर गई, जो पोर्टिको से ऊपर कोठी के बाहर-

वाले बरांडे में घूम रहे थे। मालतीदेवी के साथ लाला रतनलाल को आते देखकर उनका उत्साह कुछ भंग-सा हो गया था।

मालतीदेवी लाला किशोरीलाल की ओर मुस्कराते हुए देखकर बोलीं, "आज लाला किशोरीलालजी इधर कैसे भूल पड़े ? मैं तो आज सोच रही थी कि स्वयं आपके यहां आऊंगी। कई दिन से आपसे भेंट नहीं हुई तो सच जानिए लालाजी, मुझे यहां कुछ सूना-सूना-सा लगने लगा था।"

लाला किशोरीलाल के दग्ध हृदय पर मालतीदेवी ने मानो ये शब्द उच्चारण करके शीतल जल की वर्षा कर दी। उनके मन की सारी जलन समाप्त हो गई। वे मुस्कराकर बोले, "मैं तो कई बार यहां आया मालतीदेवी, परन्तु आपके ही दर्शन न हो सके। जब भी आया तो आपके नौकर पंडित ने यही सूचना दी कि आप कोठी में नहीं हैं, किन्हीं महाशय के साथ गई हैं।"

"क्या सचमुच आप कई बार पधारे ?" मालतीदेवी ने मुस्कराकर तिरछी दृष्टि से उनकी ओर देखते हुए कहा, "तब तो बहुत कष्ट हुआ आपको !" और फिर लाला रतनलाल की ओर देखकर बोलीं, "इधर कई दिन से यहां न मिलने का कारण आप हैं, लाला किशोरीलालजी ! इन बेचारों का एक पचास लाख का केस हाईकोर्ट में उलझा हुआ है। इनकी परेशानी में मेरे कई दिन इन्हींके काम में निकल गए। तीन-चार दिन सारा समय इन्हींकी कोठी पर व्यतीत हुआ। इनके पूरे रिकार्ड का मुआयना करना था, सो मैंने यही उचित समझा कि वहीं जाकर सब देख लूं। क्योंकि पूरा रिकार्ड यहां उठाकर लाना इनके लिए कठिन होता।"

मालतीदेवी ने कई दिन लाला रतनलाल की ही कोठी पर व्यतीत किए यह जानकर लाला किशोरीलाल को हार्दिक वेदना हुई। परन्तु उस वेदना का प्रभाव उन्होंने अपने चेहरे पर नहीं पड़ने दिया। वे मरे मन से मुस्कराकर बोले, "तो समझ लिया आपने लाला रतनलाल का केस ?"

मालतीदेवी प्रसन्न मुद्रा से मुस्कराकर बोलीं, "समझ लिया लाला किशोरीलालजी ! केस में कुछ नहीं है। इनका वकील ही मूर्ख था जिसने

इन्हें इतना श्योर केस हरवा दिया। केस मेरे हाथ में होता तो पहली ही पेशी पर उड़ जाता! वह एग्रीमेंट ही इनवेलिड[1] है, जिसके आधार पर यह पचास लाख की डिक्री[2] हुई है इनपर। आप देखिए हाईकोर्ट में यह केस कितना साफ छूटता है।"

"क्यों नहीं? जिस केस की पैरवी मालतीदेवी करें और वह न छूटे, यह भला कभी सम्भव है!" लाला किशोरीलाल बोले।

लाला किशोरीलाल की बात सुनकर लाला रतनलाल के मन को महान सांत्वना मिली। उन्हें आशा बंध गई कि अब उन्हें इस केस में अवश्य विजय प्राप्त होगी। लाला रतनलालजी अपनी फाइल लेकर लौट गए और मालतीदेवी तथा लाला किशोरीलालजी कोठी में बैठे रह गए।

लाला किशोरीलाल और मालतीदेवी आमने-सामने दो सोफों पर जा बैठे।

मालतीदेवी बोली, "कहिए लालाजी! कारोबार कैसा चल रहा है आपका?"

"बहुत अच्छा चल रहा है मालतीदेवी! सब कृपा है आपकी। आप कहिए, कोठी में आने से आपकी प्रेक्टिस में भी कुछ वृद्धि हुई या नहीं? मैं तो समझता हूं आपको काफी सफलता मिली होगी!"

"हुई क्यों नहीं लालाजी! आपकी कृपा से काम कई गुना बढ़ गया यहां आने से, और क्लाइण्ट्स् सभी अच्छे-अच्छे हाथ लगे हैं।"

मालतीदेवी का काम दिन दूना और रात चौगुना बढ़ा परन्तु आय के साथ-साथ उनका व्यय भी पराकाष्ठा को पहुंच गया। सैर-तफरीह और होटलबाजियों में उनका धन पानी की तरह बहने लगा। जिन क्लाइण्ट्स् से वे धन उपार्जित करती थीं उन्हींकी चौकड़ी में बैठकर उसे खुले दिल से खर्च भी करती थीं।

मालतीदेवी के मन में अब यह बात कभी आती ही नहीं थी कि उनके पास आनेवाले इस धन की गति कभी मन्द भी पड़ सकती है। वे तो उसकी निरन्तर वृद्धि की ही कल्पना करती थीं और सोचती थीं कि इसकी गति कभी मन्द होनेवाली नहीं है।

१. गैरकानूनी २. डिग्री

इसी प्रकार का जीवन व्यतीत करते-करते मालतीदेवी के जीवन का स्वर्णकाल निकल गया। पूरे पन्द्रह वर्ष व्यतीत हो गए। इस बीच में ऐसी बात नहीं कि उन्हें डा० प्रकाश और अपने बेटे सुबोध की कभी याद ही न आई हो, परन्तु उन्हें मालीवाड़े के उस मकान में जाते अब लज्जा प्रतीत होती थी। उनकी डा० प्रकाश इतनी उपेक्षा कर सकेंगे इसकी उन्हें स्वप्न में भी आशा नहीं थी। कभी कल्पना भी नहीं की थी उन्होंने इस बात की। वे यही सोचकर यहां चली आई थीं कि डा० प्रकाश उनके बिना रह नहीं सकेंगे। उन्हें आना ही होगा एक दिन उनके पास, परन्तु हुआ यह सब कुछ नहीं। डा० प्रकाश उनकी कोठी पर नहीं आए।

मालतीदेवी समझ नहीं सकीं कि इतना नर्मदिल इंसान इतना कठोर कैसे बन सका। जो व्यक्ति उनकी तनिक-सी बेचैनी या असुविधा को भी कभी सहन नहीं कर सकता था, व्याकुल हो उठता था, वह आखिर उन्हें इस प्रकार कैसे भूल गया। आखिर वह कैसे उनके प्रति इतना उदासीन हो सका।

मालतीदेवी कभी-कभी घंटों बैठी यही सोचती रहती थीं और उनका मन उदास-सा हो उठता था। उस समय उनका अपना वैभव उन्हें अपने जीवन का उपहास-सा प्रतीत होने लगता था। यह कोठी, यह धन और यह सब कुछ उन्हें ऐसा लगने लगता था कि मानो उन्हें काटने को दौड़ते हैं। उन्हें इन सबसे घृणा-सी हो उठती थी।

तभी लाला किशोरीलालजी आ जाते थे और उनसे बातें करते-करते उनके हृदय की यह पीड़ा कुछ दब-सी जाती थी। उनके साथ बातें करने में वे अपनी पीड़ा को भुला देती थीं परन्तु इधर चार-पांच वर्ष से लाला किशोरीलाल का भी यहां आना बन्द हो गया था। उनका सम्बन्ध मालतीदेवी से एक मकान मालिक और किरायेदार के अतिरिक्त शेष कुछ नहीं रह गया था।

लाला किशोरीलाल के हृदय को मालतीदेवी के व्यवहार से बड़ी ठेस लगी थी। आखिर उन्होंने क्या नहीं किया मालतीदेवी के लिए। वे उन्हें मालीवाड़े की उस गंदी गली से उठाकर नई दिल्ली में न लाए होते तो वे इतनी चमक पातीं? इनकी सारी योग्यता रखी ही रह जाती यदि

उन्होंने इन्हें नई दिल्ली में लाकर न बिठला दिया होता। उन्होंने इन्हें पत्थर से हीरा बना दिया, तांबे से सोना बना दिया। परन्तु मालतीदेवी ने उनके इन सब उपकारों पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया।

यह सब कुछ किया था लाला किशोरीलालजी ने, इसमें कोई संदेह नहीं परन्तु यह सब क्या उन्होंने मालतीदेवी के सतीत्व को खरीदने के लिए किया था? मालतीदेवी के मन में लाला किशोरीलालजी के लिए अपार श्रद्धा थी। वे उनका बहुत आदर करती थीं, परन्तु जिस दिन उन्होंने लाला किशोरीलालजी की कुदृष्टि देखी तो उसे वे कतई सहन न कर सकीं। उनके मुख से वे डा० प्रकाश के लिए कई बार कुछ अपशब्द सुनकर भी उन्हें पी गई थीं, परन्तु सत्य यही था कि उनकी जलन को वे भुला नहीं सकी थीं। उनकी पीड़ा मालतीदेवी के हृदय में बराबर बनी हुई थी।

उन्होंने उस दिन मुक्त कंठ से कहा था, "लाला किशोरीलालजी! यह सच है कि मेरे और मेरे पति के दृष्टिकोण में मतभेद है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि उनके लिए मेरे हृदय और मन में किसी भी प्रकार कुछ कम श्रद्धा है। मालती को समझने में आपने बहुत बड़ी भूल की है। और मेरे पति को समझना तो आपके लिए नितांत असम्भव है। आपने जिस दृष्टि से मेरी ओर देखने का प्रयास किया, वह आपको नहीं करना चाहिए था। आपने अपने आजके व्यवहार से अपने सब किये-धरे पर पानी फेर दिया। आपके प्रति मेरे मन में बहुत आदर-भाव था परन्तु आज से आप समझ लीजिए कि नाली का कीड़ा मेरे पति डा० प्रकाश नहीं, आप हैं! डा० प्रकाश मेरे पति हैं और उनका जो पवित्र स्थान मेरे हृदय में है उसे प्राप्त करना तो बहुत बड़ी बात है, उसकी हवा भी किसी नाली के कीड़े को प्राप्त नहीं हो सकती। डा० प्रकाश मेरे मन-मंदिर के देवता हैं।"

जिस समय ये बातें हो रही थीं तो मालतीदेवी का पुराना नौकर पंडित चुपचाप एक ओर खड़ा सब सुन रहा था। मालतीदेवी की आज की बातें सुनकर पंडित के मन में अपार हर्ष हुआ। उसके मन में मालतीदेवी के डा० प्रकाश के प्रति कुव्यवहार से जो घृणा पैदा हो गई थी, वह काफूर

हो गई।

मालतीदेवी की यह बात सुनकर लाला किशोरीलाल तिलमिलाकर रह गए थे। उन्हें लगा कि उन्होंने एक कृतघ्न नारी के लिए व्यर्थ ही इतना सब कुछ किया। उन्होंने व्यर्थ ही अपने धन का अपव्यय किया। उन्हें मालती-देवी के लिए एक पैसा भी खर्च नहीं करना चाहिए था।

और उसी दिन से वे मालतीदेवी से तटस्थ हो गए। उसी दिन उन्होंने पांच वर्ष के किराये का पांच सौ रुपया मासिक का चिट्ठा बनाकर तीस हज़ार का हिसाब मालतीदेवी के पास भेज दिया।

मालतीदेवी लाला किशोरीलाल के हिसाब का चिट्ठा देखकर मुस्करा दीं। वे मधुर शब्दों में लाला किशोरीलाल के मुनीम से बोलीं, "मुनीम-जी! रसीद बनाइए और चेक लीजिए। लाला किशोरीलाल ने यह किराये का हिसाब भेजकर बड़ी कृपा की मुझपर।"

मालतीदेवी ने तीस हज़ार का चेक काटकर मुनीमजी के हवाले कर दिया और रसीद लेकर अपनी तिजोरी में रख ली।

दूसरे दिन मालतीदेवी ने लाला किशोरीलाल के मुनीमजी को फिर अपनी कोठी के द्वार पर आते देखा तो कुछ समझ नहीं सकीं वे उनके आने का कारण।

वे सामने आए तो मालतीदेवी ने मुस्कराकर पूछा, "कहिए मुनीम-जी! क्या कोई और आदेश भेजा है लालाजी ने?"

मुनीमजी ने मोटर की खरीद के कागज़ मेज़ पर रखकर कहा, "लालाजी ने एक बीस हज़ार का चेक और देने के लिए कहा है मालतीदेवी!"

मालतीदेवी ने मुस्कराकर कहा, "इसकी भी रसीद बनाइए।" और एक बीस हज़ार का चेक उन्होंने लाला किशोरीलाल के नाम और काट दिया।

चेक देकर मालतीदेवी बोलीं, "लालाजी से कह दीजिए कि कहें तो वह पांच हज़ार रुपया जो उन्होंने अपने केस की फीस के बतौर मुझे दिया था वह भी लौटा दूं। लालाजी की मुझपर बहुत बड़ी कृपा रही है। उन्हीं-की बदौलत आज यह इतनी बड़ी रकम मैं उन्हें अदा कर सकी।"

लाला किशोरीलाल के मुनीम ने यह बात जाकर लाला किशोरीलाल से कही तो वे लज्जा से गड़ गए। उनका विचार था कि मालतीदेवी पचास हज़ार की रकम एकमुश्त अदा नहीं कर सकेंगी और उन्हें दबकर उनकी शरण में आना होगा।

लाला किशोरीलाल ने अपने मुनीमजी को मालतीदेवी के पास वास्तव में रुपया लेने के लिए नहीं भेजा था। वे तो मालतीदेवी को किसी प्रकार झुकाकर अपने कब्ज़े में लाना चाहते थे। उनके दृष्टिकोण से रुपये की मार किसी व्यक्ति पर सबसे बड़ी मार थी। और उसी अस्त्र का प्रयोग उन्होंने मालतीदेवी पर किया था। परन्तु मालतीदेवी ने पचास हज़ार रुपये का भुगतान करके लाला किशोरीलाल के इस अमोघ अस्त्र को विफल बना दिया।

लाला किशोरीलाल के हृदय में इन चेकों को प्राप्त कर महान निराशा हुई। वे अपने उद्देश्य में सफल न हो सके। इस हार से उनका घायल हृदय बहुत व्याकुल हुआ। अब वे मुंह लेकर मालतीदेवी के समक्ष जाने योग्य भी न रहे।

मालतीदेवी उसके पश्चात् प्रति मास उनके पास पांच सौ रुपये का किराये का चेक पहली तारीख को ही अग्रिम भेज देती थीं। केवल यही सम्बन्ध आजकल मालतीदेवी और लाला किशोरीलाल का रह गया था, इसके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं।

१४

डा० प्रकाश का जीवन सरोज भाभी के दिल्ली में आ जाने से उतना उदासीन और नीरस नहीं रहा था जितना वह गत दो-तीन वर्ष से चल रहा था। उन्होंने धीरे-धीरे अपने मन को सांत्वना देकर अपने को जीवन-पथ पर शांतिपूर्वक चलने योग्य बना लिया था।

अपने पुत्र सुबोध के जीवन-निर्माण को ही उन्होंने अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य बना लिया था। सरोज भाभी ने सुबोध की माता का स्थान

ग्रहण कर लिया था। इससे डा० प्रकाश का जीवन बड़ा सरल हो गया था।

डा० प्रकाश अब हिन्दू कालेज के प्रिंसिपल के रूप में दिल्ली के शिक्षित समाज में एक सम्मानित व्यक्ति माने जाते थे। वे संस्कृत और हिन्दी के प्रकांड पंडित थे। उनके लिखे ग्रंथ अपने विषय पर ऑथॉरिटी माने जाते थे। अब वेतन भी उन्हें पंद्रह सौ रुपया मासिक मिलता था। परन्तु इस बढ़ती हुई आय ने उनके सादा जीवन में कोई परिवर्तन नहीं किया था।

डा० प्रकाश का पुत्र सुबोध भी अपने पितामी के ही समान सरल प्रकृति का था। डा० प्रकाश सुबोध के सरल रूप को निहारते थे तो उन्हें अपनी युवा अवस्था की याद आ जाती थी। बिलकुल वैसा ही था सुबोध के बदन का गठन भी जैसा किसी समय उनका अपना रहा था। सब कुछ ठीक बना-बनाया यह वही ही था जो किसी समय डा० प्रकाश का था। परन्तु जब उसके चेहरे पर उनकी दृष्टि जाती थी तो उन्हें मालतीदेवी की स्मृति हो आती थी। लगता था मानो विधाता ने मालतीदेवी का चेहरा उतारकर सुबोध के धड़ पर चढ़ा दिया था।

सरोज भाभी के आ जाने पर डा० प्रकाश ने अपने पुराने नौकर पंडित को मालतीदेवी के यहां भेज दिया था। पंडित को वहां भेजने का उनका अभिप्राय यह नहीं था कि वे उसे अपने यहां से पृथक् कर देना चाहते थे, वरन् यह था कि उन्हें मालतीदेवी के विषय में सूचना मिलती रहे।

पंडित से मालतीदेवी के विषय में हर सूचना प्रति सप्ताह उन्हें मिलती रहती थी। रविवार को पंडित डा० प्रकाश को सब सूचना दे जाया करता था और उसे डा० प्रकाश तथा सरोज भाभी बड़ी उत्सुकतापूर्वक सुना करते थे। उस दिन जब डा० प्रकाश ने पंडित के मुख से लाला किशोरी-लाल को दी गई करारी फटकार का विवरण सुना तो डा० प्रकाश के हृदय में मालतीदेवी के प्रति स्थायी प्रेम में एक नया निखार आ गया। डा० प्रकाश के नेत्रों में प्रकाश उतर आया था। यह सुनकर सरोज भाभी के भी दग्ध हृदय को थोड़ी सांत्वना मिली थी।

इसके पश्चात् जब उन्हें यह पता चला कि मालतीदेवी ने लाला किशोरीलाल की कोठी का पांच वर्ष का किराया और उनसे प्राप्त कार

का मूल्य भी अदा कर दिया तो उनके हृदय पर मालतीदेवी के चरित्र की और भी गहरी छाप लगी थी।

लाला किशोरीलाल से मालतीदेवी का सम्बन्ध-विच्छेद होने की घटना ने डा० प्रकाश के मन से उस गहरी छाया को हटा दिया था जिसे स्मरण करके उनका हृदय कभी-कभी इतना मलिन हो उठता था कि वे सारे-सारे दिन के लिए विक्षिप्त-से हो जाते थे। उनका मस्तिष्क खराब हो उठता था और उन्हें मालतीदेवी के चरित्र के विषय में संदेह हो उठता था।

डा० प्रकाश सोचते रहते थे बहुत देर तक मालतीदेवी के विषय में। वे अपने मन में ही कहते थे, 'प्रकाश! तू कितना निर्बल व्यक्ति निकला जो अपनी पत्नी को भी कुपथ पर जाने से न रोक सका। क्या मालतीदेवी को इस कुमार्ग पर जाने से रोकने का तेरा फर्ज़ नहीं था। तू जो उसके प्रति एकदम इतना उदासीन हो उठा, क्या यह तूने भूल नहीं की! तेरी पत्नी दहकती हुई ज्वाला में कूद पड़ी और तू खड़ा-खड़ा देखता रहा। तू एक इंच भी आगे बढ़कर उसका साथ न दे सका।

'तू अपराधी है प्रकाश! यह सब तेरा ही दोष है। मालती के इस घोर पतन का एकमात्र तू ही प्रधान कारण है। तू अपने-आपको निर्दोष नहीं कह सकता।'

यह सोचते-सोचते वे हताश-से हो उठते थे।

एक दिन इसी प्रकार हताश हुए डा० प्रकाश बैठे थे तो सरोज भाभी ने उनके उदास चेहरे को देखकर पूछा, "इतने उदास-से क्यों बैठे हो लालाजी?"

डा० प्रकाश बोले, "कुछ नहीं भाभी! मैं सोच रहा हूं कि मालती के पतन का मैं ही प्रधान कारण हूं।"

सरोज भाभी हंसकर बोलीं, "लालाजी! तुम व्यर्थ अपने-आपको इस प्रकार दुखी न किया करो। मैं तुम्हें किसी भी प्रकार दोषी नहीं मानती। मालती के लिए क्या तुम समझते हो कि मेरे हृदय में किसी भी प्रकार कम वेदना है? तुम मुझे भी दोषी कहोगे कि मैंने दिल्ली में आने के पश्चात् उसके पास जाकर उसे समझाने का प्रयास क्यों नहीं किया। परन्तु यह सब गलत है। मालती अब वह बच्चा नहीं है जिसे समझाने की आवश्यकता

हो। उसके ऊपर जब तुमसे, अपने बच्चे सुबोध से अलग होने का कोई प्रभाव नहीं पड़ा तो क्या तुम समझते हो कि उसपर समझाने-बुझाने का कोई प्रभाव पड़ता ? नासमझ आदमी को समझाया जाता है। परन्तु मालती नासमझ नहीं है। वह सब कुछ समझती है और उसने जो कुछ किया है समझ-बूझकर ही किया है। समय आएगा जब वह स्वयं अपनी भूल को समझेगी।"

"क्या आपको विश्वास है भाभी कि मालती कभी अपनी भूल को समझ पाएगी ? क्या मालती कभी वापस आएगी भाभी ?" डा० प्रकाश ने सरोज भाभी की ओर निराश दृष्टि से देखते हुए कहा।

सरोज भाभी गम्भीरतापूर्वक बोलीं, "उसे आना ही होगा एक दिन लालाजी ! दुनिया की ये रंगीनियां जो मनुष्य को यौवनकाल में दिखलाई देती हैं और जो उसे कुपथ पर भटकाती हैं, क्या सदा बनी रहती हैं लालाजी ! यह दुनिया रंगीन नहीं है लालाजी, यह दिखलाई रंगीन देती है। क्या तुम समझते हो लालाजी कि व्यक्ति का यौवन चिरस्थायी होता है ? क्या यह ढलता नहीं कभी ? क्या मेरे चेहरे का रूप-रंग आज भी वैसा ही है जैसा आज से पन्द्रह वर्ष पूर्व तुमने देखा था ?"

डा० प्रकाश उतनी ही गम्भीरतापूर्वक बोले, "भाभी, सच पूछती हो तो मुझे आपके रूप में आज भी वही आभा दिखाई देती है जिसके मैंने प्रथम बार दर्शन किए थे। मुझे तो कहीं भी किसी प्रकार का आपके रूप में कोई परिवर्तन दिखलाई नहीं देता।"

डा० प्रकाश की बात सुनकर सरोज भाभी का हृदय गुदगुदा उठा। वे मुस्कराकर बोलीं, "तुम मेरे रूप को अपनी इन दो आंखों से नहीं देख रहे हो लालाजी ! तुम देख रहे हो अपने हृदय-चक्षुओं से। जिन आंखों से तुम देख रहे हो उनसे तो तुम्हें मेरा रूप उस समय भी वैसा ही दिखलाई देगा जब तुम चिता पर रखने के लिए अपनी भाभी के शव को अपने कंधे पर उठाकर ले जाओगे लालाजी ! परन्तु ये आंखें दुनिया-भर के पास नहीं होतीं और होती भी हैं तो वे सरोज भाभी के रूप को देखने के लिए नहीं खुल सकतीं।

"मालती के रूप पर मंडरानेवाले भौंरों के पास आंखें नहीं हैं और हैं

भी तो वे कभी मालती के रूप को देखने के लिए नहीं खुलेंगी। वे आंखें जो आज मालती के रूपपर टिकी हैं, एक दिन आएगा जब, अंधी हो जाएंगी। उनके अंधा होते ही मालती का रूप फीका पड़ने लगेगा। वह अकेली रह जाएगी उस समय और फिर वह भटकेगी उन आंखों को देखने के लिए जो उसके रूप को रूप कह सकें। वे आखें फिर उसे कहां मिलेंगी लालाजी! मालती को आना ही होगा! वे आंखें तो उसे तुम्हारे और सुबोध बेटे के ही पास मिल सकती हैं, अन्यत्र कहीं नहीं। वे हृदय की आंखें तभी खुलती हैं लालाजी जब हृदय मिलते हैं। इन ऊपरी आंखों की दृष्टि बहुत छिछली होती है लालाजी! यह हृदय तक नहीं पहुंच सकती। यह तो केवल शरीर के ऊपरी यौवन से टकराकर वापस लौट जाती है।"

सरोज भाभी की बात सुनकर डा० प्रकाश के मर्माहत हृदय को तनिक सांत्वना मिली।

तभी सुबोध वहां पहुंचा। किशोर भाई की पुत्री कांता भी उसके साथ थी। सुबोध बोला, "पापाजी! यह कांता आई है अपने पास होने का सन्देश आपको देने के लिए। कांता मैट्रिक में फर्स्ट डिवीज़न में पास हुई है। इस वर्ष कांता ने दो परीक्षाएं पास कर लीं। प्रभाकर की परीक्षा इसने प्राइवेट पास की थी और आज इसका मैट्रिक का परीक्षाफल आया है।"

डा० प्रकाश हर्षित होकर बोले, "अरे वाह! कांता, तुमने तो सचमुच कमाल कर दिया बेटी! एक वर्ष में दो-दो परीक्षाएं पास कर लीं!" और फिर सरोज भाभी से बोले, "भाभी, कांता का मुंह मीठा कराओ, हमारी कांता बेटी पास होकर आई है।"

सरोज भाभी सहर्ष बोलीं, "कराऊंगी क्यों नहीं मुंह मीठा लालाजी!" कहकर सरोज भाभी ने सुबोध से मिठाई लाने को कहा। वे मुस्कराकर बोलीं, "घंटेवाले हलवाई के यहां से लाना बेटा! और रसगुल्ले बंगाली मिठाईवाले के यहां से। कांता बेटी को रसगुल्ले खाने का बहुत शौक है, मैं जानती हूं।"

कांता सरोज भाभी की बात सुनकर तनिक लजा-सी गई और सुबोध मिठाई लेने चला गया।

इसी बीच किशोर भाई का नौकर कांता के पास होने की मिठाई लेकर

आ गया।

सरोज भाभी हंसकर बोलीं, "हमें क्या पता था कि मिठाई कांता के पीछे-पीछे ही चली आ रही है।"

डा० प्रकाश बोले, "परन्तु यह मिठाई कांता के खाने की नहीं है भाभी! इसे मैं, तुम और भैया खाएंगे। सुबोध को भी देंगे थोड़ी इसमें से। वैसे भेजा उसे खिला-पिलाकर ही होगा विमला भाभी ने। क्यों कांता! सुबोध तो छककर आया होगा न?"

कांता ने मुस्कराकर गर्दन हिलाकर हां का संकेत किया।

"मैं तो पहले ही जानता था। विमला भाभी के यहां मैं जब भी जाता हूं तो मेरे लिए मिठाई तैयार मिलती है भाभी! पता नहीं इन्हें मेरे वहां पहुंचने की सूचना पहले से ही कहां से मिल जाती है।" डा० प्रकाश सहर्ष बोले।

तभी सुबोध मिठाई लेकर आ गया। सरोज भाभी ने कांता को बड़े प्यार से मिठाई खिलाई और बहुत देर तक उसकी माताजी के विषय में बातें करती रहीं।

बातें चलती-चलती विमला भाभी के संगीत और नृत्य-कौशल का जिक्र छिड़ गया। इसे सुनकर सुबोध बोला, "पापाजी! संगीत और नृत्य-कला में कांता ने भी बहुत दक्षता प्राप्त कर ली है। गत वर्ष जो म्यूज़िक कानफ्रेंस दिल्ली के संगीत-समाज ने आयोजित की थी उसमें कांता ने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया था।

"आगामी सप्ताह में संगीत-समाज का फिर वार्षिक अधिवेशन होने जा रहा है। उसके लिए ताईजी ने कांता को एक बहुत ही कलात्मक नृत्य सिखलाया है। आप उसे देखें तो मुग्ध हो उठें। और संगीत-समारोह के लिए ताईजी ने जो गाना तैयार कराया है वह भी बहुत सुन्दर है पापाजी!"

"तो यह बात है! बेटी कांता, तुमने हमें अपना संगीत कभी नहीं सुनाया। तनिक हम भी तो सुनें तुम संगीत-समारोह में कौन-सा गाना सुनाओगी।" डा० प्रकाश बोले।

सुबोध कांता की ओर देखकर बोला, "सुना दो कांता! मुझे तो बहुत अच्छा लगा तुम्हारा वह गाना। पापाजी को भी बहुत अच्छा लगेगा तुम्हारा

गाना।"

कांता मुग्ध हो उठी सुबोध के मुख से अपने संगीत की प्रशंसा सुनकर। वह बोली नहीं कुछ, तो सुबोध बोला, "मैं वीणा उठा लाता हूं अभी। तुम गाना कांता, और मैं वीणा बजाऊंगा।"

सुबोध अपने कमरे से जाकर तुरन्त वीणा उठा लाया। वीणा कांता को देकर बोला, "कांता, तुम ज़रा इसका स्वर साधो, मैं तबला उठा लाऊं। ताईजी तबला बजाएंगी।"

डा० प्रकाश और सरोज भाभी अपने बच्चों का यह उत्साह देखकर आनन्दमग्न हो उठे।

सुबोध तबला उठा लाया और सरोज भाभी ने उसे बजाने के लिए ठीक-ठाक किया।

उसी समय डा० प्रकाश ने देखा कि किशोर भाई विमला भाभी के साथ ज़ीने पर चढ़े चले आ रहे थे। उन्हें आते देखकर डा० प्रकाश खड़े हो गए और आदर-भाव से उन्हें अपने कमरे में लाकर बोले, "आज हमने अपने यहां कांता बेटी के पास होने के उपलक्ष्य में संगीत-समारोह का आयोजन किया है किशोर भाई! आप लोग भी ठीक समय पर आ गए। मैं सोच ही रहा था कि इस समय भाभी का यहां होना नितांत आवश्यक था। भाभी न आतीं तो हमारा समारोह फीका ही रह जाता।"

डा० प्रकाश की बात सुनकर विमला भाभी मुस्कराकर सरोज भाभी की ओर देखकर बोलीं, "देवरजी अकेले ही अकेले संगीत-समारोह का आनन्द लूटना चाहते थे। परन्तु हम लोग भी पीछे रहनेवाले नहीं जीजी।"

विमला भाभी की बात सुनकर सरोज भाभी हंसकर बोलीं, "विमला बहिन! तुम लालाजी को ठीक समझती हो। परन्तु हम लोग भी इन्हें अकेले ही अकेले आनन्द नहीं लूटने दे सकते। ये बुलाएं या न बुलाएं हम तो सम्मिलित हो ही जाते हैं ऐसे अवसरों पर आकर। इनके बुलाने की प्रतीक्षा करें तो प्रतीक्षा ही करते रह जाएं।"

डाक्टर प्रकाश ने अपनी मेज़ एक ओर को सरका दी और सब लोग नीचे फर्श पर ही बैठ गए।

सुबोध ने वीणा बजानी प्रारम्भ की तो विमलादेवी उसे सुनकर मुग्ध

हो उठीं। वे मुग्ध कंठ से बोलीं, "बेटा सुबोध ! अब बहुत मधुर वीणा बजाने लगे हो तुम।" और फिर कांता की ओर देखकर बोलीं, "बेटी कांता ! सुना दो अपना वही गीत, जिसका तुमने आगामी सप्ताह में होनेवाले संगीत-समारोह में गाने के लिए रियाज़ किया है।"

कांता ने गाना प्रारम्भ किया तो वहां का वातावरण बहुत ही सरस हो उठा।

डाक्टर प्रकाश भावुकतापूर्ण स्वर में बोले, "कांता बेटी ! तुमने तो कमाल कर दिया सचमुच ! तुम्हारे मधुर स्वर ने तो भाभी के स्वर को भी मात कर दिया।"

डाक्टर प्रकाश के मुख से कांता के मधुर स्वर की प्रशंसा सुनकर विमलादेवी आत्मविभोर हो उठीं।

इसके पश्चात् कांता ने अपना नृत्य भी दिखलाया। उसे देखकर तो डाक्टर प्रकाश अपने को भूल ही गए। उन्होंने स्वप्न में भी कभी कल्पना नहीं की थी कि कांता इतनी सुन्दर कला में प्रवीण हो चुकी है।

वे मुग्ध वाणी में विमलादेवी की ओर देखकर बोले, "भाभी ! आपने कांता को संगीत और नृत्यकला में निपुण कर दिया। आज कांता का संगीत सुनकर और नृत्य देखकर मेरा हृदय आनन्द से भर उठा। बेटी कांता को आपने कला की देवी बना दिया।"

अपनी बेटी की प्रशंसा सुनकर किशोर भाई मन ही मन मुग्ध हो रहे थे। उन्होंने अपनी पुत्र को पुत्री के समान ही लाड़-चाव से पाला था। भगवान ने उन्हें संतान-स्वरूप केवल एक कन्या ही प्रदान की थी और उसी-के अन्दर उन्होंने अपने जीवन के सुख तथा शांति की कल्पना की थी।

किशोर भाई के माता-पिता के मन में अपने अंतिम काल तक पोते का मुख देखने की आकांक्षा बनी रही और इस आकांक्षा को अपने मन में लिए-लिए ही वे दोनों इस संसार से विदा होगए। परन्तु किशोर भाई और विमला-देवी के मन में कभी यह भावना उत्पन्न नहीं हुई। उन्होंने तो सर्वदा पुत्र और पुत्री को समान रूप से देखा था। उनके निकट पुत्र और पुत्री में कभी कोई अन्तर नहीं रहा। कांता को वह अपना पुत्र और पुत्री दोनों ही समझते थे।

आज का दिन बहुत ही आमोद-प्रमोद में व्यतीत हुआ। सभी का मन

हर्ष से भर उठा।

डाक्टर प्रकाश प्रसन्नतापूर्वक बोले, "किशोर भाई ! आज का दिन कांता बेटी के परीक्षा में उत्तीर्ण होने के उपलक्ष्य में बहुत आमोद-प्रमोद के साथ व्यतीत हुआ। इन बच्चों की खिलती हुई फुलवारी में थोड़ा समय हम लोगों का भी देखो कितना हर्षपूर्ण हो उठा।"

किशोर भाई मुस्कराकर बोले, "अब तो इन्हींकी दुनिया है प्रकाश ! हम लोगों का जीवन अब इन्हींके लिए तो है। ये फूल खिलते और मुस्कराते हैं तो हमारे जीवन में भी बहार-सी आती प्रतीत होती है। इन्हें हंसता-खेलता देखते हैं तो हमारे मन भी हिलोरें लेने लगते है। इनकी दुनिया में थोड़ा हंस-खेल लेते हैं।"

आज सन्ध्या का भोजन सब लोगों ने यहीं पर किया और सरोज तथा विमला भाभी ने मिलजुलकर भोजन तैयार किया। भोजन करके सब लोग यहीं से घूमने के लिए निकल गए।

१५

जीवन में वसन्त आता है और इठलाता है तो पतझर उसका उपहास करता है। वह मन ही मन मुस्कराकर कहता है, "हंस-खेल ले दस-पांच दिन और इठला ले अपने यौवन पर। परन्तु भूल मत कि एक दिन तेरी यह जवानी मेरे हाथों में आकर चूर-चूर हो जाएगी। तेरा यह इठलाना और मुस्कराना सब रखा रह जाएगा। आज तू हंस रहा है और मैं रो रही हूं और तब तू रोएगा और मैं खिलखिलाऊंगी।"

मालती के जीवन में वसन्त आया तो उसने पतझर को भुला ही दिया। परन्तु वह वसन्त चिरस्थायी न रह सका। जीवन की मौजों और मस्ती में इठलाकर उसने जीवन की रंगीनियों से कहा, "तुम सब नाचती और खिल-खिलाती हुई आओ और मेरे हृदय में भर जाओ। तुम मेरे साथ खेलो और मैं तुम्हारे साथ खेलूंगी, इठलाऊंगी और जीवन के वसन्त की बहारें लूटूंगी। यह जीवन आखिर है किसलिए ? ये हंसने और मुस्कराने के दिन क्या यूंही

बर्बाद करने के लिए आए हैं जीवन में ?"

मालती ने अपने मार्ग में आनेवाली हर उस चीज़ की उपेक्षा की जो उसकी मस्ती में बाधास्वरूप उपस्थित हुई। उसने हर उस चीज़ को चुमकारकर कलेजे से लगाया जिसने उसके आनन्द में वृद्धि की। वह जीवन की बहारों के साथ पंख लगाकर उड़ी और नेत्र बन्द करके उसकी मौजों में स्वयं भी एक मौज बनकर झूम उठी।

मालती को लगा कि उसके जीवन का विकास हो रहा था। वह दुनिया के आनन्दप्राप्ति के साधनों की रानी बन गई थी। धन और वैभव उसके संकेत पर नृत्य करते थे।

परन्तु धीरे-धीरे मालती ने देखा कि उसके जीवन का वह उत्साह, जो रुकना जानता ही नहीं था, अपने-आप ही न जाने क्यों शिथिल पड़ने लगा। वह जो मस्ती के साथ इठलाने में उसे आनन्द देता था अब उसके बदन में दर्द पैदा करने लगा। उसके मन की आसक्ति विरक्ति में बदलने लगी। नित्य की होटलबाज़ी और सिनेमा की सैर के लिए जाना भी उसे अब भला नहीं लगता। और जो सबसे बड़ी कमी उन्हें दिखलाई दी वह थी उन मित्रों की जो हर समय उसे घेरे रहते थे।

जो लोग दिन में अनेकों बार उनके पास आते हुए नहीं अघाते थे उनकी अब शक्ल देखे मालतीदेवी को महीनों निकल जाते थे और जब वे आते भी थे तो अपने कामकाज के अतिरिक्त अन्य कोई बात नहीं करते थे। मालतीदेवी ने अनुभव किया कि अब उनके पास समय ही नहीं था उनके साथ इधर-उधर की बातें करने के लिए।

कभी-कभी मालतीदेवी को उनका यह व्यवहार बहुत अखरता था परन्तु वे कुछ कह नहीं पाती थीं उन लोगों से। कभी वे उनके सम्मुख कहीं सैर-तफरीह का कोई प्रस्ताव भी रखती थीं तो वे कुछ बहाना बनाकर उसे टाल जाते थे।

मालतीदेवी कुछ समझ ही न पाती थीं उनके इस व्यवहार को। उन्होंने अनुभव किया कि उनका जीवन कुछ नीरस-सा हो उठा। कभी-कभी वे एकान्त में बैठकर घंटों तक सोचती रहती थीं कि क्या उन्होंने सचमुच जीवन में कोई भूल कर डाली?

आज मालतीदेवी का मन यह सोचते-सोचते बहुत उदास-सा हो उठा। उन्होंने चारों ओर दृष्टि फैलाई तो उन्हें कमरे की दीवारों के अतिरिक्त और कुछ दिखलाई नहीं दिया। वे उन्हींकी ओर अपनी निराश दृष्टि से देखती रहीं और देखते-देखते उनके नेत्र सजल हो उठे।

तभी पंडित उनकी चाय लेकर कमरे में आ गया। चाय के बर्तन उसने मेज पर रखकर मालतीदेवी की ओर देखा तो उसे उनके नेत्र सजल मिले।

मालती देवी के जीवन की बदलती हुई स्थिति को पंडित खूब पहचानता था। एक समय उनके जीवन का उसने वह रूप भी देखा था जब वह चाय बनाकर लाता था और उनके ईर्द-गिर्द जमा हुए लोग कह देते थे, "मालती-देवी ! यहां क्या चाय पीजिएगा ? चलिए किसी अच्छे-से रेस्ट्रां में चलकर चाय पी जाए।" और मालतीदेवी मुस्कराकर उनके साथ मोटर में बैठकर चल देती थीं। पंडित से चलते समय कह जाती थीं, "पंडित ! वह चाय तुम पी लेना। हम रेस्ट्रां में चाय पीने जा रहे हैं।"

पंडित बेचारा अपना मन मारकर रह जाता था। कितने चाव से वह अपनी बहूरानी के लिए चाय बनाकर लाता था और उसकी चाय को बिना पिए ही बहूरानी किन्हीं महाशय के साथ चली जाती थीं। वह लाचार दृष्टि से उनकी ओर देखता रह जाता था। उसका हृदय पीड़ा से भर उठता था और वह केतली के पानी तथा दूध को यूं ही नाली में ढुलका देता था। वह सोचता रहता था बहुत देर तक कि क्या कभी वह भी दिन आएगा बहूरानी के जीवन में जब इनका पिंड इन आवारागर्दों की चौकड़ी से छूटेगा ? इतने बड़े घर की बहू-बेटियों को क्या इस तरह जो आए उसीके साथ होटल में चाय पीने के लिए निकल पड़ना चाहिए ?

कई बार पंडित को क्रोध भी आता था और उसका मन करता था कि वह उनसे स्पष्ट कह दे कि उसे उनका इस प्रकार जो आए उसीके साथ चल खड़ा होना भला नहीं लगता, परन्तु तभी उसे प्रकाश बाबू के वे शब्द स्मरण हो आते थे जो उन्होंने पंडित को यहां भेजते समय कहे थे। उन्होंने कहा था, "पंडित ! मालती से कभी उसकी इच्छा के विरुद्ध कुछ कहना नहीं। उसकी जो बात तुम्हें बुरी भी लगे उसे कड़ुए घूंट के समान पी

जाना। उसका मस्तिष्क ठीक नहीं है इस समय। उसके ऊपर किसी भी भली बात का प्रभाव उल्टा ही पड़ेगा। तुम समझो कि जब वह मेरा कहा न मान सकी तो और किसका कहा मानेगी। जब उसने सरोज भाभी की ही उपेक्षा की तो वह ध्यान किसका रख सकेगी। समय आएगा जब तुम्हें कुछ कहने का अवसर मिलेगा। तब तुम कहना और खूब खुलकर कहना। तब उसके ऊपर तुम्हारे कहने का प्रभाव भी पड़ेगा और वह अपनी भूल को समझेगी भी। परन्तु अभी देर है उस समय के आने में।"

आज पंडित ने देखा कि वह समय आ गया था जिसकी ओर प्रकाश बाबू ने संकेत किया था।

पंडित ने चाय की मेज़ मालतीदेवी की आरामकुर्सी के सामने रखकर कहा, "बहूजी ! चाय लाया हूं बनाकर।"

पंडित की बात सुनकर मालतीदेवी का तनिक ध्यान टूटा। वे बोलीं, "क्या चाय का समय हो गया पंडित ?"

"तभी तो लाया हूं बहूजी !" पंडित बोला।

मालतीदेवी ने चाय पीनी आरम्भ की तो पंडित बोला, "बहूजी ! अब वे लोग दिखलाई नहीं देते जो पहले आपको यहां बैठकर चाय पीने ही नहीं देते थे। आपने अच्छा ही किया जो उन लोगों के साथ होटलों में जाकर चाय पीना बन्द कर दिया। भले घर की बहू-बेटियों को अपने घर ही खाना-पीना चाहिए।"

मालतीदेवी मुस्कराकर बोलीं, "अब होटल में जाकर चाय पीने को मन नहीं करता पंडित ! तुम्हारे हाथ की बनी चाय बहुत अच्छी लगने लगी है।"

पंडित प्रसन्न होकर बोला, "बहूजी ! चाय तो मैं पहले भी ऐसी ही अच्छी बनाता था परन्तु वे आने-जानेवाले आपको पीने नहीं देते थे। जब वे मेरी बनी-बनाई चाय पर से आपको उठाकर ले जाते थे तो मुझे बहुत क्रोध आता था। आप चलते समय मुझसे उसे पीने के लिए कह जाती थीं परन्तु मुझे इतना दुःख होता था कि मैं उसे नाली में गिरा देता था।"

"नाली में गिरा देते थे !" आश्चर्यचकित होकर मालती देवी ने कहा। "तुम ऐसा क्यों करते थे पंडित ! तुम पी क्यों नहीं लेते थे उसे ?"

पंडित निश्वास भरकर बोला, "बहूजी ! मेरा दिल पत्थर का बना हुआ नहीं है। अपने हाथ की बनी चाय की आज आपके मुंह से प्रशंसा सुनकर आप क्या जानें कि मेरी आत्मा को कितना सुख मिला। आप जब मालीवाड़े में रहती थीं और संध्या का भोजन नित्य किसी होटल में कर आती थीं तो तब भी मैं नित्य बिना नागा संध्या को आपका भोजन बनाकर रखता था। आप नहीं खाएंगी, यह मैं जानता था परन्तु घर की बहूरानी का भोजन न बनाकर मैं अपने सिर पर पाप की गठरी नहीं रख सकता था। उन दिनों मैं नित्य उस रात के बासी भोजन को दूसरे दिन दोपहर को खाता था। बाबूजी ने कभी आज तक मेरे बने भोजन को खाने से ना नहीं की। उन्हें भूख न भी हुई तब भी एक कौर तोड़कर उन्होंने अवश्य खा लिया।" कहते-कहते पंडित का मन कुछ उदास-सा हो उठा। उसके नेत्र छलछला उठे।

मालतीदेवी को आज पंडित के प्रति किए गए अपने अशिष्टतापूर्ण व्यवहार पर हार्दिक खेद हुआ। उनका मन भारी हो उठा। उन्होंने पंडित के अश्रुपूर्ण नेत्र देखकर कहा, "पंडित, तुम कहते-कहते चुप क्यों हो गए ?"

पंडित नेत्रों से अश्रु बरसाता हुआ बोला, "बाबूजी के एक कौर खाने की बात ज़बान पर आते ही मुझे उस दिन की स्मृति हो आई बहूजी, जिस दिन आप अपना मालीवाड़े का घर छोड़कर इस कोठी में आई थीं। वह पहला दिन था बाबूजी के जीवन का जब उन्होंने मेरे बने खाने को खाने के लिए मना किया था। उनका मन बहुत खिन्न था उस समय परन्तु तब भी सुबोध ने उन्हें बिना एक कौर खाए नहीं रहने दिया।"

पंडित के मुख से अपने जीवन की उस पुरानी घटना और उसके डा० प्रकाश के जीवन पर पड़े प्रभाव को सुनकर मालतीदेवी का हृदय मर्माहत हो उठा। उन्होंने अपने सजल नेत्रों को पंडित के चेहरे पर पसारकर पूछा, "पंडित ! उस दिन मैं चली आई तो तुम्हारे बाबूजी की क्या दशा हुई ज़रा बताओ तो।"

पंडित यह सुनकर घायल पक्षी के समान फर्श पर बैठ गया और रोकर बोला, "बहूजी ! उस दिन जो बाबूजी पर बीती उसकी करुण कहानी न

सुनें, यही अच्छा है।

"आपको कार में बिठलाकर वे घर लौटे तो उनके पैर लड़खड़ा रहे थे। वे किसी प्रकार संध्या तक ठीक रहे और सुबोध को दूध पिलाकर पलंग पर सुला दिया। वे लेट गए और मैं नीचे के आंगन में चला आया।

"सुबह उठकर मैंने चाय बना ली, परन्तु बाबूजी न उठे। मैं ऊपर गया तो मैंने जाकर देखा कि उनका बदन तीव्र ज्वर में जल रहा था और वे बौखलाहट में बड़बड़ाकर कह रहे थे, 'मालती तुम जा रही हो। जाओ। मैं रोक नहीं सकता तुम्हें। परन्तु यह जान लो कि तुम अपने जीवन में सब-से बड़ी भूल करने जा रही हो।'

"मैं घबरा उठा उनकी दशा देखकर और दौड़ा हुआ सीधा किशोर भाई के पास चला गया। किशोर भाई और उनकी पत्नी बाबूजी की दशा का ज्ञान करके नंगे ही पैरों मेरे पीछे हो लिए। उनके पीछे-पीछे उनके माता-पिता भी वहीं आ गए। किशोर भाई डाक्टर को लाए। कहीं संध्या तक जा कर बाबूजी की चेतना लौटी।

"किशोर भाई और उनकी पत्नी ने रात-दिन एक कर दिया बाबूजी की सेवा में। चेतना लौटने पर भी उन्हें पलंग से उठने में पूरा एक सप्ताह लगा।"

मालतीदेवी को आज पंडित के मुख से यह वृत्तांत सुनकर बहुत दुःख हुआ। वे भारी स्वर में बोलीं, "पंडित, मैं सचमुच बहुत अभागिन निकली। मैंने स्वयं अपने पैर से अपने भाग्य को ठोकर मार दी।"

बातों ही बातों में मालतीदेवी की चाय ठंडी हो गई। पंडित उधर देखकर बोला, "आप चाय पीना भूल ही गईं बहूजी! अब इसे न पीजिए, यह ठंडी हो गई। मैं और चाय बनाकर लाता हूं।"

पंडित केतली लेकर चला गया और मालती देवी अकेली बैठी रह गई। उनका मन आज पश्चात्ताप से घिरा हुआ था। उनके हृदय में अथाह पीड़ा थी।

थोड़ी देर में पंडित दूसरी चाय बनाकर ले आया।

मालतीदेवी के जीवन का वह उत्साह जिसने उन्हें तूफानी वेग के साथ मालीवाड़े से उड़ा लाकर इस कोठी में पटक दिया था और यहां से फिर

उड़ा-उड़ाकर इधर-उधर की रंगीन दुनिया में घुमा रहा था धीरे-धीरे शांत होता जा रहा था।

इधर एक वर्ष से उनका स्वास्थ्य भी उनका साथ नहीं दे रहा था। उनका कचहरी जाना भी बन्द-सा ही हो गया था। इक्का-दुक्का जो उनका मिलनेवाला कभी उनकी कोठी पर आ भी जाता था अब उसने भी आना-जाना बन्द कर दिया था। उनके रूप पर मंडरानेवाले भौंरे अब लापता हो चुके थे। इतनी बड़ी कोठी, जिसमें रात-दिन चहल-पहल रहती थी, अब भयानक प्रतीत होने लगी थी।

मालतीदेवी ने जो रुपया कमाया था उसे जवानी के नशे में पानी की तरह बहा दिया था। किसी प्रकार भूल से बैंक में जो साठ-सत्तर हज़ार रुपया जमा हो गया था उसमें से पचास हज़ार उन्हें लाला किशोरीलाल को अदाकर देना पड़ा था। शेष जो दस-पन्द्रह हज़ार बचा था वह बीमारी में डाक्टरों के हवाले कर देना पड़ा।

आज वे पैसे की चिंता में थीं और बैंक-बैलेंस समाप्त हो चुका था। कुछ डाक्टरों के बिल अदा करने थे और तीन माह का किराया भी वे लाला किशोरीलाल के पास नहीं भेज पाई थीं। वे इसी चिंता में बैठी थीं कि पंडित उनकी चाय लेकर आ गया।

इस समय मालतीदेवी के पास केवल पंडित ही एक नौकर रह गया था। शेष सब नौकर चले गए थे। मालतीदेवी अब कोई आय न होने के कारण उनका वेतन देने में असमर्थ हो गई थीं। पंडित को भी वे चार मास से वेतन नहीं दे पाई थीं। पंडित डा० प्रकाश का पुराना नौकर था। वह यूं ही मालतीदेवी को छोड़कर नहीं जा सकता था।

जब मालतीदेवी की इस दशा का पंडित ने गत सप्ताह डा० प्रकाश के सम्मुख वर्णन किया तो उन्हें हार्दिक पीड़ा हुई। उन्होंने पंडित को उसके बाल-बच्चों के लिए घर भेजने के लिए चार मास का वेतन दे दिया था और कह दिया था कि इस बात की सूचना मालतीदेवी को नहीं मिलनी चाहिए।

मालतीदेवी पंडित को चाय लिए खड़ा देखकर बोली, "पंडित, चाय लाए हो बनाकर। तुम्हारा चार माह से वेतन भी नहीं दे पाई मैं। आज

मन तनिक ठीक रहा तो लाला रतनलाल से फीस का रुपया लाऊंगी। मैं देख रही हूं कि दुनिया बड़ी स्वार्थी है। जब काम था तो यही रतनलाल का बच्चा दिन में दस बार चक्कर लगाता था। अब केस जिता दिया तो मेरी फीस देते भी इसका दम टूट रहा है।"

मालतीदेवी की बात सुनकर पंडित के हृदय में अथाह पीड़ा हुई। वह दीर्घ श्वांस भरकर बोला, "बहूजी! मेरे वेतन की आप चिंता न करें। मैंने तो आपके इस घर से न जाने कितना वेतन प्राप्त किया है आज तक। मैं आठ वर्ष का था जब बाबूजी के पिताजी मुझे मेरे गांव से लाए थे। बाबूजी को मैंने अपनी गोद में खिलाया है। परतु यह सत्य है बहूजी, कि जिस दुनिया में आप आकर फंस गई हैं, बड़ी ही स्वार्थपूर्ण है। जिस निःस्वार्थ दुनिया में आपको भगवान ने भेजा था उसे आप ठुकराकर चली आई। इस स्वार्थपूर्ण दुनिया की चमक-दमक पर रीझकर आपने निःस्वार्थ दुनिया के सरल और सादगी से पूर्ण सुख तथा शांति के जीवन को खो दिया। आपको भगवान ने जिस निःस्वार्थ दुनिया में भेजा था वह पति और पुत्र के निःस्वार्थ प्रेम की दुनिया थी।" और फिर नेत्रों से आंसू ढुलकाकर पंडित ने कहा, "बहूजी! बाबूजी जैसा देवता आदमी मैंने अन्य कोई अपने जीवन में नहीं देखा। आप मेरा कहा मानें तो फिर उसी दुनिया में वापस लौट चलें। बाबूजी के मन में आपके लिए आज भी वही स्थान है जो पहले था।"

पंडित की बात सुनकर मालतीदेवी के नेत्र सजल हो उठे। वे जानती थीं कि उनके पति उन्हें कितना स्नेह करते हैं और वे यदि आज फिर लौटकर अपने घर वापस चली जाएं तो डाक्टर प्रकाश उनके ऊपर अपने प्राण तक न्यौछावर कर सकते हैं।

परन्तु अब उनका मुंह नहीं था उस घर में वापस लौटने का। वे वहां जाएं तो जाएं कौन-सा मुंह लेकर। इन पन्द्रह वर्ष के बीच उन्होंने एक बार भी कभी जाकर अपने पति के दर्शन नहीं किए, कभी भी जाकर अपने लाल को छाती से नहीं लगाया। उसने अपने जीवन का वह अमूल्य समय, जो उन्हें अपने पति की सेवा और पुत्र के पालन-पोषण में लगाना चाहिए था, इस स्वार्थपूर्ण दुनिया की रंगीनियों में खो दिया। आज इस दशा में वहां लौट-

कर जाना उनके लिए असम्भव था।

मालतीदेवी चाय पीकर लाला रतनलाल की कोठी पर गई तो उन्होंने मुंह चढ़ाकर कहा, "देखिए मालतीदेवी ! आप जो रोज़-रोज़ रुपये के लिए मेरे पास पत्र लिख देती है यह आपकी बात उचित नहीं है। मुझे आपको जो कुछ पेमेंट करना था, मैं कर चुका। उससे अधिक एक कौड़ी भी और मैं देनेवाला नहीं हूं। यह बात आप कान खोलकर सुन लें और भविष्य में आप कभी इस विषय में मुझे कोई पत्र न लिखें।"

लाला रतनलाल की यह बात सुनकर मालतीदेवी उनका मुंह देखती की देखती रह गई। वे एक शब्द भी मुख से उच्चारण न कर सकीं और निराश होकर अपनी कोठी पर लौट आई। इस समय उनके नेत्रों के सम्मुख अंधकार छा गया था।

मालतीदेवी किसी प्रकार कोठी में प्रवेश कर अपने पलंग तक पहुंचीं और उसपर गिरकर अचेत हो गई। आज डाक्टर के मना करने पर भी वे रुपये के अभाव में उठकर लाला रतनलाल की कोठी तक गई थीं और वहां जाकर जो आघात उनके हृदय पर हुआ, उसे वे सहन न कर सकीं।

मालतीदेवी को अचेत देखकर पंडित घबरा उठा। उसे और कुछ न सूझा तो वह सीधा डाक्टर प्रकाश के पास दौड़ पड़ा।

१६

डाक्टर प्रकाश के सुपुत्र सुबोध ने इस वर्ष एम० एम० फाइनल की परीक्षा दी थी। आज परीक्षा का फल पत्रों में प्रकाशित होने की सम्भावना थी।

सुबोध बहुत सवेरे ही उठकर टाइम्स आफ इंडिया के कार्यालय की ओर अपना परीक्षा-फल देखने के लिए चला गया था।

डाक्टर प्रकाश सुबोध के लौटने की प्रतीक्षा में थे तभी सरोज भाभी उनका तथा सुबोध का चाय-नाश्ता लेकर ऊपर आ गई। उन्होंने कहा, "सुबोध दिखलाई नहीं दे रहा लालाजी।"

डाक्टर प्रकाश बोले, "सरोज भाभी ! आपका पुत्र सुबोध विश्व-विद्यालय की अंतिम परीक्षा में उत्तीर्ण होने का समाचार प्राप्त करने के लिए सवेरे ही सवेरे टाइम्स आफ इंडिया के कार्यालय की ओर चला गया है। अब लौटना ही चाहिए उसे।

"सुबोध शत-प्रतिशत विश्वस्त है अपनी सफलता के लिए, परन्तु परीक्षा-फल प्राप्त करने और अपना रौल नम्बर अखबार में देखने की विद्यार्थियों में इतनी उत्कंठा होती है कि वे अखबारों के कार्यालयों पर जाने से अपने को रोक नहीं सकते।

"जब मेरा और किशोर भाई का एम० ए० की परीक्षा का परीक्षा-फल निकला था तो हम दोनों हिन्दुस्तान के कार्यालय पर नई दिल्ली अपना परीक्षा-फल देखने गए थे। इस समय सुबोध को जाते देखकर मुझे उस दिन की याद आ रही है। लगता है जैसे आज का ही दिन था वह।"

डाक्टर प्रकाश सरोज भाभी से यह कह ही रहे थे कि तभी कांता और किशोर भाई उन्हें जीने से आते दिखलाई दिए।

दोनों के मुख-मंडल पर हास्य की रेखाएं खिंची थीं। दोनों ने डाक्टर प्रकाश के कमरे में साथ-साथ प्रवेश किया।

किशोर भाई सहर्ष बोले, "प्रकाश, बधाई है तुम्हें। मुझे कान्ता ने अभी-अभी सुबोध के परीक्षा में उत्तीर्ण होने की सूचना दी तो मैं अपने को रोक न सका तुम्हारे पास आने से। आज का दिन हमारे जीवन में अपार हर्ष का दिन आया है प्रकाश। सुबोध बेटे ने विश्वविद्यालय में टाप किया है। सुबोध मेरे योग्य भाई की योग्य सन्तान निकला। सुबोध ने हम सब का मस्तक ऊंचा कर दिया।"

डाक्टर प्रकाश ने यह समाचार सुनकर नेत्र बन्द कर लिए और उन्होंने अन्दर ही अन्दर अपार सुख तथा शांति का अनुभव किया। परमात्मा ने उन्हें आज वह सुख प्रदान किया था जिसका वर्णन करने के लिए उनके मुख में वाणी नहीं थी। उनकी बीस वर्ष की तपस्या का फल आज उनकी आंखों के सम्मुख था। उन्हें इससे अधिक हर्ष अन्य किसी बात को सुनकर हो ही नहीं सकता था।

डाक्टर प्रकाश सरोज भाभी की ओर देखकर बोले, "भाभी ! जिस

दिन मैं एम० ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ था तो आपने मुझे उलाहना दिया था कि मैंने मुहल्ले में मिठाई तकसीम करने का अवसर आपको न देकर किशोर भाई की माताजी को क्यों दिया। वह अधिकार उन्हींका था भाभी ! आज भगवान ने आपको यह अवसर प्रदान किया है। आप अब जितनी मिठाई मुहल्ले में बांटना चाहें बांटें और सबसे पहले किशोर भाई और बेटी कांता का मुंह मीठा कराएं।" यह कहकर सामने अलमारी की ओर संकेत करके बोले, "देखिए उस अलमारी में मिठाई भरी है। निकाल लाइए उसमें से। मैंने आपके बांटने के लिए मिठाई का प्रबन्ध पहले ही कर छोड़ा है।"

सरोज भाभी। मुस्कराकर किशोर भाई की ओर देखते हुए बोलीं, "देखा आपने किशोर भाई ! लालाजी ने सब प्रबन्ध स्वयं करके रखा हुआ है और मन प्रसन्न कर रहे हैं अपनी भाभी का। बड़े चतुर हैं हमारे लाला जी।" कहते हुए उन्होंने अलमारी खोली तो उसमें मिठाई के डिब्बे भरे थे।

सरोज भाभी चार डिब्बे निकालकर कांता के हाथ में देती हुई बोलीं, "कांता, एक तुम्हारा और एक तुम्हारी माताजी का।" तीसरा डिब्बा किशोर भाई के हाथ में देकर बोलीं, "और यह किशोर भाई का। परन्तु यह सब तो घर ले जाने के लिए है। खाने के लिए मैं अभी लाती हूं।"

सरोज भाभी के पैर आज बड़े चाव से उठ रहे थे। वे एक थाल में मिठाई ले आईं।

सभी ने साथ-साथ बैठकर आनन्दपूर्वक मिठाई खाई और फिर किशोर भाई तथा कांता अपने घर चले गए।

आज डा० प्रकाश के आनन्द का पारावार नहीं था उनका हृदय हर्ष से फूला नहीं समा रहा था। उनके पुत्र सुबोध ने यूनिवर्सिटी में टाप किया था। उसने उनके नाम को उज्ज्वल किया था।

डा० प्रकाश इसी प्रसन्नता में बैठे-बैठे न जाने क्या-क्या सोचते रहे। सरोज भाभी अलमारी से मिठाई के डिब्बे निकालकर मुहल्ले-भर में तकसीम करने के लिए निकल पड़ीं।

इसी समय डा० प्रकाश की दृष्टि अपने जीने की ओर गई तो उन्होंने

देखा कि पंडित हांफता हुआ आ रहा था। उसके चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं और उसके पैर आगे-पीछे पड़ रहे थे। उसका होश ठिकाने नहीं था। वह घबराया हुआ था।

गत सप्ताह रविवार को पंडित नहीं आया था। डा० प्रकाश आज उसकी प्रतीक्षा में थे।

डा० प्रकाश पंडित की यह दशा देखकर बैठे न रह सके। वे लपककर जीने के पास गए और उसे संभालकर अपने कमरे में लाकर पूछा, "क्या बात है पंडित ? तुम इतने घबराए हुए क्यों हो ?"

पंडित प्रकाश की बात सुनकर बेतहाशा रो पड़ा। उसकी ज़बान पर एक शब्द भी न आया। उसे पसीना छूट रहा था और पैर लड़खड़ा रहे थे। उनके नेत्रों के सम्मुख अंकार छा गया था।

डा० प्रकाश ने भयभीत होकर पूछा, "पंडित, शीघ्र बोलो, वरना मैं पागल हो उठूंगा। तुम्हारे रोने का अवश्य कोई गम्भीर कारण है।"

पंडित रोते-रोते ही बोला, "बाबूजी, बहूजी अचेत पड़ी हैं। उनकी दशा बहुत खराब है, आप शीघ्रता करें चलने में।"

"क्या ? मालती अचेत पड़ी है। यह तुमने क्या कहा पंडित ?" डा० प्रकाश सचमुच पागल-से हो गए। उनका बदन थर-थर करके कांप उठा और दिल तीव्र गति से धड़कने लगा। इसी समय सुबोध भी वहां आ पहुंचा। डा० प्रकाश रोकर बोले, "बेटा ! सुबोध मेरे साथ चलो।"

"कहां पापाजी ?" सुबोध ने भयभीत स्वर में पूछा।

डा० प्रकाश कुछ बोल नहीं सके। वे जिस दशा में भी थे उसी दशा में उठकर नंगे ही पैरों ज़ीने की ओर लपक लिए। सुबोध और पंडित उनके पीछे-पीछे चल दिए।

उन्हें यह भी ध्यान न रहा कि वे अपना भरा-पूरा घर यूं ही बिना ताला-कुंजी के छोड़े जा रहे थे। घर का द्वार चौपट ही खुला छोड़कर तीनों मोती बाज़ार से निकलकर चांदनीचौक में आ गए और सुबोध ने फुर्ती से कार का द्वार खोलकर अपने पापाजी को बिठलाया। सुबोध ने पंडित को अपने पास बिठलाकर उससे पूछा, "हमें कहां चलना है पंडितजी ?"

"बारहखंभा रोड, नई दिल्ली," पंडित ने कहा।

बारहखम्भा रोड का नाम सुनकर सुबोध का हृदय धक्-धक् करने लगा। उसने तुरन्त गाड़ी स्टार्ट की और आनन-फानन में कार नई दिल्ली, बारहखम्भा रोड, मालतीदेवी की कोठी पर पहुंच गई।

डा० प्रकाश ने तीव्र गति से कोठी में प्रवेश किया। पंडित ने मालतीदेवी के कमरे का द्वार खोला और देखा तो मालतीदेवी पलंग पर उसी दशा में अचेत पड़ी थीं जिस दशा में वह उन्हें छोड़कर गया था। उनकी दशा में अभी तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ था।

डा० प्रकाश ने मालतीदेवी का चेहरा देखा तो वह धक् से रह गए। वे भयभीत हो उठे। वे धीरे-धीरे मालतीदेवी के पलंग के पास पहुंचे और एक क्षण मालतीदेवी के अस्थि-पिंजर को खड़े-खड़े देखते रहे। मालती-देवी का चेहरा पीला पड़ गया था। प्रतीत होता था कि उनके बदन में रक्त की एक बूंद भी शेष नहीं रह गई थी। हड्डियों का एक ढांचा-मात्र शेष था।

डा० प्रकाश ने धीरे से मालतीदेवी का सिर उठाकर अपनी गोद में रख लिया। उनके नेत्रों से टपक-टपककर आसुओं की बूंदें मालतीदेवी के कपोलों पर गिरने लगीं। उनका हृदय विदीर्ण हुआ जा रहा था। पता नहीं किस प्रकार वे अपने को संभाल रहे थे।

डा० प्रकाश गम्भीर वाणी में बोले, "मालती! मैं आ गया। आज तुम्हें मेरी आवश्यकता है। मैं आ गया मालती! नेत्र खोलकर देखो प्रकाश आ गया। तुमने आते समय कहा था न मुझसे आने के लिए!"

डा० प्रकाश की वाणी मालतीदेवी के कानों में पड़ी तो वे अचेतन अवस्था में ही बोलीं, "मैं क्या सुन रही हूं प्रकाश बाबू! क्या आप सच-मुच आ गए अपनी अपराधिनी मालती को लेने के लिए! क्या आप सचमुच आ गए प्रकाश बाबू? क्या आपने मुझे क्षमा कर दिया?"

डा० प्रकाश विह्वलतापूर्ण स्वर में बोले, "मैं सचमुच आ गया मालती! नेत्र खोलो तुम! देखो तुम्हारा सुबोध और मैं दोनों तुम्हें लेने के लिए आए हैं। आखें खोलो मालती। तुम आखें नहीं खोलोगी तो मैं पागल हो उठूंगा। तुमने मेरा कोई अपराध नहीं किया मालती! तुम

बिलकुल निर्दोष हो।"

मालतीदेवी ने अस्फुट वाणी में कहा, "मेरा सुबोध ! मेरे प्राणनाथ ! मेरे प्रकाशबाबू।"

मालतीदेवी ने धीरे-धीरे अपने नेत्र खोले और डा० प्रकाश के चेहरे पर देखा। वे देखती रहीं कुछ देर और फिर उन्होंने अपने दोनों हाथ जोड़कर नेत्र बन्द कर लिए। वे फिर कुछ अचेत-सी हो गईं। डा० प्रकाश घबराकर रो पड़े। वे विह्वल हो उठे।

मालतीदेवी के नेत्र अन्दर को गड़ गए थे। डा० प्रकाश ने देखा कि उनके नेत्रों में पानी भर आया था। उनकी पलकें अश्रु-जल में डूब गई थीं।

डा० प्रकाश पंडित से बोले, "पंडित, थोड़ा ठंडा जल ले आओ जल्दी से जाकर।"

पंडित दौड़कर एक गिलास में ठंडा पानी भर लाया।

डा० प्रकाश ने अपनी धोती का पल्ला पानी में भिगोकर मालतीदेवी के मुंह पर धीरे से फेरा तो मालतीदेवी के बदन में धीरे-धीरे चेतना लौटनी प्रारम्भ हुई। डा० प्रकाश ने मालतीदेवी के मुंह में चम्मच से थोड़ा ठंडा जल डाला तो उन्होंने एक सुबकी-सी ली।

डा० प्रकाश बोले, "मालती, मैं आया हूं तुम्हें लेने के लिए। चलो घर चलें। यह घर नहीं है तुम्हारा। तुम भूल से यहां आ गई थीं। तुम भटक गई थीं मालती ! मैं तुम्हें रास्ता दिखलाने के लिए आ गया हूं। तुम धीरे से उठो और मेरा सहारा लेकर अपने घर चलो।"

मालतीदेवी ने अपने दोनों हाथ ऊपर उठा दिए। डा० प्रकाश ने मालतीदेवी के हाथ अपने हाथों में लेकर धीरे से मालतीदेवी को संभालकर बिठलाया और फिर सामने खड़े सुबोध से बोले, "सुबोध बेटा ! खड़े कैसे रह गए ? अपनी मम्मी को संभालो और धीरे से गोद में उठाकर गाड़ी में बिठलाओ।"

पिता की आज्ञा पाते ही सुबोध आगे बढ़ गया और उसने अकेले ही अपनी मम्मी के चार हड्डियों के पंजर को अपनी दो विशाल बाहुओं पर उठाकर कंधे से लगा लिया। सुबोध को अपनी माताजी का बदन पुष्प

के समान हलका प्रतीत हुआ। जिस प्रकार स्नेह और आदर के साथ आज सुबोध ने अपनी मम्मी को उठाकर अपने कंधे से लगाया था उतनी ममता के साथ क्या कभी मालतीदेवी ने सुबोध को स्नेह से अपनी गोद में स्थान दिया? माता होते हुए भी सुबोध आज तक मातृ-स्नेह से वंचित ही रहा था। उसे पता ही नहीं था कि मातृ-स्नेह होता क्या है।

आज अपनी मम्मी को गोद में उठाकर सुबोध को कितना सुख मिला। उसका अनुभव-मात्र ही वह कर सकता था। उसका सम्पूर्ण बदन पुलकायमान हो उठा था। अपनी माता को कंधे से लगाकर उसे बहुत बड़ी सांत्वना मिली। उसे आज अपार हर्ष हुआ। अपनी मम्मी को गोद में लेकर उसे लग रहा था कि मानो सम्पूर्ण विश्व की सम्पदा आज विधाता ने उसकी गोद में भर दी थी।

डा० प्रकाश धीरे-धीरे सुबोध के पीछे-पीछे चले आ रहे थे। पंडित ने सावधानी से कोठी के ताले बन्द कर दिए और वह भी उनके साथ हो लिया।

सुबोध ने सावधानी के साथ मालतीदेवी को गाड़ी की पिछली सीट पर बिठाया। डा० प्रकाश ने उन्हें धीरे से अपनी गोद में लिटाकर संभाल लिया।

मालतीदेवी की सूरत देखकर डा० प्रकाश के हृदय पर भारी आघात पहुंचा। उनके मन में अथाह पीड़ा थी। इस समय गुलाब के पुष्प जैसा मालतीदेवी का रंग गेंदे के पुष्प के समान पीला पड़ गया था। उनके मुख से दर्द-भरे स्वर में निकला, "मालती! तुमने यह सब क्या कर लिया? मेरा तो जीवन नष्ट किया ही, अपना सभी कुछ खो दिया।"

"दण्ड मुझे मिलना ही चाहिए था प्रकाश बाबू? अपराधिनी होने पर भी आप मुझे दण्ड नहीं देते। इसलिए विधाता ने मुझे दंडित किया है।" मालतीदेवी गम्भीरतापूर्वक बोलीं।

डा० प्रकाश ने मालतीदेवी के मस्तक पर धीरे से हाथ फेरा। उनके बालों में उंगलियां डालकर हलके-हलके सहलाया। उनकी अंदर को धंसी आंखों के कोयों को धीरे से साफ किया। उनके कपोलों पर हलके से हथेली फेरकर आंसुओं को पोंछा तो मालतीदेवी को लगा कि उनके बदन की

सारी तपन बुझ गई। उनकी बेचैनी कम होती जा रही थी। उनका डूबता हुआ दिल उभारा लेकर ऊपर को आने लगा था। उनकी नाड़ियों में मंद गति से बहनेवाला रक्त तीव्र गति के साथ प्रवाहित होने लगा था। उनका श्वास, जिसकी गति नितान्त मन्द पड़ गई थी, अब तीव्रगति से बहने लगा था। उनके डांवाडोल मन की नौका जो सागर की लहरों पर बेसहारा भटक रही थी, उसे सहारा मिल गया था। उसके डूबते हुए नेत्रों को जो किनारा दिखलाई देना बन्द हो गया था वह अब दिखलाई देने लगा था। उनकी आंखों की रोशनी बढ़ गई थी। उनके दिल की बेचैनी कम होती जा रही थी। उनके मस्तिष्क में परेशानी अब लेश-मात्र भी शेष नहीं रह गई थी। उनका भारी मन हलका हो गया था।

डा० प्रकाश के जीवन में आज से अधिक शांति और प्रसन्नता का दिन सम्भवतः पहले कभी नहीं आया था। मालती के जीवन की गुड्डी जो डा० प्रकाश के हाथ से छूटकर आंधी में उड़ गई थी उसकी डोर डा० प्रकाश ने अब फिर से संभाल ली थी। आज डा० प्रकाश ने देखा कि दुनिया के बवंडरों और झंझावातों से टकराकर जर्जर हुई वह गुड्डी धराशायी हो चुकी थी और वह समय आ गया था कि जब उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाना चाहता था। तभी डा० प्रकाश ने दौड़कर उसकी डोर संभाल ली थी और अपने स्नेह के हलके-हलके पवन पर उसे धीरे-धीरे ऊपर उड़ा दिया था। उसके जर्जर बदन पर अपना स्नेह का हाथ फेरकर उन्होंने मरहम लगाया था और अपनी अंक में लिटाकर उसे विनाश के मुख से निकाल लिया था।

सुबोध ने कार स्टार्ट कर दी और थोड़ी ही देर में कार चांदनीचौक में मोती बाज़ार के सामने जाकर रुक गई। सुबोध ने कार से उतरकर धीरे से अपनी मम्मी को गोद में उठा लिया।

सुबोध मालतीदेवी को गोद में लेकर अपने घर पहुंच गया और उसके साथ डा० प्रकाश तथा पंडित भी। सुबोध सीधा उन्हें ऊपर अपने पिताजी के कमरे में ले गया।

कमरे में पहुंचकर डा० प्रकाश बोले, "सुबोध! अपनी मम्मी को इनके पलंग पर लिटाओ।" और फिर नेत्रों में आंसू भरकर बोले, "मालती-

देवी ! तुम्हारा यह पलंग गत पंद्रह वर्ष से उसी स्थान पर खाली पड़ा है, जहां इसे तुमने बिछवाया था। यह बिस्तर गत पंद्रह वर्ष तक मैं नित्य नियम से साफ करके बिछाता रहा हूं और प्रतीक्षा करता रहा हूं कि तुम लौटकर आओगी। मुझे विश्वास था कि तुम एक दिन अवश्य लौटोगी। और अब देखता हूं कि मेरा सोचना निष्फल नहीं किया तुमने मालती ! आज पन्द्रह वर्ष पश्चात् तुम्हें इस शय्या पर लेटी देखकर मुझे लग रहा है कि मेरी उजड़ती हुई दुनिया विधाता ने फिर से आबाद कर दी। मेरी बर्बाद गृहस्थी का कुम्हलाया हुआ पौधा तुम्हारे स्नेह से सिंचित होकर लहलहा उठा।"

नेत्रों में आंसू भरकर डा० प्रकाश ने अपने पुत्र सुबोध की ओर देखकर कहा, "सुबोध ! यह तुम्हारी मम्मी जो हम दोनों को छोड़कर चली गई थीं, आज लौट आईं। इन्हें पहचाना नहीं तुमने ?"

पिताजी की मर्मभेदी बात सुनकर सुबोध के नेत्र बरस पड़े। इतने दिन का हृदय में जुड़ा हुआ मातृ-स्नेह नेत्र-द्वारों से मुक्त होकर बह चला। वह आगे बढ़कर अपनी मम्मी से लिपट गया और उनके आंचल में मुंह छिपाकर आज जी भरकर रोया।

मालतीदेवी ने सुबोध को अपनी छाती से चिपका लिया। उन्होंने अपने दिल के टुकड़े को छाती से लगाकर धीरे से उसका मुंह चूम लिया।

सुबोध और मालतीदेवी को इस प्रकार स्नेहालिप्त देखकर डा० प्रकाश को स्वर्गिक आनन्द की प्राप्ति हुई।

उन्हें तभी मालतीदेवी की अस्वस्थ अवस्था का ध्यान आया तो वे धीरे से बिना किसीसे एक शब्द भी कहे ज़ीने से नीचे उतर गए। वे घर से बाहर निकले और सीधे किशोर भाई के मकान की ओर चल दिए।

डा० प्रकाश ने किशोर भाई के घर में प्रवेश किया तो देखा सरोज भाभी और विमला भाभी के बीच बातें घुट रही थीं। उनका चन्द्रमुख खिला हुआ था और हृदय में अपार हर्ष था। उनका पुत्र आज विश्वविद्यालय की सर्वोच्च परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ था।

डा० प्रकाश ने आगे बढ़कर विमला भाभी को प्रणाम किया और प्रसन्न मुद्रा में बोले, "भाभी, मालती लौट आई।"

डा० प्रकाश की बात सुनकर बातचीत का विषय एकदम बदल गया।

विमला भाभी ने आश्चर्यचकित दृष्टि से डा० प्रकाश की ओर देखकर पूछा, "क्या सच देवरजी! देवरानीजी लौट आई।"

"हां भाभी! वह लौट आई। आखिर उसे मेरा और सुबोध का ध्यान आ ही गया। मैं कहता था न कि वह एक दिन अवश्य लौटेगी।" डा० प्रकाश बोले।

सरोज भाभी डा० प्रकाश की बात सुनकर स्तब्ध-सी रह गईं। उनका चेहरा तमतमा उठा। उनके मन में मालतीदेवी के लौटने की कोई प्रसन्नता नहीं हुई। उन्होंने अपने हृदय के द्वार मालतीदेवी के प्रति बलात् कसकर बन्द कर लिए थे। उन्होंने माता के समान मालतीदेवी को पाला था। उनकी इतनी उपेक्षा की मालतीदेवी ने! उन्होंने देवता वर खोजा था उसके लिए। उसका भी जीवन नष्ट कर दिया उसने। सरोज भाभी का मस्तक नीचा कर दिया उसने। उसने अपने व्यवहार से केवल सरोज और डा० प्रकाश को ही कष्ट नहीं पहुंचाया बल्कि स्वर्ग में बैठे अपने माता-पिता की आत्माओं का भी अपमान किया, उन्हें लज्जा का पात्र बनाया। उनके पवित्र नामों पर कालिमा पोत दी थी उसने अपने कुकृत्य से।

सरोज भाभी गम्भीर वाणी में बोलीं, "वह क्यों लौट आई लालाजी! जिसने माता के समान अपनी बड़ी बहिन का निरादर किया, जिसने देवता तुल्य अपने पति की उपेक्षा ही नहीं की, उसका जीवन घोर निराशा के अन्धकार में धकेल दिया, उसे क्या अधिकार था वापस लौटने का? उसे कहीं जाकर मर जाना चाहिए था, परन्तु यहां नहीं लौटना चाहिए था। क्या वह अब हमारे घावों को फिर से हरा करने आई है?"

डा० प्रकाश सरल वाणी में बोले, "सरोज भाभी! मालती अपने घर वापस लौटी है। यह उसका अपना घर है, इसमें आने से उसे कौन रोक सकता है? वह हमारे घावों को हरा करने के लिए नहीं, उनपर मरहम लगाने आई है। आपने माता के समान उसका पालन-पोषण किया है तो अपने सूखे हृदय-प्रदेश में फिर से मातृ-स्नेह की धारा प्रवाहित कीजिए। आज मालतीदेवी को आपके स्नेह की बाल्यकाल से भी अधिक आवश्यकता है। वह अस्वस्थ है और प्राण पता नहीं उसके अस्वस्थ बदन के किस कोने में

अटके हुए हैं। मैं हाथ जोड़कर आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप उसके सम्मुख एक भी कड़ुवा शब्द न कहें। उसके अन्दर एक भी कटु शब्द सुनने की शक्ति शेष नहीं है इस समय।"

डा० प्रकाश ने देखा कि सरोज भाभी का तमतमाता हुआ मुखमंडल एकदम व्याकुल-सा हो उठा। उनका दिल घबरा-सा उठा और नेत्र बरस पड़े। वे वहां और अधिक बैठी न रह सकीं। चुपचाप उठकर अपने घर की ओर चल दीं।

किशोर भाई, जो अपने कमरे में खड़े वस्त्र बदल रहे थे, डा० प्रकाश की वाणी सुनकर बाहर निकल आए। मालतीदेवी के लौट आने का समाचार प्राप्त कर उनको असीम शांति मिली। उन्हें लगा कि डा० प्रकाश के जीवन में एकबार फिर से आशा और उमंग का संचार हो उठेगा। उनका मुरझाया हुआ दिल फिर से खिल उठेगा।

डा० प्रकाश बोले, "किशोर भाई! मालती बहुत अस्वस्थ है। डाक्टरों की पर्याप्त चिकित्सा वह करा चुकी है, परन्तु उससे कोई लाभ नहीं हुआ। चलो तनिक मेरे साथ बल्लीमारान तक चलो। मैं सोच रहा हूं कि हकीम ज़फरखां को लाकर मालती को दिखलाया जाए। आपके तो वे बहुत परिचित हैं।"

किशोर भाई डा० प्रकाश के मत से सहमत हो गए। दोनों मित्र हकीम ज़फरखां के पास पहुंचे और उन्हें डा० प्रकाश के घर लिवा कर ले आए।

हकीम ज़फरखां ने मालती देवी को देखा, और मुस्कराकर बोले, "डाक्टरों ने बीमार कर दिया है इन्हें तो किशोर भाई! वरना दुःख ही क्या है इन्हें? अंतड़ियां ठीक हैं, जिगर ठीक है, दिल ठीक है, दिमाग ठीक है और शरीर में कहीं रोग नहीं। कहीं फोड़ा नहीं, कहीं कोई फुंसी नहीं, फिर बीमारी कैसी यह? डाक्टर लोग इनके बदन में खून नहीं बढ़ा सके और खून की कमी में इनकी यह दशा हो गई।"

हकीमजी ने एक नुस्खा लिखा और उसे डा० प्रकाश के हाथ में देकर बोले, "लीजिए प्रिंसिपल साहब! यह काढ़ा इन्हें सात दिन में छः-छः बार पिलाइए। बादाम रोगन की दिन में आठ बार इनके सिर, माथे, हथेलियों और तलुवों पर मालिश कीजिए। बकरी का दूध और अंगूर के अलावा

कुछ खाने को न देना। सात दिनों तक पलंग से उठना नहीं होगा इन्हें। पाखाना और पेशाब का प्रबन्ध भी यहीं पर होना चाहिए। इनके मस्तिष्क को पूरा चैन और आराम मिलना चाहिए। अधिक आने-जानेवालों की यहां भीड़ नहीं लगनी चाहिए।"

किशोर भाई हकीमजी के साथ-साथ उन्हें उनके मतब तक छोड़ने गए। मार्ग में हकीमजी ने कहा, "कोई फिक्र की बात नहीं है किशोर भाई। एक हफ्ते में आप देखेंगे कि ये उठने-बैठने और चलने-फिरने लगेंगी।"

हकीमजी को उनके मतब पर छोड़कर किशोर भाई हिन्दुस्तानी दवाखाने पर नुस्खे बंधवाने चले गए।

डा० प्रकाश ने अपने ड्राइंग रूम में जाकर अपनी एक सप्ताह की छुट्टी का प्रार्थना-पत्र लिखा और फिर मालतीदेवी के कमरे में आकर सुबोध से बोले,, "बेटा सुबोध ! मेरा यह प्रार्थना-पत्र लेकर कालेज चले जाओ और इसे जाकर वापस प्रिंसिपल साहब श्री बैनर्जी को देना।"

सुबोध प्रार्थना-पत्र लेकर चला गया।

डा० प्रकाश सरोज भाभी से बोले, "भाभी ! मालती के आने का समाचार मुहल्ले में फैलेगा तो मुहल्ले की स्त्रियों का जमघट लगने लगेगा। आप उन्हें ऊपर न आने देना। यहां भीड़-भाड़ हुई तो इसके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।"

सरोज भाभी ने तभी घर के आंगन में झांककर देखा तो उन्हें कई स्त्रियां खड़ी दिखाई दीं। सरोज भाभी धीरे-धीरे जीने से नीचे उतर गई।

डा० प्रकाश मालतीदेवी के पलंग पर बैठकर उनके बालों में उंगलियां डालकर उन्हें किरोलते हुए सरल वाणी में बोले, "मालती ! मुझे पूर्ण विश्वास था कि तुम एक दिन अवश्य लौटोगी। मैं जानता था कि ऊपर से आकर्षक लगनेवाली दुनिया की विभीषिका एक दिन तुम्हारे ऊपर प्रकट होगी और तुम्हारे हृदय-चक्षु खुलेंगे।"

मालतीदेवी अपने पति के मुख पर श्रद्धापूर्ण दृष्टि से देखकर बोलीं, "प्राणनाथ ! क्या सचमुच आपने मेरा अपराध क्षमा कर दिया ?"

डा० प्रकाश गम्भीर वाणी में बोले, " तुमने कोई अपराध नहीं किया मालती ! तुम अपने विचारों को मेरे अनुरूप नहीं बना सकीं। यह दुर्बलता

थी तुम्हारी और दुर्बलता को मैं अपराध नहीं मानता। तुमने अपने विचारों का परीक्षण करके देखा और अन्त में सही नतीजे पर पहुंचीं, इसकी मुझे हार्दिक प्रसन्नता है। तुमने सही बात को सही मान लिया इससे अधिक प्रसन्नता की मेरे लिए क्या बात हो सकती है ?

"मैंने तुम्हारे विचारों की विभिन्नता के फलस्वरूप अपनी आत्मा पर जो पीड़ा का प्रकोप हुआ, उसे अपनी सम्पूर्ण शक्ति से सहन किया। तुम्हें स्मरण होगा, एक दिन मैंने तुमसे कहा था कि अब हम दोनों का सहन करने का जीवन आगे चलेगा। हम दोनों की जीवन-धाराएं संगम पर मिलकर फिर दो दिशाओं में बह चली हैं। सम्भव है कभी समुद्र-तट तक पहुंचते-पहुंचते दोनों फिर आपस में आ मिलें। आज परमात्मा ने हमें वह दिन दिखलाया है जब दोनों धाराएं फिर आकर एक हो गईं। मुझे विश्वास है कि अब हम दोनों सागर के तीर तक दो तन और एक प्राण होकर बह सकेंगे।"

तभी किशोर भाई काढ़ों का पुलिन्दा लेकर आ गए और बोले, "लो भैया प्रकाश ! सरोज भाभी से कहो कि मालती के लिए काढ़ा पका लाएं। हकीमजी ने कहा है कि मालती एक सप्ताह में बिलकुल स्वस्थ हो जाएगी।" और फिर मुस्कराकर बोले, "मालती स्वस्थ हो जाए तो फिर इसकी अपने भैया डा० प्रकाश के साथ शादी करूंगा। दोनों को वर और वधू बनाऊंगा। सुबोध बेटे को तुम्हारी गोद में बिठलाऊंगा और अपने जीवन के उस सुख तथा शांति की कल्पना करूंगा जो विधाता ने मुझसे छीन लिया था।"

किशोर भाई की स्नेहपूर्ण बात सुनकर मालतीदेवी और डा० प्रकाश के चेहरे खिल उठे। मालतीदेवी के सूखे गालों पर भी सुर्खी की झिल-मिलाहट-सी दौड़ गई। वे धीरे-धीरे बोलीं, "क्या पहली शादी अधूरी की थी किशोर भाई ने जो दूसरी शादी करने की आवश्यकता होगी ?"

तभी सरोज भाभी और बाबू ब्रिजकिशन भी आ गए। डा० प्रकाश ने काढ़े की पुड़िया उन्हें देकर कहा, "भाभी, पका तो लाओ ज़रा इसे।" और सरोज भाभी पुड़िया को लेकर तुरन्त नीचे चली गईं।

एक सप्ताह तक डा० प्रकाश और सरोज भाभी ने मालतीदेवी का पूरी देख-रेख के साथ इलाज किया। हकीमजी की वाणी सफल हुई। एक सप्ताह

में मालतीदेवी उठने-बैठने और थोड़ा चलने-फिरने लगीं। आराम से अब वे आरामकुर्सी पर घंटा-दो घंटे बैठ सकती थीं।

दूसरे सप्ताह में मालतीदेवी ने कुछ खाना-पीना भी प्रारम्भ कर दिया। तीसरे सप्ताह उनके स्वास्थ्य में और परिवर्तन हुआ।

अब डा० प्रकाश ने नियमित रूप से अपने कालेज जाना प्रारम्भ कर दिया।

आज एकांत में मालतीदेवी, जैसे ही सरोज भाभी ऊपर आई, तो उनकी कौली भरकर उनसे लिपट गई। सरोज भाभी इतने दिन से मालती का सब काम कर रही थीं और डा० प्रकाश जैसा कुछ उनसे कहते थे करती जाती थीं, परन्तु उनका चित्त प्रसन्न नहीं था। उनके मन में मालती के प्रति जो क्षोभ था उसने उनकी हृदय-कलिका को खिलने और मुस्कराने नहीं दिया था।

मालतीदेवी बोलीं, "जीजी ! क्या क्षमा नहीं करोगी अपनी पुत्रीवत् छोटी बहिन को ? अपराध मेरा इतना बड़ा है कि क्षमा मांगने का मेरा मुंह नहीं है, परन्तु आपकी दया तो कम नहीं है मेरे लिए। क्या आपकी दया की निर्मल धारा मेरे अपराध को धोकर साफ नहीं कर सकेगी ?"

मालतीदेवी के शब्द सुनकर सरोज भाभी का दिल उमड़ आया। उनके हृदय का क्षोभ अश्रु बनकर आंखों से बरस पड़ा और उन्होंने मालती को अपने अंक में भर लिया। आज सरोज जीजी ने मालतीदेवी को उतने ही प्यार से चूमा जितने प्यार से वे उसे तब चूमा करती थीं जब वे छोटी-सी बच्ची थी। यह सचमुच दूसरा जन्म हुआ था मालतीदेवी का।

मालतीदेवी के दग्ध हृदय को आज पूर्ण सांत्वना मिली। उन्हें उनके पति ने तो क्षमा कर ही दिया था, आज मातृवत् बड़ी बहिन ने भी उनका अपराध क्षमा कर दिया।

अब मालतीदेवी पूर्ण स्वस्थ थीं।

आज सन्ध्या को डा० प्रकाश कालेज से लौटे तो मालतीदेवी ने स्वयं अपने हाथ से उन्हें चाय बनाकर पिलाई।

उपसंहार

डा० प्रकाश और किशोर भाई की मित्रता का बाल-काल में जो संगम स्थापित हुआ उसकी निर्मल धारा अबाध-गति से आज तक बहती चली आ रही थी। बाल्य-काल में इन दोनों के जीवन में जो सामंजस्य स्थापित हुआ उसमें आज तक कभी कोई अन्तर नहीं आया। एक-दूसरे के सुख-दुख में दोनों साथी रहे। कभी कोई ऐसी बात आई भी कि जिसने किसीके मन को ठेस पहुंचाई तो उसने उसे अपने अन्दर ही समाप्त कर दिया। उसकी कड़वाहट को न कभी चेहरे पर आने दिया, न कभी वाणी में उसे व्यक्त किया और न कभी उनके जीवन में ही उसकी कोई प्रतिक्रिया हुई।

डा० प्रकाश का पुत्र सुबोध एम० ए० पास करके कालेज में प्रोफेसर हो गया था। किशोर भाई की पुत्री कांता बी० ए० में पढ़ रही थी। दोनों मित्रों का गृहस्थ-जीवन बहुत आनन्दपूर्वक चल रहा था।

मालतीदेवी इस समय एक सद्गृहस्थी के समान अपने परिवार का संचालन कर रही थीं।

सरोज भाभी और बाबू ब्रिजकिशनजी डा० प्रकाश के ही मकान में रह रहे थे।

डा० प्रकाश के मस्तिष्क में अब अपने पुत्र सुबोध की शादी करने की समस्या थी। बहुत-से रिश्ते डा० प्रकाश के विचाराधीन थे, परन्तु वे निर्णय नहीं कर पाए थे अभी कि किसके लिए अपनी अनुमति प्रदान करें।

डा० प्रकाश के कालेज में आज एक बहुत बड़ा समारोह था जिसमें भाग लेकर वे लौट रहे थे। वे बस-स्टैंड पर आए तो वहां किशोर भाई उन्हें मिल गए।

दोनों मित्र बस में बैठकर लालकिले तक आए और वहां से उतरकर चांदनीचौक की ओर चल दिए।

बाज़ार में आज बड़ी खचाखच भीड़ थी। व्याह-शादियों की धूम-धाम ने बाज़ार की भीड़ को और भी कंधे से कंधा छिलनेवाला बना दिया था।

आज डा० प्रकाश का मन कुछ चिंताग्रस्त-सा देखकर किशोर भाई ने पूछा, "इतना गम्भीरतापूर्वक आज क्या सोच रहे हो प्रकाश ?"

डा० प्रकाश बोले, "कुछ नहीं किशोर भैया ! मैं सोच रहा हूं कि अब सुबोध की शादी करके निश्चिंत हो जाऊं।"

"अवश्य प्रकाश ! अब सुबोध की शादी तुम्हें कर ही देनी चाहिए।" यह कहते समय किशोर भाई को अपनी पत्नी विमलादेवी की एक दिन की बात का स्मरण हो आया, जब उन्होंने किशोर भाई से कहा था, "कांता के पिताजी ! अपनी कांता का रिश्ता यदि सुबोध के साथ कर दिया जाए तो कैसा रहे ? लड़का योग्य भी है और सुन्दर भी।"

किशोर भाई को अपनी पत्नी का प्रस्ताव बहुत पसंद आया था परंतु तुरंत ही उनके मस्तिष्क में विचार की एक लहर-सी दौड़ गई। वे कोई निश्चित उत्तर नहीं दे सके अपनी पत्नी को।

किशोर भाई की पुत्री कांता। अपनी माता के ही समान गुणवती थी। संगीत और नृत्य-कला में निपुण थी वह। घर-गृहस्थी का काम-काज भी वह बहुत अच्छा जानती थी।

यह सब कुछ तो था, परंतु उसका रंग सांवला था। उसका रंग अपनी माता के रंग पर था। केवल एक इसी बात को लेकर किशोर भाई डा० प्रकाश के सम्मुख अनेकों बार मन में आने पर भी यह प्रस्ताव नहीं रख सकते थे।

डा० प्रकाश और किशोर भाई आगे बढ़कर दरीबा के निकट पहुंचे और दरीबे में उनकी दृष्टि गई तो वहां भी बारातें जा रही थीं। चांदनी चौक में तो बारातों का कोई ठिकाना ही नहीं था। कुछ फतहपुरी की ओर जा रही थीं और कुछ फतहपुरी की ओर से लालकिले की दिशा में आ रही थीं।

तभी डा० प्रकाश और किशोर भाई की दृष्टि एक शानदार बारात पर गई जिसका आगे का सिरा फव्वारे पर था और पीछे का सिरा फतहपुरी पर पहुंचकर खारी बावली की ओर घूम गया था।

बारात में सबसे आगे-आगे छोले बजा-बजाकर नाचनेवाले लड़कों की कई टोलियां थीं जो लड़कियों के वस्त्र पहनकर नाच रहे थे।

उनके बाद उस्ताद कल्लन की शहनाई बजानेवालों की टोली थी। उस्ताद कल्लन की टोली ने आजकल उस्ताद बन्नेखां की टोली को मात दे दी थी। उस्ताद बन्नेखां अब बूढ़े हो गए थे और उतनी अच्छी शहनाई नहीं बजा पाते थे जितनी अच्छी उस्ताद कल्लन बजाने लगे थे।

उस्ताद कल्लन की शहनाई को सुनकर डा० प्रकाश बोले, "उस्ताद कल्लन ने शहनाई बजाने में वास्तव में उस्ताद बन्नेखां को मात कर दिया किशोर भाई! शहनाई खूब बजाते हैं उस्ताद कल्लन।"

"इसमें क्या संदेह है डा० प्रकाश! एक दिन का पांच सौ रुपया लेते हैं उस्ताद कल्लन।" किशोर भाई बोले।

डा० प्रकाश मुस्कराकर बोले, "भाई कला है यह तो अपनी! कला का कोई मूल्य नहीं होता।"

दोनो मित्र थोड़ा और आगे बढ़ गए।

शहनाईवालों के बाद रंग-बिरंगी आतिशबाज़ियां थीं। एक हुजूम इक-ट्ठा हो गया था इन आतिशबाज़ियों को देखने के लिए। भांति-भांति की आतिशबाज़ियां सड़क और आकाश पर छाकर अपनी शोभा दिखला रही थीं।

डा० प्रकाश बोले, "आतिशबाज़ी तो सुन्दर लाए हैं ये बारात-वाले।"

किशोर भाई बोले, "सब कुछ सुन्दर ही सुन्दर है डा० प्रकाश! सुन्दर क्या नहीं है इसमें? आतिशबाज़ी के पीछे देखिए चार बैंड बाजे कितने शानदार हैं। दिल्ली के सभी बढ़िया-बढ़िया साजिन्दे इन्होंने एकत्रित कर दिए हैं इस बारात की शोभा बढ़ाने के लिए। किसी रईस के लड़के की बारात प्रतीत होती है। कारें भी देखो एक से एक शानदार हैं।"

डा० प्रकाश बोले, "इसमें कोई संदेह नहीं किशोर भाई! बारात किसी रईसज़ादे की ही मालूम देती है।"

दोनों मित्र थोड़ा और आगे बढ़कर मोतीबाज़ार के सम्मुख पहुंचे तो वहां दूल्हा घोड़ी पर चढ़ा दिखाई दिया।

दूल्हे पर दृष्टि पड़ते ही डा०प्रकाश की तबीयत खराब हो गई। अच्छा-खासा पीलिया का रोगी प्रतीत होता था वह। उसके दो दांत खोबड़ों से बाहर को निकले पड़ रहे थे। उसकी शक्ल देखकर घृणा होती थी।

उसे देखकर डा० प्रकाश को लगा कि यह इतनी बड़ी शानदार बारात व्यर्थ थी। उसे देखकर डा० प्रकाश को आज से बाइस वर्ष पूर्व की घटना का स्मरण हो आया जब वे और किशोर भाई संगीत-समारोह से लौटे थे और चांदनीचौक में आकर उन्होंने ऐसी ही बारात देखी थी।

उस बारात का दूल्हा भी ऐसा ही कुरूप और अस्वस्थ था।

डा० प्रकाश को हंसी आ गई। यह स्मरण करके वे बोले, "किशोर भाई, याद है आज से इक्कीस वर्ष पूर्व की बात, जब मैं और आप संगीत-समारोह से लौटे थे और हमने ऐसी बारात देखी थी। इस बारात का दूल्हा भी ठीक वैसा ही है जैसा उस बारात का दूल्हा था।"

किशोर भाई मुस्कराकर बोले, "याद है डा० प्रकाश! जीवन में घटने-वाली बातें क्या कभी भूलता है आदमी?

"उसी समय तुमने अपनी भाभी को 'काली-कलूटी' कहा था। अब तो तुम्हें अपनी भाभी काली-कलूटी नहीं लगतीं न!"

किशोर भाई की बात सुनकर वह सम्पूर्ण घटना डा० प्रकाश के मस्तिष्क में चक्कर लगा गई।

दोनों मित्र मोती बाजार से होकर मालीवाड़े में गए तो सामने ही डा० प्रकाश का मकान था। डा० प्रकाश बोले, "घर चलो किशोर भाई!"

किशोर भाई को कुछ काम था, परन्तु डा० प्रकाश के कहने को वह टाल नहीं सकते थे।

दोनों मित्र अन्दर पहुंचे तो सरोज भाभी और मालतीदेवी आंगन में खाट पर बैठी बातें कर रही थीं।

डा० प्रकाश और किशोर भाई को देखकर दोनों बहिनें खड़ी हो गईं। सरोज भाभी मुस्कराकर बोलीं, "आज किशोर भाई को कहां से पकड़ लाए लालाजी! इन्हें तो जाने भगवान ने काम ही कितना दे दिया है कि मिलने-जुलने का भी अवकाश नहीं मिलता। यहां आए भी इन्हें जाने कितने दिन हो गए।"

सरोज भाभी की मीठी बात सुनकर किशोर भाई सतर्कतापूर्वक बोले, "भाभी ! क्या प्यार में झूठ बोलना पाप नहीं होता ? मैं अभी परसों ही यहां आपसे बैठा बातें नहीं कर रहा था ? पूरे दो घंटे बातें की थीं हम दोनों ने।"

डा० प्रकाश हंसकर बोले, "किशोर भाई ! दिन में एक-दो बार आने-जाने को हमारी भाभी आना-जाना नहीं गिनतीं। इनका आने का मतलब है कि आप जमकर दस-पांच घंटे इनसे बातें करें और उस समय तक बातें करते रहें जब तक यह तंग आकर आपको धकेलती हुई घर से बाहर न कर दें।"

और फिर सरोज भाभी की ओर देखकर बोले, "क्यों भाभी ! ठीक कह रहा हूं न मैं।"

डा० प्रकाश की बात सुनकर सब लोग प्रसन्न होकर हंस पड़े।

किशोर भाई अधिक समय नहीं बैठ सके। एक प्याली चाय पीकर चले गए।

किशोर भाई चले गए, परन्तु उनकी कही गई बात डा० प्रकाश के मस्तिष्क में घूमती रही।

आज से बाईस वर्ष पूर्व डा० प्रकाश ने अपनी जिस भाभीजी को 'काली-कलूटी' कहा था, उन्हें आज वे देवी मानते थे। उनका माता के समान आदर करते थे। उनके रूप और गुणों का आज डा० प्रकाश से बड़ा कोई प्रशंसक नहीं था।

विमला देवी ने डा० प्रकाश के जीवन में प्रवेश करके डा० प्रकाश के मस्तिष्क की रूप की परिभाषा ही बदल दी थी। केवल गोरा वर्णमात्र ही उनकी दृष्टि में अब रूप नहीं रह गया था। इसीलिए उन्हें सुबोध के लिए वधू का चुनाव करने में कठिनाई हो रही थी। वे रूप-रंग-मात्र से प्रभावित होकर वधू का चुनाव करने को उद्यत नहीं थे।

डा० प्रकाश ने विमला भाभीजी के लिए जिन शब्दों का प्रयोग किया था वे इस समय कांटे के समान उनके दिल में चुभ रहे थे। उनके हृदय में पीड़ा जाग्रत् हो चुकी थी। वे सोच रहे थे कि उन्होंने आज से बाईस वर्ष पूर्व अपनी भाभी के प्रति जो अपमानजनक शब्द कहे थे उसकी कैसे क्षमा-

याचना की जाए।

डा० प्रकाश को चिन्ताग्रस्त देखकर मालतीदेवी ने पूछा, "आज चिंतित-से क्यों प्रतीत हो रहे हैं आप ? क्या कोई नई समस्या उत्पन्न हो गई ?"

"चिंता यही है मालतीदेवी, कि सुबोध की मैं अब शादी कर देना चाहता हूं।" डा० प्रकाश बोले।

मालतीदेवी हंसकर बोलीं, "तो कर डालिए। रिश्ते तो अनेकों आ रहे हैं सुबोध के। कोई अच्छा-सा घर और वधू देख लीजिए। इसमें चिंता की क्या बात है ?"

"मेरी भी अब यही इच्छा है कि सुबोध का विवाह इस वर्ष हो ही जाना चाहिए।"

"हमारा सुबोध सीधा है, इसीसे कुछ कहता नहीं है। वरना आजकल के बच्चे बड़ा परेशान करते हैं अपने माता-पिता को।"

मालतीदेवी की बात सुनकर डा० प्रकाश मुस्कराकर बोले, "तुम सत्य कह रही हो मालती ! परन्तु मेरा सुबोध उन आजकल के बच्चों जैसा कभी नहीं होगा। इस बच्चे का निर्माण मैंने त्याग और तपस्या के धरातल पर किया है, संयम और आचार की पृष्ठभूमि में किया है।"

डा० प्रकाश की बात सुनकर मालतीदेवी को असीम संतोष हुआ। उनका बेटा वास्तव में ऐसा ही था।

रात्रि के साढ़े दस बजे थे। डा० प्रकाश कुछ सोचते-सोचते मालतीदेवी से बोले, "मालतीदेवी ! ज़रा एक पान खाकर आता हूं अभी।"

डा० प्रकाश नीचे पानवाले की दूकान पर जाकर खड़े थे, परन्तु उनके मस्तिष्क में वही बात थी, जो उन्होंने अपनी भाभी विमलादेवी को आज से पूर्व कही थी। उस बात को वे अपने मस्तिष्क से हटा नहीं पा रहे थे।

पान खाकर वे सोचते-सोचते अपने घर की ओर न चलकर किशोर भाई के घर की ओर चल दिए। उनके घर पहुंचे तो ड्योढ़ी बन्द हो चुकी थी और कोई बत्ती भी नहीं जल रही थी इस समय।

डा० प्रकाश ने द्वार पर किशोर भाई को आवाज दी।

किशोर भाई सो गए थे।

विमलादेवी को अभी नींद नहीं आई थी। डा० प्रकाश की आवाज़ को पहचानकर उन्होंने अपने पति को जगाया। किशोर भाई तनिक हड़-बड़ाकर उठे। विमलादेवी बोलीं, "देवरजी आवाज़ दे रहे हैं! ऐसी रात को आने का जाने क्या कारण हुआ?"

किशोर भाई नीचे द्वार खोलने गए और विमलादेवी ने ऊपर की खिड़की खोलकर सूचना दी, "देवरजी! आपके भाई आ रहे हैं द्वार खोलने के लिए।"

तब तक किशोर भाई ने नीचे जाकर द्वार खोल दिए। डा० प्रकाश ऊपर पहुंच गए। उनके पीछे किशोर भाई भी द्वार बन्द करके आ पहुंचे।

कांता अपने कमरे में जाकर सो गई थी।

किशोर भाई ने पूछा, "कोई विशेष बात तो नहीं डा० प्रकाश!"

डा० प्रकाश बोले, "विशेष बात न होती तो क्या इस समय आता मैं किशोर भाई आपको परेशान करने।"

किशोर भाई ने उतावलेपन से पूछा, "तो कहो न फिर। तुम मौन क्यों हो गए?"

डा० प्रकाश गम्भीर वाणी में विमलादेवी की ओर देखकर बोले, "भाभी! आज से ठीक बाईस वर्ष पूर्व मैंने आपके प्रति एक अपराध किया था।"

डा० प्रकाश का गम्भीर चेहरा देखकर और गम्भीर वाणी सुनकर किशोर भाई हंसकर बोले, "डा० प्रकाश, तुमने तो कमाल कर दिया। कहां बचपन की बातें और कहां अब हम लोगों की पैंतालीस और पचास वर्ष की आयु। मैंने तो आज उपहास में संध्या समय तुम्हें उसकी याद दिला दी थी। मुझे क्या पता था कि तुम उसे सुनकर इतने परेशान हो उठोगे।"

विमलादेवी मुस्कराकर बोलीं, "और लीजिए! अपराध देवरजी ने मेरे प्रति किया और झगड़ने आप लगे बीच में। आप देवर-भाभी की बातों के बीच में न पड़ा करें।"

वे डा० प्रकाश की ओर देखकर गम्भीरतापूर्वक बोलीं, "हां देवर जी! तो आपने मेरे प्रति क्या अपराध किया था आज से बाईस वर्ष पूर्व?"

डा० प्रकाश उतनी ही गम्भीर वाणी में बोले, "जब आप वधू बनकर

इस घर में आई तो मेरे दो ऐसे परिचितों ने आपको देखा जिनसे मैं आपके विषय में प्रश्न कर सकता था। उनमें प्रथम किशोर भाई थे और दूसरी सरोज भाभी। मैंने दोनों से प्रश्न किया और दोनों ने ही आपके रूप की प्रशंसा नहीं की। मुझसे दोनों ने यह कहा कि आप काली हैं। उस समय तक मैंने नहीं देखा था आपको।

"दूसरे दिन हम फुटबाल का मैच खेलकर चांदनीचौक में आए तो हमें एक बारात मिली। बारात बहुत शानदार थी परन्तु दूल्हा उसका निहायत कुरूप और रोगी था। उसे देखकर मेरे मन में उसकी होनेवाली वधू के प्रति संवेदना उत्पन्न हो आई। मैंने उस दूल्हे के प्रति कुछ कड़े शब्द कहे तो भैया बोले, 'बीमार है तो क्या हुआ धनवान तो है। धन रूप और स्वास्थ्य दोनों को खरीद सकता है।' और फिर मेरी ओर कटाक्ष करके बोले कि अवसर आने पर मैं भी धन के सामने रूप और स्वास्थ्य की उपेक्षा कर सकता हूं।

"मुझे भैया की यह बात पसंद नहीं आई। मुझे यह अपने ऊपर लांछन-सा प्रतीत हुआ।

"उस समय मेरे मुंह से ये शब्द निकले, 'किशोर, क्या तुम मुझे भी अपने ही समान समझते हो? जैसे धन के लोभ में तुम 'काली-कलूटी' भाभी उठा लाए वैसा प्रकाश करनेवाला नहीं है।' मैं कह तो गया उस समय, परन्तु तुरन्त ही मैंने अनुभव किया कि मुझसे अपराध हो गया।"

डा० प्रकाश की बात में विमलादेवी ने बहुत रस लिया। वे गम्भीर बनकर बोलीं, "देवरजी, आपने मुझे 'काली-कलूटी' तो कहा, परन्तु कहा उसी सूचना के आधार पर जो आपको सरोज जीजी या आपके भाई साहब ने दी थी।

"आपने अपनी सूचना के आधार पर तो कुछ नहीं कहा, इसलिए अपराध आपसे अधिक इन दोनों का है।"

डा० प्रकाश बोले, "नहीं भाभी, यह बात नहीं है। इस प्रकार प्रमाण देकर आप मेरी रक्षा नहीं कर सकतीं। मुझे आपको 'काली-कलूटी' कहने का कोई अधिकार नहीं था। मुझे इन शब्दों का प्रयोग आपके लिए करना

ही नहीं चाहिए था। मैंने आपके प्रति अपमानजनक शब्द कहकर आपका अपमान किया।

"भैया को अधिकार था, वह जो चाहते कहते आपके विषय में, परन्तु मुझे कोई अधिकार नहीं था।

"मुझे इसका प्रतिकार करना ही होगा।"

"तो देवरजी, इस समय अपने अपराध का प्रतिकार करने आए हैं। तो करिए प्रतिकार आप कैसे करते हैं।"

डा० प्रकाश गिड़गिड़ाकर बोले, "भाभी! मैं आपसे आज एक भीख मांगने आया हूं।"

"भीख मांगने आए हो देवरजी! यह तो और भी विचित्र बात रही। मैं समझी थी कि जब तुमने मेरे प्रति अपराध किया है तो प्रतिकारस्वरूप तुम मुझे कुछ दोगे। परन्तु तुम कह रहे हो कि तुम भीख मांगने आए हो। तब तो मुझे ही कुछ देना होगा तुम्हें। यह प्रतिकार कैसे होगा?"

डा० प्रकाश ने करुण दृष्टि से विमलादेवी के मुख पर देखा तो उनसे रहा नहीं गया। वे बोलीं, "देवरजी! भाभी से भिक्षा नहीं मांगी जाती। तुम्हारे भैया का और मेरा जो कुछ भी है उस सबपर तुम्हारा उतना ही अधिकार है जितना हमारा।"

विमलादेवी की यह बात सुनकर डा० प्रकाश के नेत्र सजल हो उठे। भाभी के प्रति उनकी श्रद्धा न जाने इस समय कितनी गुनी अधिक हो गई।

डा० प्रकाश सरल वाणी में बोले, "भाभी! सुबोध के लिए मैं कांता की भिक्षा मांगने आया हूं इस समय आपके पास।"

डा० प्रकाश की बात सुनकर विमलादेवी और किशोर भाई का मन पुष्प समान खिल उठा। डा० प्रकाश ने मानो उनकी वाणी ही छीन ली उनसे।

विमलादेवी प्रसन्नतापूर्वक बोलीं, "मैं कह रही थी न अभी, कि देवरजी प्रतिकारस्वरूप भी कुछ न कुछ लेकर ही रहेंगे मुझसे। अब देख लो कांता के पिताजी! डा० प्रकाश ने चीज़ भी वह मांगी है जो हमें सबसे अधिक प्रिय है। हमारे कलेजे का टुकड़ा मांग लिया देवरजी ने हमसे।

"मैं तो देवरजी को मना कर नहीं सकती किसी चीज के लिए, क्योंकि वचनबद्ध कर लिया है मुझे तुमने। मेरी ओर से पूर्ण अनुमति है। अब रही आपके भाई साहब की बात सो उसे तुम स्वयं जानो।"

डा० प्रकाश किशोर भाई की ओर देखकर बोले, "क्यों भैया, क्या अनुमति है आपकी भी?"

किशोर भाई मुस्कराकर बोले, "डा० प्रकाश! क्या तुम्हें कभी किसी बात के लिए जीवन में तुम्हारे भाई ने मना किया है, जो वह आज करेगा। कांता क्या मेरी ही है, तुम्हारी नहीं?"

किशोर भाई और विमलादेवी की अनुमति प्राप्तकर डा० प्रकाश के मस्तिष्क की समस्या हल हो गई। इधर महीनों से उनका मस्तिष्क जिस चिंता से घिरा था वह आज समाप्त हो गई। उन्हें लगा कि उनके भैया और भाभी ने आज उनपर बहुत बड़ा उपकार किया है। उन्हें विश्वास था कि सुबोध और कांता की जोड़ी बहुत सुन्दर रहेगी। इन दोनों का जीवन सुख तथा शांतिपूर्वक व्यतीत होगा।

डा० प्रकाश खड़े होकर बोले, "अब आज्ञा दो भाभी। मैं आया तो था नीचे दुकान पर पान खाने के लिए और चला यहां आया। मेरे मस्तिष्क की समस्या मुझे अनायास ही यहां ले आई। आपने मेरी समस्या सुलझा दी, इसके लिए मैं आप दोनों का हृदय से आभारी हूं।"

डा० प्रकाश अपने घर पहुंचे तो मालतीदेवी उनकी प्रतीक्षा में बैठी थीं। उन्होंने मुस्कराकर पूछा, "बड़ा लम्बा पान खाया आपने तो। मैं राह देखते-देखते बावली हो गई।"

डा० प्रकाश मुस्कराकर बोले, "तुम्हारे बेटे सुबोध का रिश्ता करके आया हूं मालती!"

"क्या?" प्रसन्न तथा आश्चर्यचकित होकर मालतीदेवी बोलीं, "इस समय कहां कर आए सुबोध का रिश्ता?"

"अपने मित्र किशोर भाई के यहां। विमला भाभी की सुपुत्री कांता के साथ।"

"सच!" प्रसन्न होकर मालतीदेवी बोलीं।

"सच नहीं तो क्या झूठ ? प्रकाश ने क्या कभी झूठी कोई बात तुमसे कही है मालतीदेवी ?" डा० प्रकाश प्रसन्नतापूर्वक बोले।

मालतीदेवी को यह समाचार पाकर इतनी प्रसन्नता हुई कि वह इस सूचना को देने के लिए अपनी सरोज बहिन के पास जीने से उतरकर दौड़ी चली गई और सोते से जगाकर यह समाचार उन्हें दिया।